ARKAPRAKASHA

ओषधीशशेखरो जयतितराम् ।

लङ्कापतिरावणकृत—

अर्कप्रकाश.

पंडित—नारायणप्रसाद मुकुन्दरामकृत

भाषाटीकासहित ।

जिसमें

समस्त द्रव्योंके अर्क निकालनेकी विधि व अनुपानके साथ सम्पूर्ण रोगोंपर देना, तथा मारण, मोहन, वशीकरणादि षट्प्रयोग; नाटक, चेटक आदि वर्णन और धातुओंका शोधन, मारण प्रकारादि वर्णित है.

उसे

हरिप्रसाद भगीरथजीने

मुंबई.

'गुजराती' मुद्रणयंत्रालये मुद्रापयित्वा

प्राकाश्यं नीतम् ।

शकाब्दाः १८४५, संवत् १९७९

आँवला आ

यह पुस्तक सन १८६७ के २५ वें ऍक्ट के
मुताबिक रजिस्टर करके सब हक्क
प्रसिद्ध कर्तानें अपने आधीन
रक्खा है.

प्रस्तावना.

धर्मार्थकाममोक्षाणामारोग्यं मूलमुत्तमम् ।

धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष, ये चार फल मनुष्यरूपी वृक्षसे उत्पन्न होते हैं. उस मनुष्यरूपी वृक्षका मूल (जड़) आरोग्य है और आरोग्यका मूलकारण आयुर्वेद है. इस कारण सबका मूल सनातन आयुर्वेद है. आयुर्वेद (वैद्यकशास्त्र) के ग्रन्थोंको सामान्य पुरुषोंने नहीं रचा; वरन् जो महात्माजन अपने योगबलसे भूतभविष्यत्वर्तमानकालको क्षणमात्रके ध्यानसे जान लेते थे, उन त्रिकालज्ञ ज्ञानियोंने अतिपरिश्रमसे आयुर्वेदके ग्रन्थोंको निर्माण करके समस्त प्राणियोंपर उपकार किया है. इस आयुर्वेदविद्यामें एक परमाद्भुत चमत्कार है, और यह इस विद्याका प्रभाव है, कि कैसाही हिंसक व कुटिल मनुष्य क्यों न हो परन्तु वैद्यकशास्त्रके पढ़नेसे उपकारका अंकुर उसके हृदयमें उगने लगता है. देखो, लंकापति रावण कैसा क्रूरकर्मा असुर था; परन्तु वैद्यकशास्त्रके पढ़नेसे उसने भी अर्कप्रकाश नाम वैद्यग्रन्थ रचकर प्रकट किया कि जिसमें दश शतक हैं, तहाँ—

१ प्रथम शतकमें—ओषधियोंके देशभेदसे गुणागुण, अर्कोंके योग्य ओषधियां, और द्रव्य, अर्कोंके गुणागुण व अर्क निकालनेमें यंत्र, काष्ठ, अग्नि और अवधिका वर्णन है.

२ दूसरे शतकमें—नीरस, व काष्ठ, पुष्प आदिके अर्क निकालनेकी युक्ति व दुर्गन्धित अर्कोंको सुगन्धित [illegible] यों व राजस, तामस, सात्विक मद्यकी विधि वर्णित है.

३–४ तीसरे व चौथे शतकमें—हड़, बहेड़ा, आँवला आदि संम्पूर्ण आवश्यक द्रव्योंके अर्क निकालनेकी विधि है.

५ पांचवें शतकमे—संम्पूर्ण रोगोंपर पृथक् २ अर्क वर्णन किये हैं.

६ **छठे शतकमें**—गंडमाला, अर्बुद, गाँठ, विद्रधि, दाद, खाज, व्रण, और शीतला आदि रोगोंपर अर्कवर्णन है.

७ **सातवें शतकमें**—केशकल्प, बालरोग, बालचिकित्सा, अनेक रोगोंका नाश करना तथा समस्त स्थावर जंगमविषोंके नाशनार्थ अर्कवर्णन है.

८ **आठवें शतकमें**—वशीकरण, मारण, मोहन, उच्चाटन, स्तंभन, तथा अनेक अद्भुत कौतुक, लेपांजनादि, नाटक, चेटक, आदि हैं.

९ **नवम शतकमें**—समस्त ओषधियोंके गण, तथा नाड़ियोंका पोषण गण, नेत्रपीड़ाहितकारी गण, उपविषगण, जलपुष्पगण, कन्दगण, आदि वर्णन है.

१० **दशवें शतकमें**—धातु उपधातु व विषोंका शोधन, मारण व अनुपानसे सब रसोंका समप्रमाण सेवन वर्णन है.

इस प्रकार एक-हजार श्लोकमें यह अर्कप्रकाश वर्णन किया है. प्रायः वैद्यजन इस अर्कप्रकाशको रावणकृत नहीं कहते. परंतु यदि कोई प्रमाण पूँछा जाय तो अवाच्छी होजायँगे; इस कारण यह उनका कथन निर्मूल है. इस पुस्तककी शुद्ध सरल भाषाटीका करके पं० हरिप्रसाद भगीरथजी—जो बंबईमें रहकर समस्त वैद्यक-ग्रन्थोंके प्रकाश करनेमें कटिबद्ध हुए हैं, उनको इस पुस्तकके छापनेके सब हक दिये हैं. लीजिये, इसको पढ़कर सब द्रव्योंके अर्क निकालनेकी विधि सम्यक् समस्त संसारका उपकार कीजिये; यही हमारे परिश्रम [illegible]

समस्त सज्जनोंका हितैषी—

पंडित मिश्र नारायणप्रसाद मुकुंदरामजी

पुस्तकालयाध्यक्ष—बाँसबरेली और लखीमपुर (अवध).

अर्कप्रकाशकी अनुक्रमणिका.

विषय.	पृष्ठ.
प्रथमे शतके—	
ग्रन्थकारकृत मङ्गलाचरण.	१
रावण-मन्दोदरी संवाद.	,,
पार्वतीके प्रति रावणका प्रश्न.	२
उत्तरकथन श्लोक.	३
रावणविषाददूरीकरण	,,
दिव्य ओषधि कथन	४
ओषधियोंके लक्षण	५
ओषधियोंके पाँच अंग	,,
पाँचों अंगोंका उपयोग	६
द्रव्य (ओषधि) स्वरूप	,,
षड्रसोंका वर्णन...	,,
मधुर रसके गुण	७
अम्ल रसके गुण	,,
लवण रसके गुण	,,
तिक्त रसके गुण	८
कटु रसके गुण....	,,
कषाय रसके गुण	,,
पञ्चभूतोंके गुण....	,,
गुरु और स्निग्ध गुणोंका प्रभाव	९
तीक्ष्ण और रूक्ष गुणोंका प्रभाव	,,
लघुगुणका प्रभाव	,,
द्विविधवीर्य (बल)	१०
जाङ्गल तथा आनूप द्रव्योंके गुण	,,
दक्षिण देश तथा साधारण देशोंमें उत्पन्न हुए द्रव्योंके गुण	,,
मध्यदेशज द्रव्य और उनका विपाक	,,
पक्व हुए रसोंके गुण	११
मधुर पक्व और पक्वाम्ल... रसोंके गुण	,,
पक्वकटुरसके गुण	,,
द्रव्यप्रभाव	१२
पांच प्रकारका द्रव्यकल्प.	,,
प्रयोगविधि	१३
द्रव्यकल्पोंके गुण	,,
अर्कस्तुति	,,
स्त्रीपुरुषोंके लिये वारव्यवस्था	१४
यंत्रकेवास्ते मिट्टी तयार करना	,,
यंत्र करणविधि	,,
भोजनपात्र बनाना	१६
भोजनपात्रके लक्षण	१७
विषअर्ककेलिये पात्र	,,
अर्कस्तुति	१८
अर्कोंके लक्षण...	,,
अर्कसेवन और नि... ...	१९
अर्क पीनेकी विधि ...	२०
अग्निके छः नाम	,,
धूमाग्निके लक्षण	,,
दीपाग्नि तथा मंदाग्निके लक्षण	,,

विषय.	पृष्ठ.
मध्याग्नि तथा खराग्निके लक्षण	२१
मटाग्निका लक्षण.	,,
अग्निमान.	,,
काष्ठमान.	,,
अर्कपात्र ग्रहण	२२
अर्क पीनेकी विधि	,,
ओषधि और उसके अर्कका साम्य	,,
अर्क और तैलके नियम	,,
अर्क किसको देना चाहिये यह कथन	२३
दूतमुखाक्षरप्रश्न	,,
रोगोद्धारक चक्रविधि	,,
रोगोद्धारक चक्रके विषे स्वरवर्ण कोष्ठक	२४
रोगोद्धारक चक्र फल	,,

द्वितीये शतके—

विषय.	पृष्ठ.
पांच प्रकारका द्रव्य ...	२६
द्रव्यके अर्ककी विधि	,,
अर्कके योग्य द्रव्य	२७
कठिन द्रव्योंके अर्ककी वि०	२८
आर्द्र और नीरस द्रव्योंके भेद	,,
उन (आर्द्र और नीरस द्रव्यों) का अर्क निकालने की विधि	२९
पत्रार्क निकालनेकी विधि	,,
नीरस व आर्द्र द्रव्योंका अर्क निकालनेकी विधि.	,,
सदुग्ध द्रव्योंके अर्क	,,
मृदु दुग्ध ओषधियोंका अर्क.	३०
रसवाले आम्र आदि फलोंके अर्क	३१
काष्ठका अर्क	,,
कायफर आदिका अर्क....	३२
द्रवद्रव्योंके अर्कविषे	,,
अर्कपात्रके आच्छादनकी विधि	,,
स्निग्धपदार्थोंके आच्छादनकी विधि	३३
द्रवद्रव्योंके अर्कोंके लिये पात्र	,,
द्रवद्रव्योंके स्तंभक द्रव्य	,,
द्रवद्रव्योंके अर्ककी विधि	३४
अर्कोंका दुर्गंधनाशन	,,
अर्कोंको गंधककी वासना देना	३५
वातआदिदोषशमनके अर्थ अर्कोंको पृथक् २ पदार्थोंकी वासना	,,
चन्दनादिवासना	३६
जटामांस्यादिवासना	,,
त्रिदोषनाशक धूप	,,
दशांग धूप	३७
प्याज और लहसनका अर्क	,,
मांसके अर्ककी प्रशंसा	३८
मांसके भेद	३९
कोमल मांसका अर्क अष्टगन्धसहित	,,
कठिनमांसका अर्क	,,

विषय.	पृष्ठ.
वनमांसका अर्क	४१
शंखद्रावकरण विधि	,,
सिद्धहुए शंखद्रावकी परीक्षा	४२
कोमल और कठिन मांसके जीव	,,
गाढ़मांसके जीव ...	,,
अन्नादिकोंका अर्क	४४
मद्यके दुर्गंधका दूरीकरण .	,,
तुषोदक मद्य	,,
सौवीर मद्य	४५
आरनाल और धान्याम्ल—मद्य	,,
शण्डाकी मद्य	,,
सूक्त नाम मद्य....	,,
अरिष्टमद्य	४६
सुरा और वारुणी नामवाला मद्य	,,
सीधु और शीतरसनाम मद्य	,,
राजस, तामस और सात्त्विक मद्य	,,
सत्त्विकादि मद्य पीनेका समय	४७
वारुणी मद्यके भेद	,,
वारुणी मद्यके गुण	,,
नशावाले द्रव्योंका अर्क....	४८
धतूर आदि मादक बीजोंका अर्क	,,
तृतीये शतके—	
हड़के अर्कके गुण	४९
बहेड़ा और आँवलेके अ॰गुण	,,
सोंठ और अदरखके अर्कके गुण	,,
पीपल और मिर्चके अर्कके गुण	,,
पीपला मूल और चव्यके अर्कके गुण	५०
बड़ी पीपल और चित्रकके अर्कके गुण....	,,
अजवायन और अजमोदके अर्कके गुण....	,,
खुरासानी अजवायनके अर्कके गुण	५१
जीरेके अर्कके गुण	,,
काला जीरा और कलौंजीके अर्कके गुण	,,
धनियां और सोंफके अ॰गुण	,,
सोयेके अर्कके गुण	५२
लालमिर्चके अर्कके गुण	,,
मेथी और वनमेथीके अ॰गु॰	,,
हाल्यूं और हींगके अर्कके गुण	,,
वचके अर्कके गुण	,,
खुरासानीवचके अर्कके गुण	५३
कुलिञ्जनके अर्कके गुण	,,
दूसरे कुलिञ्जनके अर्कके गुण	,,
द्वीपांतरवचके अर्कके गुण	,,
हाऊबेरके अर्कके गुण	,,
बड़े हाऊबेरके अर्कके गुण	५४
वायविड़ंगके अर्कके गुण	,,

विषय.	पृष्ठ.
तुंबर और वंशलोचनके०	,,
समुद्रफेन और विजयसार के अर्कके गुण....	,,
ककरासिंगी और मेदाके०	५५
महामेदा और काकोलीके०	,,
क्षीर काकोली और ऋद्धिके अर्कके गुण....	,,
वृद्धि और मुलहठीके अ०गु०	,,
जलैठी और कबीलेके०	५६
अमिलतासके अर्कके०	,,
चिरायता और खँभारीके०	,,
मैनफल और रास्नेके अ०	५७
नागदमन और माईके अ०गुण	,,
तेजवलके अर्कके गुण	,,
मालकांगनीके अर्कके गुण	,,
कूट और पुहकरमूलके अ०	५८
चोक और ककड़ासींगीके अर्कके गुण	,,
कायफल और भारंगीके अर्कके गुण	,,
पाषाणभेदके अर्कके गुण	,,
कुसुम्भके अर्कके गुण	५९
धाई और मँजीठके अर्कके गुण	,,
लाख और हलदीके०	,,
वनहल्दीके अर्कके गुण....	,,
कपूर हल्दीके अर्कके गुण	६०
दारुहल्दी और रसोंतके अर्कके गुण	,,
बकुची और पँवारके अ० गुण	,,
अतीस और लोधके अ० गुण	,,
चिरपोटा और भिलावेंके अर्कके गुण	६१
गिलोय और बेलके अ० गुण	,,
कुंभेर और नागर बेलके अर्कके गुण	,,
पाढ़ल और अरणीके अर्कके गुण	६२
अरलू और शालीपर्णीके अर्कके गुण	,,
पृश्निपर्णीके अर्कके गुण....	,,
छोटी कटैलीके अर्कके गुण	,,
कटेरीके अर्कके गुण	६३
गोखरूके अर्कके गुण	,,
जीवंती और मुद्गपर्णीके अर्कके गुण	,,
माषपर्णी और अरंडके अर्कके गुण	,,
अरंडभेदके अर्कके गुण....	,,
मंदारके अर्कके गुण	६४
आक और वज्रीके अर्कके गुण	,,

विषय.	पृष्ठ.
सातला और कलिहारीके अर्कके गुण	,,
कनेर और चचेड़ेके अर्कके गुण	,,
धतूरा और वासा इनका अर्क	६५
पित्तपापड़ेके अर्कके गुण	,,
नीमके अर्कके गुण	,,
बकायनके अर्कके गुण	,,
पारिभद्र नाम नीमके अर्कके०	,,
कचनारके अर्कके गुण	६६
कोविदारके अर्कके गुण....	,,
सहिंजनेके अर्कके गुण	,,
मीठे सहिंजनेके अर्कके गुण.	,,
सफेद सहिंजनेके अर्कके गुण	,,
गिरिकन्या (ग्वारका पट्ठा) के अर्कके गुण	६७
सिंदुवार (सिंदुरिया, निर्गुंडी) के अर्कके गुण	,,
सिंभालूके अर्कके गुण	,,
कुड़ा और करंजवेके अ० गुण	,,
घीकरंजवेके अर्कके गुण	,,
करंजीके अर्कके गुण	६८
सफेदघुंघचीके अर्कके गुण	,,
लालघुंघचीके अर्कके गुण	,,
कौंच और मांसरोहिणीके अर्कके गुण	,,

विषय.	पृष्ठ.
चीढ़के अर्कके गुण	,,
कटिदार कटैलीके अर्कके गुण	६९
वेत तथा जलवेतके अर्कके०	,,
समुद्रफलके अर्कके गुण	,,
अंकोलके अर्कके गुण	,,
खरैंटी और बरियारेके अ०गु०	,,
सहदेईके अर्कके गुण	७०
गँगेरनके अर्कके गुण	,,
पतिजियाके अर्कके गुण...	,,
स्वर्णवल्लीके अर्कके गुण	,,
कपास तथा बांसके अर्कके गुण	,,
नाल और मुलहटीके अ०गु०	७१
सफेद निसोथके अर्कके गुण	,,
शरफोंकेके अर्कके गुण	,,
जवासाके अर्कके गुण	,,
गोरखमुंडीके अर्कके गुण	७२
अपामार्गके अर्कके गुण....	,,
लालअपामार्गके अर्कके गुण	,,
तालमखानाके अर्कके गुण	,,
अस्थिसंहारकके अर्कके गुण	,,
पुनर्नवेके अर्कके गुण ...	,,
राजबलाके अर्कके गुण	७३
ग्वारपाठाके अर्कके गुण	,,
सफेद पुनर्नवेके अर्कके गुण	,,
सारिवेके अर्कके गुण	,,
भँगरेके अर्कके गुण	,,

विषय.	पृष्ठ.
शणपुष्पी और चिरायतेके अर्कके गुण	,,
मुरह और मकोयके अर्कके गुण	७४
काकनासा और काकजंघाके अर्कके गुण	,,
नागपुष्पीके अर्कके गुण....	,,
मेढ़ासींगीके अर्कके गुण	७५
हंसपदी और सोमवल्लीके अर्कके गुण	,,
आकाशवेलिके अर्कके गुण	,,
पातालगारुड़ीके अर्कके गुण	,,
तुलसी और वटपत्रीके अर्कके गुण	,,
हिंगुपत्री और वंशपत्रीके अर्कके गुण	७६
मछेछी और सरहटीके अ० गुण	,,
शंखपुष्पी (शंखाहुली) के अर्कके गुण	,,
अर्कपुष्पीके अर्कके गुण....	,,
लाजावंती और तुंबीके अ० गुण	,,
दुद्धी और भुईआँमलेके अर्कके गुण	७७
ब्राह्मी और ब्रह्ममंडूकीके अर्कके गुण	,,
गोमा और सूर्यमुखीके अ० गुण	,,
बांझकाकोड़ी और मार्कंडिकाके अर्कके गुण	७८
दारुहलदी और काले धतूरेके.	,,
गोभी और नागपत्रीके अर्क०	,,
बरबेलके अर्कके गुण	,,
नकछिकनीके अर्कके गुण	७९
कहूँदरेके अर्कके गुण	,,
सुदर्शनके अर्कके गुण	,,

चतुर्थ शतके—

विषय.	पृष्ठ.
षड्रस और उनका बलाबल	८०
षड्रसके गुण	,,
उन्मत्तपंचक और उसके अर्कके गुण	,,
त्रिसुगंध और उसके अर्कके गुण	८१
चतुर्जात और उसके अ० गुण	,,
त्रिफला और उसके अ० गुण	,,
त्रिकुटा और उसके अर्कके गुण	८२
चतुरूषण और उसके अर्कके गुण	,,
पंचकोल और उसके अर्कके गुण	,,
शडूषण और उसके अर्कके गुण	,,
चतुर्बीज और उसके अ० गुण	८३

विषय.	पृष्ठ.
अष्टवर्ग और उसके अ० गुण	,,
बृहत्पंचमूल और उसके अर्कके गुण	,,
साधारण पंचमूल और उसके अर्कके गुण	८४
दशमूल और उसके अ० गुण	,,
जीवनीयगण और उसके अर्कके गुण....	,,
सुगंध गण	,,
सुगंधगणके अर्कके गुण....	८५
वीरण	८६
वीरणार्कके गुण	,,
दुग्धकंद गण	,,
दुग्धकंद गणार्कके गुण	,,
लघुदंत्यादिगण और उसके अर्कके गुण....	८७
वड़के फलोंका अर्क और उसके गुण	,,
पीपलके फलोंका अर्क और उसके गुण	,,
कमलबीजोंका और अर्क उसके गुण	,,
सुखपूर्वक प्रसव करनेवाला अर्क	८८
दुग्धवाले वृक्षोंका अर्क	,,
सेवंती आदि पुष्पोंका अर्क	८९
उपरोक्त अर्कके गुण	,,

विषय.	पृष्ठ.
विषोंके अर्कोंके गुण	,,
चावलोंके भेद.... ...	९०
चावलोंका अर्क अर्थात् मद्य	,,
उक्तमद्य (मदिरा) के गुण	९१
सतुषधान्योंके अर्क (मद्य)	,,
उपरोक्त मद्यके गुण	,,
तेलके धान्योंका अर्क	९२
तैलधान्योंके अर्कके गुण	,,
शहदके अर्कके भेद	९३
ईखकी जाति	,,
ईखसे उत्पन्न होनेवाले मद्य गुड़ आदिके भेद	९४
अम्लवर्ग	,,
अम्लवर्गसे राजवारुणीमदिरा बनाना	९५
राजवारुणी मदिराकी प्रशंसा	,,
राजवारुणी गुण	,,
क्षुद्रवारुणी मदिरा बनाना	९६
क्षुद्रवारुणीके गुण	९७
जांगल मांसका अर्क (मदिरा)	,,
जांगलमांसार्कके गुण	९८
बिलमें रहनेवाले प्राणी	,,
बिलेशयमांसार्क (मदिरा)	,,
गुफामें रहनेवाले प्राणी....	,,
पर्णमृगों(पशुओं) के अ० गुण	९९
विष्किरपक्षियोंके अर्कके गुण	,,

विषय.	पृष्ठ.
प्रतुदपक्षियोंके अर्कोंके गुण	१००
प्रसरपक्षियोंके अर्कोंके गुण	,,
ग्राम्य पशुओंके अर्कोंके गुण	,,
कूलेचर पशुओंके अर्कोंके गुण	,,
प्लवंगमपक्षियोंके अर्कोंके०	१०१
कोशस्थित शंख सीप आदि-कोंके अर्कोंके गुण	,,
पादियोंके अर्कोंके गुण	,,
मत्स्योंके अर्कोंके गुण	१०२
नृमत्स्योंके अर्कोंके गुण....	,,
मनुष्यमांसके अर्कके गुण	,,
अंडोंके अर्कके गुण	१०३
पञ्चमे शतके—	
ज्वरस्तंभन अर्क	१०४
शीतज्वरहारी अर्क	,,
अन्य तिजारी ज्वरनाशक अर्क	,,
विषमज्वरहारी अर्क ...	,,
संन्निपातज्वरहारी अर्क	१०५
अतिसारनाशक अर्क	,,
पक्वातिसारनाशक अर्क	,,
रक्तातिसारनाशक अर्क	,,
प्रवाहीनाशक अर्क	१०६
संग्रहणीरोग नाशक अर्क	,,
बालरोग नाशक औषध	,,
बालग्रहशांतिके लिये धूप	१०७
मंदाग्निनाशक अर्क ...	१०८

विषय.	पृष्ठ.
हैजाको दूर करनेवाला अर्क	,,
अजीर्णनाशक अर्क	,,
विषमाग्निनाशक अर्क	,,
जडान्नको भस्म करने० अर्क	१०९
उदरकृमियोंको नष्ट करनेवा०अ.	,,
लीख और जुवोंको नष्ट करने-वाला अर्क....	,,
खटमल, मच्छड़, डांस, सर्प आदि प्राणिनाशक अर्क	११०
कफ और कीड़ोंका नाशक अर्क	,,
रुधिरकृमिनाशक अर्क	,,
पांडुरोग नाशक अर्क ...	,,
कामलारोगके ऊपर अर्क	१११
मिट्टी भक्षण करनेसे होनेवाले पांडुरोगको हरनेवाला अर्क	,,
कुंभकामला रोग नाशक अर्क	,,
हलीमकरोग नाशक अर्क	११२
रक्तपित्तनाशक अर्क	,,
नाकमेंसे रक्त गिरता है उसके ऊपर अर्क...	,,
कंठमें दाह होनेपर अर्क	११३
अम्लपित्त होनेपर अर्क....	,,
राजयक्ष्मारोग नाशक अर्क	,,
शोष और क्षयरोग होनेपर अर्क	,,
मार्ग जनित शोषके ऊपर अर्क	११४
व्रणशोथनाशक अर्क	,,

विषय.	पृष्ठ.
छातीके घावपर अर्क	,,
अत्यंत बढ़ेहुए फफरोगके ऊपर अर्क....	,,
खांसीसे उत्पन्न हुए क्षयरोग पर अर्क	११५
सूखी खांसीको दूर करनेवाला अर्क	,,
श्वासरोगको दूर करनेवाला अर्क	,,
हिचकीको दूर करनेवाला अर्क	११६
स्वरभेदनाशक अर्क	,,
उत्तम (मधुर व ऊंचा) स्वर करनेवाका अर्क	,,
अरुचिको दूर करनेवाला अर्क	,,
वमनको दूर करनेवाला अर्क	११७
प्यासको दूर करनेवाला अर्क	,,
मुखशोष हरनेवाला अर्क	,,
क्षयके कोपको दूर करनेवाला अर्क	,,
घावकी पींड़ा आँव और वमनसे उत्पन्न हुई प्यासको हरनेवाला अर्क	११८
दुर्बल रोगी पुरुषकी प्यासको हरनेवाला अर्क	,,
अतिमूर्च्छाको दूर करनेवाला अर्क	,,
विषनाशक अर्क	११९
तंद्रा (आलस्य) को हरनेवाला अर्क....	,,
निद्राको नष्ट करनेवाला अर्क	,,
सब नशोंको हरनेवाला अर्क	१२०
कोदोंसे उत्पन्नहुये नशाके ऊपर अर्क	,,
धतूरेके नशाको दूर करनेवाला अर्क	,,
अन्य अनेक प्रकारके नशाओंको हरनेवाला अर्क	,,
दाहादिके ऊपर अर्क	१२१
स्वेद (पसीना) नाशक अर्क	,,
सब उन्मादोंको हरनेवाला अर्क	१२२
भूतोन्मादको हरनेवाला अर्क	,,
मृगीरोगपर अर्क	,,
बहिरापन नाशक अर्क	,,
बाहुशोष और अफरारोगके ऊपर अर्क	१२३
गृध्रसीरोगके ऊपर अर्क	,,
वायु लोहू गांठके ऊपर अर्क	,,
बादीको नष्ट करनेवाला अर्क	,,
वातरक्तहर अर्क	१२४
ऊरुस्तंभहर अर्क	,,
आमवात और रूखापन ना०अ.	,,
पित्तजरोगोंपर अर्क	१२५

विषय.	पृष्ठ.
कफज रोगोंपर अर्क	,,
साध्य और असाध्य शूलरोगोंके ऊपर अर्क	,,
पक्तिशूलहर अर्क	,,
उदावर्तरोगनाशक अर्क....	१२६
अफरारोगको हरनेवाला०	,,
हृदयरोगनाशक अर्क	,,
वायगोलेके ऊपर अर्क	,,
रक्तगुल्म नाशक अर्क....	१२७
प्लीहारोग नाशक अर्क ...	,,
यकृद्रोग नाशक अर्क	,,
मूत्रकृच्छ्र रोगके ऊपर अर्क	१२८
मूत्राघात रोगके ऊपर अर्क	,,
पथरी और शर्करारोगके ऊपर अर्क	,,
प्रमेह रोगके ऊपर अर्क	,,
महामेदरोग नाशक अर्क	१२९
शरीरदुर्गंधिनाशक अर्क	,,
शरीर पुष्टीकरण अर्क	,,
कुष्ठ नाशक अर्क	,,
सिध्मकुष्ठ नाशक अर्क....	,,
खुजली और दादको नष्ट करनेवाला अर्क	१३०
षष्ठे शतके—	
गलगंडरोगको नष्ट करनेवाला	१३१
गंडमालाको हरनेवाला अर्क	,,
ग्रंथिरोग नाशक अर्क	,,
मेदअर्बुद रोगनाशक अर्क	,,
श्लीपदरोग नाशक अर्क	१३२
विद्रधिरोग नाशक अर्क	,,
शोथ (सूजन) रोगको दूर करनेवाला अर्क	१३३
पित्तरक्त और चोटसे उत्पन्न हुई सूजनपर अर्क	,,
कफसे उत्पन्न हुई सूजनपर अर्क	,,
घावसे उत्पन्न हुई सूजनपर अर्क	,,
सूजनपर अन्य उपाय	१३४
व्रणपाचन अर्क ...	,,
शस्त्रविना व्रणभेदनके उपाय	,,
व्रणशुद्धिके लिये अर्क	१३५
घावको भरनेवाला अर्क....	,,
शस्त्रसे हुए घावको भरनेवाला अ.	,,
सब तरहके घावोंको भरनेवाला अर्क	१३६
संधिभग्नके लिये अर्क	१३७
बिगड़ेहुए रक्तपर अर्क (मद्य)	,,
कुष्ठहर अर्क	,,
नारीव्रण (नहसूर) के लिये अर्क	,,
भगंदररोगको हरनेवाला०	१३८
उपदंशको दूरकरनेवाला अर्क	,,
शूकरोगहारी अर्क	,,
विसर्परोगहारी अर्क	१३९
स्नायुरोगनाशक अर्क	,,

विषय.	पृष्ठ.
शीतलारोगको दूर करनेवाला अर्क	,,
दाहयुक्त विस्फोटकरोग शमन अर्क	,,
फिरंगरोगको दूर करनेवाला अर्क	१४०
मसूरिकारोगके ऊपर अर्क	,,
गौररोगनाशक अर्क....	१४१
शिवजी और ब्रह्माजीका संवाद कथन	,,
महाभयंकर कालपुरुषकी उत्पत्ति	१४२
भवितव्यताकी उत्पत्ति	१४३
काल और भवितव्यका विवाह	१४४
रोगोंकी उत्पत्ति	१४५
कालका गर्व होना	१४६
शीतला देवीकी उत्पत्ति तथा कालके गर्वका खंडन	,,
शीतला देवीकी स्तुति	१४८
भवितव्यताकी बड़ाई वर्णन	१५०
गर्भनाशन कथन	,,
गर्भरक्षाकथन	१५१
दाहशांति कथन	,,
शीतलाष्टकमाहात्म्य कथन	,,
शीतलारिष्टनिवारणार्थ अर्क	१५२
शीतलाज्वरनाशक अर्क....	१५३

विषय.	पृष्ठ.
शीतलाव्रण नाशार्थ मंत्र व अर्क	,,
सप्तमे शतके—	
वाल कालेकरनेवाला अर्क	१५४
इंद्रलुप्त रोगको दूर करनेवाला अर्क	,,
दारुणरोगनाशक अर्क	,,
रूखापन दूर करनेवाला०	१५५
मुहासेको हरनेवाला अर्क	,,
मुखव्यंगरोगनाशक अर्क	,,
अंगुलाष्टकरोगनाशक अर्क	,,
लिंग उत्थान और कंडू नाशक अर्क	१५६
गुदाकी खाजके ऊपर अर्क	,,
गुदनिस्सारणरोगके ऊपर अर्क	,,
आधाशीशीको दूर करनेवाला अर्क	,,
आधाशीशीपर दूसरा अर्क	१५७
शिरके दर्द ऊपर अर्क	,,
कनपटीके दर्दपर अर्क ...	,,
पावोंके खरुवे दूर करनेवाला०	,,
नेत्रस्रावपर अर्क	१५८
नेत्ररोग नाशक अर्क	,,
नेत्रोंकी तर्पणविधि ...	१५९
नेत्र और पलकरोगमें औषध धारणकाल	,,

विषय.	पृष्ठ.
नेत्र और पलकरोग नष्ट करनेवाला अर्क	१६०
रातौंधेको दूर करनेवाला अर्क	,,
चोभ, फूली, अर्बुद, माड़ा, तिमिर, मांस वृद्धि, और वार्षिकपुष्प इनके ऊपर अर्क	१६१
कर्णरोग नाशक अर्क	,,
नेत्रपुष्पनाशक अर्क ...	१६२
पलकोंके बाल जमानेवाला और खुजलीके ऊपर अर्क	,,
नेत्रस्रावके ऊपर अर्क	,,
नेत्रस्राव आदिनेत्र रोगोंपर अर्क	१६३
पीनसादिरोगोंपर अर्क	,,
पूतिनासारोगपर अर्क	,,
क्षवथु (छींक) को हटाने वाला अर्क	१६४
कफनाशक अर्क	,,
नासारोग व मस्साको दूर करनेवाला अर्क	,,
अतिनिद्राको मिटानेवाला अर्क	,,
अनेकनेत्ररोगोंपर अर्क	१६५
दंतकृमि नष्ट होनेके लिये अर्क	,,
जिह्वारोगनाशक अर्क	१६६
जीभ और दांतोंके रोगोंपर अर्क	,,
तालुरोगहरअर्क	,,
कंठरोग नष्ट करनेवाला०	१६७
मुखपाकरोगपर अर्क	,,
मुखके व्रण क्लेद और दुर्गंधिको दूर करनेवाला अर्क	,,
लाला (लार) स्रावपर०	१६८
स्थावरविषशांतिके लिये अर्क	,,
सर्पविषनाशक अर्क	१६९
बीछुओंके विषपर अर्क	,,
कुत्तेके विषपर अर्क	,,
लूताविषनाशक अर्क	,,
कनखजूरेके विषपर अर्क	१७०
चींटी आदिके विषपर अर्क	,,
प्रदररोगको दूर करनेवाला अर्क	,,
सोमरोग नाशक अर्क	१७१
बहुतमूत्रस्राव रोगपर अर्क	,,
स्त्रियोंके ऋतुप्राप्तिपर अर्क	,,
गर्भधारण करनेवाला अर्क	,,
गर्भधारण न करानेवाला अर्क	१७२
योनिसंकोचपर अर्क	,,
स्कंदापस्माररोगना० अर्क	१७३
उक्त अर्कके लेनेका प्रमाण	,,
बालकोंके अतीसार आदि रोगोंपर अर्क	१७४
बालकोंके सब रोगोंपर अर्क	,,
बालकोंके मूत्र रुक जानेपर अर्क	१७५
वाजीकरण प्रयोग ...	,,
वाजीकरणपर अन्य उपाय	,,
वीर्यस्तंभन	१७६
वीर्यस्तंभ और लिंग व योनिका	

विषय.	पृष्ठ.
दृढीकरण अर्क	”
अष्टमे शतके—	
उन्मत्तरस और वशीकरण	१७७
जगद्वशीकरण	१७८
विद्वेषणकी विधि	१८०
मंत्रसिद्धिके नियम	”
उच्चाटनके नियम	१८१
बुद्धिस्तंभन	१८२
शत्रुपराजयकरण	”
कौतुक करण	१८३
मारणविधि	१८४
अदृश्यकरण	१८५
मोहनकरण	१८६
मोहनके अन्य उपाय	”
अग्निस्तंभकरण	१८७
जलस्तंभकरण	१८८
जलस्तंभका अन्य उपाय	”
तीसरा उपाय	”
उन्मत्तकरण	१८९
उन्मत्तकरणका अन्यप्रयोग	१९०
दूरदेशगमनसाधन	”
बुद्धिभ्रंशकरण	१९१
स्त्रीपुरुषोंके संभोगमें दोनोंका संधीकरण	१९२
क्षुधावृद्धि	१९३
क्षुधावृद्धिका प्रयोग दूसरा	”
तीसरा प्रयोग	१९४
क्षुधानिवारण	”
क्षुधानिवारण प्रयोग दूसरा	”
क्षुधानिवारण तीसरा प्रयोग	१९५
चोर आदिकोंका भयनिवारण	”
नवमे शतके—	
कर्णगण	१९७
वामनगण	”
रंजनगण	१९८
नेत्र्यगण	”
त्वच्यगण	”
उपविषगण	”
जलपुष्पगण	१९९
कंदगण	”
लवणगण	२००
क्षारगण	”
अम्लगण	”
फलगण	२०१
शालिगण	२०२
शिंबीधान्यगण	२०३
क्षुद्रधान्यगण	”
पत्रशाकगण	२०४
पुष्पशाकगण	”
फलशाकगण	२०५
जांगलजीवगण	”
बिलेशयजीवगण	”
गुहाशयजीवगण	”
पर्णपशुगण	”
विष्किरपक्षि गण	”
प्रतुदपक्षिगण	”
प्रसहपक्षिगण	२०७
ग्रामपशुगण	”

विषय.	पृष्ठ.
जलतीरजीवगण	"
प्लव (उड़नेवाला) जीवगण	"
कोशजजीवगण	२०८
पादीनजीवगण	"
मत्स्यगण	"
विरेचनगण	"
पाचनगण	२०९
उष्णगण	"
दीपनगण	"
पुष्टिकारकगण	२१०
वातहारकगण	"
कृमिनाशकगण	"
तृण (घास) गण	"
प्रस्तरगण	२११
वृक्षगण	"
गुल्मगण	२१२
वल्लीगण	"
कुसुमगण	२१३
दुग्धवृक्षगण	२१४
धूपगण	"
सुगंधिद्रव्यगण	"
दूसरा सुगंधगण	२१५
दुग्धपशुगण और दुग्धादिगण	२१६
धातुवर्ग	"
उपधातुवर्ग	२१७
उपरसवर्ग	"
रत्नवर्ग	२१८
क्षुद्ररत्नवर्ग	"
दशमे शतके—	
सोनेके लक्षण	२१९
धातुओंका मारण शोधन	"
शुद्ध कियेहुए सुवर्णके द्रव्यसंयोगसे पृथक् २ गुण	२२१
चांदीके गुण	२२२
तांबाके गुण	"
वंग (रांगा) के गुण	२२३
जस्तके गुण	२२४
शीसेके गुण	"
लोहसार मारणशोधन	२२५
उपधातु मारण शोधन	२२६
दूसरी विधि	२२७
सिंदूरविधान	२२९
पारदविधान	२३०
दरदसींगरफशोधन	२३१
गंधकशोधन	२३२
अभ्रकमारण	२३३
हरतालशोधन	२३४
शुद्धहुएहरतालकाअनुपान	२३५
मैनशिलका मारण शोधन	२३६
खपरियाशोधन	२३७
उपरसशोधन	"
रत्नशोधन	"
विषशोधन	२३८
उपविपशोधन	"
जैपाल (जमालगोटा)शोधन	२३९

॥ इत्यनुक्रमणिका समाप्ता ॥

श्रीगणेशाय नमः ।

अर्कप्रकाशः ।

भाषानुवादसहितः ।

प्रथमं शतकम् ।

ग्रन्थकारकृतमङ्गलाचरणम् ।

ओषधीपतिनेत्राय पद्मिनीपतिमूर्तये ।
कालकालाय नीलाय पार्वतीपतये नमः ॥ १ ॥
गर्भभारपरिक्लान्ता कन्या मन्दोदरी तथा ।
रावणं परिपप्रच्छ पूजान्ते तुष्टमानसम् ॥ २ ॥

नमस्कृत्य गणाधीशं श्रीनारायणशर्मणा ।
क्रियतेऽर्कप्रकाशस्य भाषाटीका मनोरमा ॥ १ ॥

अर्थः—ओषधीपति (चन्द्रमा) है नेत्र जिसका और चन्द्रमाके समान है मूर्ति जिनकी, तथा कालके कालरूप ऐसे जो नीलकण्ठ पार्वतीपति (श्रीमहादेवजी) हैं उसके अर्थ हमारा नमस्कार है ॥ १ ॥ पंच कन्याओंमेंसे मन्दोदरी नाम कन्या गर्भभारसे दुःखित होकर, पूजनसे निश्चित समयमें प्रसन्नमन जो अपना स्वामी रावण उससे पूँछती भई ॥ २ ॥

मन्दोदर्युवाच ।

स्वामिन्दैत्यसुराराध्य चतुर्वेदविशारद ।
सदाऽणिमाद्यात्मकाम भुवनत्रयपालक ॥ ३ ॥

इदं शुक्रममोघं ते यदारभ्योदरे स्थितम् ।
तदारभ्य न शक्नोमि वक्तुं वक्तुमना मनाक् ॥ ४ ॥
दुःखं रोगश्च कालश्च त्वत्प्रसादान्मनागपि ।
रक्षोगणा न स्पृशन्ति त्वेषा पीडा कथं मम ॥ ५ ॥
उपायं ब्रूहि मे नाथ गर्भिण्या हि यथोचितम् ।
यथा विवर्धते गर्भो जायते च बलं मम ॥ ६ ॥

अर्थः—मन्दोदरी कहती है कि–हे स्वामिन् ! हे दैत्य तथा देवताओंसे आराधनयोग्य ! हे चारों वेदोंमें निपुण ! तथा सर्वदा अणिमादि सिद्धियोंसे पूर्णकामनावाले है तीनों भुवनोंके पालक ! ॥ ३ ॥ यह आपका शुद्ध सार्थकवीर्य (गर्भरूप) जबसे मेरे उदरमें स्थित भया है तबसे बोलनेको चाहती हुई भी मैं अच्छे प्रकार बोलनेको समर्थ नहीं हूं ॥ ४ ॥ आपके प्रसन्न होनेसे दुःख और रोग और काल तथा राक्षससमूह कोई भी मुझे स्पर्श नहीं करसकते परंतु यह इनकीसी पीड़ा मुझको कैसे भई ? ॥ ५ ॥ भो मेरे स्वामिन् ! मुझ गर्भिणीको यथोचित उपाय कहो कि, जिससे गर्भ बढ़े और बल भी मुझको होवे ॥ ६ ॥

रावण उवाच ।

एकदा हि मया पृष्टा पार्वती प्रीतमानसा ।
उमैते हि जगन्मातस्तव देहोद्भवाः सुताः ॥ ७ ॥
कथं नहि गणेशाद्याः सदृशास्तव बालकाः ।
तिष्ठन्ति नानुरूपास्ते कारणं ब्रूहि मे शिवे ॥ ८ ॥

अर्थः—यह सुन, रावणने कहा कि–हे प्यारी! ऐसेही एकसमय मुझकरके प्रसन्नमन पार्वतीसे यही बात पूछी गई कि हे जगन्माता उमा (पार्वती) ! तुम्हारी देहसे उत्पन्न भये जो पुत्र गणेशादि

बालक हैं सो तुम्हारे सदृश बल और तुम्हारे समान रूपवाले क्यों नहीं देखनेमें आते ? अर्थात् तुम अपने बालकोंसे भी अधिक बल–रूप–तेजमें अधिक दीखती हो, सो यह क्या कारण है ? हे शिवे ! कृपा कर यह मुझसे कहो ॥ ७ ॥ ८ ॥

श्रीदेव्युवाच ।

कामिनोऽनङ्गनाशाय जायन्ते बालकाः सुत ।
भार्याऽपि वृद्धा भवति तरुण्यपि सुते सति ॥ ९ ॥
एवं सदाशिवं रंतुं सदैवाहं कुमारिका ।
गणेशस्कन्दनन्द्याद्याः कल्पिता मानसाः सुताः १०

अर्थः—श्रीदेवी (पार्वती) बोली, कि–हे पुत्र रावण ! कामियोंका काम नाश करनेके अर्थ संतान उत्पन्न होती है और तरुणी (युवावस्थावाली) स्त्री भी पुत्र उत्पन्न होनेसे वृद्धा होजाती है ॥ ९ ॥ और मैं रीतिमार्गसे रहती हूं तो श्रीसदाशिवजीकी सेवाके निमित्त सर्वदा कुमारी अवस्थासे रहती हूं और गणेश स्कंद नन्दी आदि पुत्र मैंने अपने मतसे कल्पित किये हैं ॥ १० ॥

रावण उवाच ।

नमस्तुभ्यं मया किं हि संसाराकृष्टचेतसा ।
विवाहं न करिष्यामि प्रत्युत स्यां कुमारकः ॥ ११ ॥
इति मद्वचनं श्रुत्वा पार्वती वाक्यमब्रवीत् ।
निर्विण्णो भव मा पुत्र कुरु राज्यं चिरं स्थिरम् ॥ १२ ॥
मया सह कृतेर्ष्येयं विष्णुपत्न्यतिचञ्चला ।
त्वया गृहे समाने या स्थाप्या वै बन्धनेऽरिवत् ॥ १३ ॥

तयोन्मत्ताः सुराः सर्वे निर्जेतव्या महाबलाः ।
मम प्रकृतिदेहस्थरोमेभ्यः शतशोऽभवम् ॥ १४ ॥
ओषध्यस्तद्बलादेवं त्वं विश्वं जय बालक ।
इत्युक्त्वा मामकथयत्पार्वती महिमानकम् ॥१५॥

अर्थः—हे माता पार्वती ! तुमको नमस्कार है. मुझ संसारी जीवके निकृष्टचित्तसे कुछ हो नहीं सकता; इससे मैं विवाह नहीं करूंगा किन्तु कुमार अवस्थामें रहूंगा ॥ ११ ॥ रावण मंदोदरीसे कहता है कि–यह मेरा वचन सुनकर पार्वतीजी बोली–हे पुत्र ! तु दुःखी मत हो; बहुतकाल स्थिरतापूर्वक राज्य करो ॥ १२ ॥ और यह मेरे साथ ईर्षा (द्वेष) करनेवाली अतिचंचला विष्णुपत्नी (जानकी) है उसे तू अपने घरमें लाकर शत्रुके समान बंधनमें रख ॥१३॥ तिसही लक्ष्मीरूप (जानकी) से उन्मत्त (मदवाले) महाबलवान् देवता हैं उन सबको तू जीतले अर्थात् देवताओंसे अजयको प्राप्त हो और मेरे देहमें स्थित रोमस्वभावसे उत्पन्न हुई जो सैकड़ों औषधियां हैं उनके बलसे हे पुत्र ! तू इस संसारको जीत. हे प्रिये ! इस प्रकार कहकर मुझसे पार्वतीजीने सब महिमा कहा ॥ १४ ॥ १५ ॥

दिव्य ओषधिकथन ।

दिव्यौषधीनां कथितः प्रकल्पः प्रीतया तया ।
तमहं संप्रवक्ष्यामि शृणुष्वावहिता प्रिये ॥ १६ ॥

अर्थः—और उन्हींने ओषधियोंका कल्प प्रसन्नमनसे वर्णन किया, सो मैं तुम्हारेको कहता हूं. हे प्रिये ! सावधान होकर सुने ॥ १६ ॥

रावण उवाच।

ओषध्यः पञ्चधा ख्याता लता गुल्माश्च शाखिनः।
पादपाःप्रसराश्चेति तेषां वक्ष्यामि लक्षणम् ॥ १७ ॥

अर्थः—रावणने कहा कि, ओषधि पांच प्रकारकी होती हैं. १ बेल, २ गुच्छा, ३ शाखा (डालीवाली), ४ बड़े वृक्ष, और ५ प्रसर (कांटेवाली). अब इन औषधियोंका लक्षण वर्णन करता हूं ॥ १७ ॥

ओषधियोंके लक्षण।

गुडूच्याद्या लताः प्रोक्ता गुल्माः पर्प्पटकादयः।
आम्राद्याः शाखिनो ज्ञेया वटाश्वत्थादिपादपाः१८।
कण्टकार्यादिकाः सर्वाः प्रसरा इति कीर्तिताः।
तासां पञ्चैव चाङ्गानि प्रबलानि यथाक्रमम् ॥ १९ ॥

अर्थः—गुडूची (गिलोय) आदि ओषधी लता और पर्पट (पित्तपापड़ा) आदि गुल्मसंज्ञक कहलाती हैं, और आम्रादि-वृक्ष शाखिसंज्ञक हैं. बड़, पीपल आदि पादप हैं ॥ १८ ॥ कंटकारी (कटैया) आदि सब प्रसरसंज्ञा कहलाती हैं, इन ओंषधियोंमें पांच अंग यथाक्रम बली कहलाते हैं ॥ १९ ॥

ओषधियोंके पंचांग।

पत्रं पुष्पं वल्कलं च फलं मूलं क्रमेण च।
अनुक्ते बलमेतेषामुष्णमङ्गे यथोचितम् ॥ २० ॥

अर्थः—पत्र, पुष्प, वल्कल, फल और मूल, ये ओषधियोंके पांच अंग हैं. पत्तासे फूल, फूलसे बकल बकलसे फल, और फलसे मूल (जड़) इनमें क्रम करके एकसे एकमें

अधिक बल है. यह बल विन कहेमें यथोचित अंगोंमें उष्ण शीतल जान रोगके अनुसार जानना ॥ २० ॥

पंचांगोंका उपयोग ।

तालीसादेस्तु पत्राणि सुमनो धातकीमुखात् ।
न्यग्रोधादेस्त्वचो ग्राह्याः फलं स्यात्रिफलादितः ।२१।
पञ्चाङ्गुलादेर्मूलानि ह्यनुक्ते परिकल्पयेत् ।
खदिरासनकादीनां सारोऽपि परिगृह्यते ॥ २२ ॥

अर्थः—तालीसादके पत्ते लेने चाहिये, और धातकी (धाई) आदिके फूल तथा वड़आदिकी त्वचा (बकल) ग्रहण करना योग्य है और त्रिफला आदिका फल ग्राह्य है पंचांगुल (अरंड) आदिकी जड़ लेनी चाहिये और खैरी विजयसार आदि ओषधियोंका विना कहे स्थानमें सार (मैंगी) ग्रहण करना. इसी रीतिसे विना कहे स्थानमें वैद्यने अपनी बुद्धिसे विचार कर पूर्वोक्त कहे अंगमेंसे लेना ॥ २२ ॥

द्रव्यस्वरूप ।

रसो गुणस्ततो वीर्यं विपाकः शक्तिरेव च ।
पञ्चानां यः समाहारस्तद्द्रव्यमिति कीर्त्यते ॥२३ ॥

अर्थः—जो रस (स्वाद), और गुण, तथा बल, और पकापन, एवं शक्ति (सामर्थ्य) ये पाँचों जिसमें मिले भये हों उसको द्रव्य (ओषधी) कहते हैं ॥ २३ ॥

षड्रसवर्णन ।

स्वाद्वम्लो लवणस्तिक्तः कटुकश्च कषायकः ।
अमी षट् च रसाः ख्याता निर्बलाश्च परस्परम् ।२४।

अर्थः—१ स्वादु, २ खट्टा, ३ खारी, ४ चर्परा, ५ कडुआ और ६ कुसैला ये छः ६ रस कहे हैं. इनमें एकसे एक निर्बल (कम) समझना; जैसे स्वादु (मीठा) से खट्टा निर्बल हैं, खट्टेसे खारी, खारीसे चर्परा, चर्परेसे कडुआ; और कडुयेसे कसैला निर्बल जानना ॥ २४ ॥

मधुर रसके गुण।

मधुरः पिच्छिलः शीतो धातुस्तन्यबलप्रदः।
चक्षुष्यो वातपित्तादीन् कुर्यात्त्वक्स्थो मलेकृमीन्॥

अर्थः—मधुर रस (मीठे) का स्वभाव पिच्छिल (कोमल) शीत, (सरद) धातुओंको बढ़ानेवाला, स्तन्य कहिये माताके दुग्ध समान बलदायक, चक्षुष्य अर्थात् नेत्रोंको हितकारी, वात पित्तको हरनेवाला है और यही त्वचामें स्थित हुआ मल कीडोंको उत्पन्न करता है॥ २५ ॥

अम्ल रसके गुण।

अम्लोष्णान्तर्बहिः शीतो रुच्यः पित्तकफास्रदः।
विबन्धानाहदृष्टिघ्नो दन्ताक्षिभ्रूनिकोचनः॥ २६॥

अर्थः—अम्ल (खट्टा) रस जो है सो भीतर गर्म, बाहर ठंढा, और रोचक है. पित्त, कफ, और रुधिरको बढ़ाता है. विबंध (मलमूत्रकी रुकावट) और अफराको दूर करता है; दृष्टि-नाशक है; दांत, आँख और भौंहको संकोचकारी है ॥ २६ ॥

लवणरसके गुण।

लवणः शोधनो रुच्यः पाचनः कफपित्तहा।
प्रायो वातहरः कायशैथिल्यमृदुकारकः॥ २७ ॥

अर्थः—लवण (खारी) रस शोधन करनेवाला है, रोचक

है, पाचन करता है, वातविकारको नाश करता है, और शरीरको शिथिल और कोमल करता है ॥ २७ ॥

तिक्त रसके गुण।

तिक्तः शीतस्तृषामूर्च्छाज्वरपित्तकफाञ्जयेत् ।
रुच्यः स्वयमरोचिष्णुः कण्ठस्तन्यास्थिरोधकः।२८।

अर्थः—तिक्त (चर्परा) रस शीत है; तृष्णा, मूर्च्छा, ज्वर, पित्त और कफ इन सबको हरता है; रूखा है; रुचिवर्धक है; आप कम रुचता है; कंठ और छातीके अस्थिको रोकता है।२८।

कटुरसके गुण ।

कटू रूक्षस्तन्यमेदः श्लेष्मकण्डू विषापहः ।
वातपित्तकफाग्नेयः सोऽक्षिपाचनरोचकः ॥ २९ ॥

अर्थः—कडुवारस जो है सो रूखा है और छातीका मदा, कफ, खाज, और विष कहिये मूर्च्छादिको दूर करता है; वात, पित्त कफके रोगोंका नाशक है; तेज है; आँखको रुचिप्रद, पाचक और रोचक है ॥ २९ ॥

कषायरसके गुण।

कषायः कृमिकण्डूघ्नः कफशैथिल्यनाशनः ।
वातव्याधिहरः सूक्ष्मो सोऽतियुक्तोऽक्षिरोगकृत्।३०।

अर्थः—कसैला रस, कीडा और खाजको दूर करता है; कफकी शिथिलताका नाशक है; वातव्याधिको हरता है और बहुत सेवन करनेसे नेत्रोंमें रोग करता है ॥ ३० ॥

पञ्चभूतोंके गुण ।

गुरुः स्निग्धस्तीक्ष्णरूक्षौ लघुरेते गुणा स्मृताः ।
पञ्चभूतेषु तिष्ठन्ति आधिक्यादुपलक्षतः ॥ ३१ ॥

अर्थः—गुरु (भारीपन), स्निग्ध (चिकनाई), तीक्ष्ण, (तीखापन), रूक्ष (रूखापन), लघु (हलकापन), ये गुण अनुक्रमसे पृथिव्यादि पंचभूतोंमें रहते हैं. ये विशेष लक्षण हैं ॥ ३१ ॥

गुरु और स्निग्धगुणोंका प्रभाव।

गुरुर्वातहरः पुष्टिश्लेष्मकृच्चिरपाचकः।
स्निग्धो वातहरः श्लेष्मा कटिमूर्द्धबलापहः ॥३२॥

अर्थः—भारीपनका स्वभाव यह है कि, बादीको हरता है; पुष्टि करता है; कफको बढ़ाता है; देरसे पचाता है; और स्निग्धगुणवाला औषध वातको हरता है; कफ करता है; कटि और मस्तकके बलको घटाता है ॥ ३२ ॥

तीक्ष्ण और रूक्षगुणोंका प्रभाव।

तीक्ष्णं पित्तकरं प्रोक्तं लेखनं कफवातकृत्।
रूक्षं समीरणकरं परं कफहरं मतम् ॥ ३३ ॥

अर्थः—तीक्ष्णगुण पित्तकारी कहा है. यह मलको उखाड़ता है. कफवातका बढ़ानेवाला है; और रूखारस वातको उत्पन्न करता है तथा कफको बहुतही नाश करता है ॥ ३३ ॥

लघुगुणका प्रभाव।

लघु पथ्यपरं प्रोक्तं कफघ्नं चिरपाकि च।
पृथिव्यादिगुणाधिक्याद्गुणं द्रव्ये प्रकल्पयत् ॥३४॥

अर्थः—हलका रस बहुत पथ्यहितकारी कहा है और कफको नाश करता है; देरमें पचता है. इसप्रकार पृथिव्यादि अन्यगुणोंका निश्चय करके अनुमानसे भी देखकर औषधियोंको काममें लावै ॥ ३४ ॥

द्विविधवीर्य ।

उष्णं शीतं द्विधा वीर्यं तत्कालाद्युपलक्षयेत् ।
स्थलादपि तयोर्योगादयोगान्मध्यमं तु तद् ।३५।

अर्थः—गर्म व शर्द वह दो प्रकारका बल तथा काल आदि भी देखलेवें, स्थानके बलसे ओषधियां बलयुक्त होजाती हैं और मध्यम स्थलके योगसे ओषधिका गुण समान रहता है ॥ ३५ ॥

जाङ्गल तथा अनूपद्रव्योंके गुण ।

सर्वं जांगलसम्भूतं प्रायो भवति पित्तहृत् ।
अनूपसम्भवं सर्वं प्रायः कफकरं स्मृतम् ॥ ३६ ॥

अर्थः—जैसे जांगल देशमें उत्पन्न हुई सब ओषधियां बहुधा पित्तकोही हरती हैं और जल युक्त प्रदेशमें उत्पन्न हुई सब ओषधियां प्रायः कफ करनेवाली होती हैं ॥ ३६ ॥

दक्षिणदेश और साधारणदेशोंमें उत्पन्न द्रव्योंके गुण ।

तत्कालोष्णं दक्षिणजं परिणामे तु शीतलम् ।
धनदाशासमुद्भूतं विपरीततया स्मृतम् ॥ ३७ ॥

अर्थः—दक्षिणदेशकी उत्पन्न ओषधियां तत्काल (उखाड़ते ही) गरम हैं और अंतमें शीतल (ठंढी) हैं, और उत्तरदिशामें उत्पन्न हुई ओषधियां इससे विपरीत अर्थात् उखाड़ते ही शीतल और अन्तमें गरम होजाती हैं ॥ ३७ ॥

मध्यदेशज द्रव्य और उनका विपाक ।

अन्तर्वेदिभवं सर्वं यथोक्तगुणमादिशेत् ।
विपाकस्तु त्रिधा प्रोक्तः स्वाद्वम्लकटुकात्मकः ३८

अर्थः—अन्तर्वेद (मध्यदेश) में उत्पन्न ओषधियोंका यथोक्त बल जानना. अब विपाक (तासीर) कहते हैं. कि विपाक कहिये स्वभाव (तासीर) तीन प्रकारका है; १ स्वादु, २ खट्टा और ३ कडुआ ॥ ३८ ॥

पक्व हुए रसोंके गुण।

क्रमाद्धीनबलो ज्ञेयो मधुरोऽमधुरः कटुः।
पचत्यम्लोऽम्लमितरे रसाः कटुकपाकिनः ॥३९॥

अर्थः—ये रस क्रमसे पाकके वश कुछ हीनबल भी जानना. मधुर प्रथम मीठा है और पाकके वशसे कडुवा हो जाता है; तथा खट्टा पकेपर भी खट्टाही रहता है. शेष चार रस (खारी, चर्परा, कडुआ व कसैला) पकेपर कडुवे होजाते हैं ॥ ३९ ॥

पक्व मधुर और पक्वाम्ल रसोंके गुण।

श्लेष्मकृन्मधुरः पाके वातपित्तहरो मतः।
अम्लस्तु कुरुते पित्तं वातश्लेष्मगदापहः ॥४०॥

अर्थः—मीठा रस पकनेपर कफ करता है; वातपित्तको हरता है; खट्टा रस पकेपर पित्तको करता है, वातकफके रोग हरताहै ४०

पक्वकटुरसके गुण।

कटुः करोति पवनं कफपित्ते च नाशयेत्।
विशेष एष रसजो विपाकानां प्रदर्शितः ॥ ४१ ॥

अर्थः—कडुवा रस पकेपर वातको बढ़ाता और कफ व पित्तको नाश करता है, यह विशेष करके रसोंका विपाक दर्शाया है ॥ ४१ ॥

द्रव्यप्रभाव।

रसादिसाम्ये यत्कर्मविशिष्टं तु प्रभावजम् ।
दन्तीरसेन तुल्याऽपि चित्रकस्य विरेचनी ॥४२॥
मधुना चाथ मृद्वीका घृतं क्षीरेण दीपनम् ।
प्रभावस्तु यथा धात्री लकुचस्य रसादिभिः ॥४३॥
समाऽपि कुरुते दोषत्रितयस्य विनाशनम् ।
क्वचित्तु केवलं द्रव्यं कर्म कुर्यात्स्वभावतः ॥४४॥
ज्वरं हन्ति शिरोबद्धा सहदेवीजटा यथा ।
धृता निवारयेल्लोहं पुष्यार्के किल मूलिका ॥४५॥

अर्थः—रसआदिकोंकी समानतामें जो कर्म प्रभावसे शेष रहा सो कहते हैं कि—दंती (वज्रदंती) चित्रकके रससे बराबर होनेपर भी विरेचक (दस्त करनेवाली) हो जाती हैं ॥४२॥ दाख शहतके साथ होनेसे और घी दूधके योगसे दीपन (तेज) करै है. अब प्रभाव कहते हैं कि—जैसे आँवला कटहरआदिके रससे बराबर हो तो भी तीनों दोषोंका नाश करनेवाला होता है. कोई औषध केवल स्वभावसे ही कर्म करै है ॥४३॥४४॥ जैसे सहदेईकी जड़ शिरपर बँधीहुई ज्वरको नाश करती है और जैसे पुष्यनक्षत्रमें धारण कीहुई मूली लोहके रोगको निवारण करै ॥४५॥

पांच प्रकारका द्रव्यकल्प।

द्रव्यकल्पः पञ्चधा स्यात् कल्कश्चूर्ण रसस्तथा ।
तैलमर्कं क्रमाज्ज्ञेयं यथोत्तरगुणं प्रिये ॥ ४६ ॥

अर्थः—रावण मंदोदरीसे कहाता है कि-हे प्रिये! द्रव्य (औषध) कल्प पाँच प्रकारका होता है. १ कल्क (खलसे कुटीहुई), २ चूर्ण,

३ रस०(पतली), ४ तेल और ५ अर्क (यंत्रद्वारा खींचा भया) इनमें क्रमसे यथोत्तर (एकसे एकमें) अधिकगुण है ॥ ४६ ॥

प्रयोगविधि।

पृथक्द्वयंशे सन्निपाते सङ्करेऽसाध्यरोगिणि।
क्रमादेते प्रयोक्तव्याः कालमग्निं निरीक्ष्य च ॥४७॥

अर्थः—पृथक् पृथक् रोगोंमें, सन्निपातमें; संकर (मिले हुए दोषों) में, असाध्यरोगमें क्रमसे यह दिये जाते हैं. कालवल और अग्निवल भी देखकर ओषधी देनी चाहिये ॥ ४७ ॥

द्रव्यकल्पोंके गुण।

आद्ये गुणे गुणाः सर्वे द्वितीये ह्यल्पतः स्मृता।
तृतीये शीघ्रकारित्वं चतुर्थो न हि दोषकृत् ॥ ४८ ॥
पञ्चमं दोषरहितं गुणसङ्घप्रकाशकम्।
पञ्चमस्य तु सामर्थ्यं स्वयं पञ्चाननोऽब्रवीत् ॥ ४९ ॥

अर्थः—इनमेंसे प्रथममें सब गुण हैं, दूसरेमें कुछ कम, तीसरेमें शीघ्रताकी क्रिया रहती है, चौथेमें कुछ दोष नहीं करता है ॥ ४८ ॥ पांचवां दोषरहित सम्पूर्ण गुणोंका प्रकाश करनेवाला श्रेष्ठ अर्करूप है. इसका सामर्थ्य (प्रभावगुण) स्वयं महादेवजीने हमसे कहा ॥ ४९ ॥

अर्कस्तुति।

पार्वत्युवाच।

वर्णानां तु सहस्रेण कथितोऽहर्निशं मया।
सम्पूर्णतां न जायेत कल्पोऽर्कस्य दशानना ॥५०॥

अर्थः—पार्वतीजी बोलीं—हे रावण! हजारों वर्षतक हमारेसे रात्रिदिन कहा जाय तो भी अर्ककल्पका वर्णन सम्पूर्णताको प्राप्त नहीं होवै ॥ ५० ॥

स्त्रीपुरुषोंके लिये वारव्यवस्था।

पुंवारे पुरुषर्क्षे च दिवार्को यस्तु निर्मितः।
रमणीषु प्रदातव्यो विलोमात्पुंसि योजयेत् ॥५१॥

अर्थः—जो अर्क पुरुषवार (सूर्य, मंगल, बृहस्पतिमें) पुरुषनक्षत्र और दिनमें बनाया गया सो स्त्रीको देना चाहिये और इससे (विपरीत) अर्थात् स्त्री संज्ञक वार, चंद्र, बुध, शुक्र, शनि और स्त्रीनक्षत्रमें तैयार कियाहुआ अर्क पुरुषको देना चाहिये ॥ ५१ ॥

यंत्रके वास्ते मृत्तिकाकरण।

लोहचूर्णं स्फटिका च गैरिका भ्रष्टमृत्तिका।
मृत्तिकास्थिभवं चूर्णं काचं कीकसजं रजः ॥ ५२ ॥
एतानि समभागानि सर्वतुल्या च मृत्तिका।
भंशनीया पञ्चमूत्रैर्गवाश्वमहिषोद्भवैः ॥ ५३ ॥
गजाजसम्भवाभ्यां च सटितं तद्विशोषयेत्।
यावद्गन्धविनाशः स्यात्तावत्सम्मर्दयेच्च ताः ॥ ५४ ॥

अर्थः—लोहचूर्ण, फटकरी, गेरू, बालू, भाड़से भुँजी मिट्टीके साथ कुटाभया झाड़ोंका चूरा, काचका चूरा, और कसीसका चूरा यह सब बराबर लेके इनके बराबर मिट्टी मिलाकर पांच मूत्रोंसे सानै–सो ५ मूत्र–ये हैं कि–गऊका, २ घोड़ेका, ३ भैंसेका ४ हाथीका और ५ बकरेका इन मूत्रोंमें सानके धूपमें सुखादेवै पुनः दुर्गन्ध दूर होनेपर लेवे जबतक अच्छी तरह दुर्गन्धि नहीं निकले तबतक मसले ॥ ५२ ॥ ५३ ॥ ५४ ॥

यंत्रकरणविधि।

लघुहस्तः कुलालोऽस्य कुर्याद्यन्त्रं सुनिर्मलम्।
यथेष्टां स्थालिकां कुर्यात्त्र्यंगुलं प्रान्तसारिकाम् ।५५।

पृथुब्रघ्नोदराकारां द्व्यंगुलां सन्धिवेष्टिताम् ।
सारिकांते तु परिधिं त्र्यंगुलोत्सेधशोभिताम् ॥५६॥
विनिर्माप्याथ सार्य्यान्ते यथाशिल्पविनिर्मितम् ।
छिद्रं कृत्वा नलं दद्याद्गजशुण्डासमं सुधीः ॥५७॥
सारिकापरिधेरन्तस्तपस्कुर्यात्पिधानकम् ।
अर्द्धनिम्बूफलसमं परिधेस्तस्य चान्ततः ॥५८॥

अर्थः—फिर हलके हाथवाला कुम्हार उस मिट्टीका सुन्दर निर्मल यंत्र बनावे. औषध प्रमाणसे जितना अर्क निकलना हो उतनेही चौड़ी थाली बनावे. तीन अंगुलतक ऊंचे किनारेवाली ऐसी थाली बनावे ॥ ५५ ॥ गोल सूर्यके मण्डलसमान चौड़ाई उसकी संधि(जोड़) है उसमें दो अंगुल चौड़ी खाम लगावे और ढकनेके पात्रकी किनारी तीन अंगुल नीचेको चली जावे ऐसी छुटावे लिये हो जो ऊपर नीचे दोनों थालियोंको मुख परस्पर मिलजावे उसमें २ अंगुलकी पकी खाम लगावै ॥५६॥ इसप्रकार बनायके सुंदर बुद्धिमान् जन उस ऊपरके पात्रके बीचमें अच्छी कारीगरसे छिद्र करावै फिर उसमें हाथीके सूंडसमान नल लगावै ॥ ५७ ॥ ऊपरके ढकनेके पात्रमें ऐसा पिधान (ढकना) ढांकते बनै कि आधे निम्बूफलसमान अर्थात् तीन अंगुल नल उसके भीतर घुस जावे ॥ ५८ ॥

वेदांगुलं मस्तकोर्ध्वं कार्यं तोयस्य धारणे ।
समर्थां तस्य नलिकां कुर्यात्तोयविमोचनीम् ॥५९॥
तस्यैवान्तरतो लेप्या घनाजीर्णास्थिमृत्तिका ।
अथवा श्वेतकाचं च सर्वदोषापनुत्तये ॥ ६० ॥

अर्थः—चार अंगुल ऊँचा उस यंत्रका मस्तक हो सो जलके धारण करनेके लिए करना अर्थात् दोनों थालियोंका

पुट लगाय, उसपर खाम लगी ऊपरको बीचमें छेद, उसमें तीन अंगुल भीतर घुसा हुआ नल, उसका चार अंगुल माथा, उसमें अच्छे प्रकारसे जल छोड़नेके निमित्त जल छोड़नेवाला नल बनावे ॥ ५९ ॥ उसके मध्य बहुत जीर्ण हाड़ोंसे सानी हुई गाढ़ी मृत्तिका लेपन करै अथवा सब दोषोंके नाश करनेके लिये श्वेत कांच लेप देवै ॥ ६० ॥

भोजनपात्रकरण।

अथ वक्ष्ये तु जीर्णास्थिमृत्तिकाकरणं प्रिये ।
शिलाजतुस्थले कुर्याद्दीर्घं गर्तं मनोहरम् ॥६१॥
निक्षिपेत्तत्र नानास्थिसञ्चयं द्विचतुष्पदाम् ।
स्वर्जिक्षारं महाक्षारं मृत्क्षारं लवणानि च ॥ ६२ ॥
गन्धकोष्णजलं क्षेप्यं नानामूत्राणि तत्र च ।
एवं कृत्वा मासषट्कं दद्यात्पाषाणमृत्तिकाम् ।६३।
पंकास्थ्यूर्ध्वं तदूर्ध्वं तु कुर्याद्विष्टिकाः शुभाः ।
त्रिवर्षाज्जायते सर्वमेकीभूतं द्रवत्सयम् ॥ ६४ ॥
ततो निष्पिष्य तच्चूर्णं कृत्वा पात्राणि कारयेत् ।
प्रशस्तं भोजनं तत्र सूचयेद्दूषणं द्रुतम् ॥ ६५ ॥

अर्थः—रावण कहता है कि—हे प्रिये ! अब हम जीर्णास्थिमृत्तिका (जीर्ण हाड़ोंकी मिट्टी) का बनाना कहते हैं कि—जहां शिलाजीत निकले तहां अर्थात् पर्वतकी भूमिमें गहिरा सुंदर गर्त (गड़हा) खोदकर बनावै ॥ ६१ ॥ तहाँ उस गर्तमें अनेक दुपाये चौपायोंके बहुत हाड़ छोड़ै और सज्जीखार, महाखार, पाँचों लवण, गंधक और गर्म जल डालके अनेक मूत्र उसमें डाले. इस प्रकार छे महीना रखके फिर उसमें मिट्टी पत्थर छोड़देवे ॥६२॥६३॥ फिर कीचके ऊपर हाड़ आदिके ऊपर सुंदर २ ईंट

लगावे तब तीन वर्षमें सब सामान एकमें मिलके पतला हो जाता है ॥ ६४ ॥ फिर उसको पीसकर चूर्ण करे और पात्र बना लेवे उसमें भोजन करना उत्तम होता है क्योंकि वह शीघ्र दोषको सूचित करादेता अर्थात् दोष बतादेता है॥ ६५ ॥

भोजनपात्रके लक्षण ।

महाविषस्य संयोगात्तस्य भङ्गः प्रजायते ।
सूचीविषादिसंयोगात्तस्य स्फोटा भवंति हि ॥६६॥
तत्र क्षिप्तं क्षुद्रविषं पात्रं कृष्णं करोति च ।
एवं ज्ञात्वा तत्र दद्यान्न कदाचिद्विषादिकम् ॥६७॥

अर्थः—जो उसमें किसी बड़े विषका संयोग होजावे तो वह टूटजावे और सूचीविष आदिके संयोगसे उसमें छिद्र होजाते हैं ॥ ६६ ॥ और उसमें कोई छोटा विष गिर पड़ै तो वह पात्र काले रंगका होजाता है. इस प्रकार जानकर उसमें विषादिका संयोग कदाचित् न होने देवे ॥ ६७ ॥

विषअर्कके लिये पात्र ।

विषादीनामर्कसिद्धौ कुर्यात्पात्रं तु लोहजम् ।
स्वर्णजं रौप्यकं वापि कुर्यात्पात्रमकल्मषम् ॥६८॥
अथवा ताम्रजं वापि ह्यन्तर्वङ्गविलेपनम् ।
पात्रं तु बुद्ध्या कुर्वीत कषायो न भवेद्रसः ॥ ६९ ॥

अर्थः—विषादिके अर्कसिद्धिमें लोहेका पात्र बनावै अथवा सोने चाँदीका निखालिस पात्र बनावै ॥ ६८ ॥ अथवा ताँबेका पात्र बनावै और उस ताम्रपात्रके भीतर वंग अथवा कलई करवा ले वह पात्र अपनी बुद्धिसे पात्र बनावे जिससे उस पात्रमें रस (अर्क) कसैला न हो जावे ॥ ६९ ॥

अर्कस्तुति।

द्रव्यान्तरस्य संयोगादर्कं तैलं च सर्विणः।
सर्वेषां निःसरत्येवं पाषाणस्य तु किं पुनः॥ ७०॥
अनग्न्यर्कस्तथा तैलं गन्धतैलादिसम्भवम्।
वेधकं सर्वधातूनां देहस्यापि च पुष्टिदम्॥ ७१॥
यस्तैलकरणे दक्षश्चार्कनिस्सारणे पटुः।
तस्य सेवा भवेन्नित्यं रोगैश्च न स बाध्यते॥७२॥
कुत्सितार्कस्तु यामे स्याद्द्वियामाभ्यां तु मध्यमः।
त्रिभिर्यामैर्भवेच्छ्रेष्ठ अर्को मितगुणप्रदः॥ ७३॥

अर्थः—उत्तम औषध उसमें रखनेके संयोगसे अर्क और तेल सबका निकलता है चाहे पत्थर भी हो, औरका तो क्याही कहना है?॥ ७०॥ विना अग्निका अर्क तथा तेल गंधकका तेल यह सब धातुओंके वेधक हैं और देहको भी पुष्टि देते हैं॥७१॥ जो जन तैल बनानेमें चतुर और अर्क निकालनेमें सावाधन है उसकी नित्यही सेवा होती है और वह रोग करके बाधाको प्राप्त नहीं होता है॥ ७२॥ जो अर्क एक पहरमें निकलके तैयार होता है वह कुत्सित (कुछ न्यून) कहलाता है अर्थात् उसमें गुण पूर्ण नहीं होता, और दो पहरमें तैयार हुआ अर्क मध्यम (सामान्य) होता है, तीन पहरमें तैयार हुआ रस श्रेष्ठ (उत्तम) होता है; वह अर्क बहुत गुण देता है॥ ७३॥

अर्कोंके लक्षण।

द्रव्यादधिकसौगन्ध्यं यस्मिन्नर्के प्रदृश्यते।
जीर्णास्थिपात्रसंक्षिप्तो द्रव्यवर्णः प्रदृश्यते॥ ७४॥

शंखकुन्देन्दुधवलाऽन्यथापात्रान्तरस्थितः ।
जिह्वोपरिगतः स्वादं दद्याद्द्रव्यभवं तु यः ॥७५॥
तमेवार्कं विजानीयादन्यस्तु स्याद्रसादिवत् ।

अर्थः—जिस औषधीका अर्क निकाला है; उससे अर्कमें सुगन्धि अधिक हो तो श्रेष्ठ है अथवा जीर्णास्थिप्रकारसे बनाये पात्रमें धराजावे और रंग वही रहे ॥ ७४ ॥ शंख, कुंद तथा चंद्रमाके समान श्वेतवर्ण अथवा निर्मल हो वा अनेकप्रकारके पात्रमें स्थित भया जीभपर रखनेसे द्रव्यका स्वाद देवे कि जिस द्रव्यका अर्क है तो वह अर्क उत्तम जानना ॥ ७५ ॥ और उसीको उत्तम अर्क जानना, अन्य अर्क जलादिके समान हैं—

अर्कसेवन और निषेध ।

कृत्वा सुगन्धिमेतस्य ह्यर्कपुष्पादिभिः सुधीः ।७६।
गुणाय पश्चात्सेवेत त्वन्यथाऽपगुणो भवेत् ।
दुर्गन्धं भक्षयेदर्कं यदि मोहात्कथञ्चन ॥ ७७ ॥
तदाऽस्य जायते ग्लानिर्वान्तमालस्यकं तथा ।
तद्दोषस्य विनाशाय कुर्याद्वान्तिमुतन्द्रितः ।७८।

अर्थः—और जो अर्कमें दुर्गंधि होवे तो अर्कादिके फूलोंसे बुद्धिमान् उसमें सुगन्धि करके वर्तावमें लावै ॥ ७६ ॥ पश्चात् (फिर) गुणके निमित्त उसको सेवै (पीवै) और जो मनुष्य इससे अन्यथा अर्थात् दुर्गन्धियुक्त द्रव्यके मोह (लाभ) से पीवे तो वह अर्क अपगुण कहिये विकार करनेवाला होजाता है ॥ ७७ ॥ और इससे ग्लानि उत्पन्न हो जाती है और वान्त (कै) होने लगती है, तथा आलस्य होता है उसके दोषको मिटानेके अर्थ चैतन्य होके वान्तिको करै ॥ ७८ ॥

अर्क पीनेकी विधि ।

दीपोद्भवप्रसूनानां पिबेदथ पलं जलम् ।
अर्कदुर्गन्धिविभ्रष्टो मालत्या दुस्तृषार्दितः ॥७९॥

अर्थः—और अर्ककी दुर्गन्धि नाश करनेके अर्थ तृषासे पीडित मालती (चमेली) के प्रकाशित फूलेभये फूलोंका जल पीवै तों शान्त होवै ॥ ७९ ॥

अग्निके छः नाम ।

अर्कनिष्कासनार्थाय क्रमाद्देयाः षडग्नयः ।
धूमाग्निश्चैव मन्दाग्निर्दीपाग्निर्मध्यमस्तथा । ८० ।
खराग्निश्च भटाग्निश्च तेषां वक्ष्यामि लक्षणम् ।

अर्थः—अर्क निकालनेके निमित्त क्रमसे छः अग्नि देवै सो यह है कि १ धूमाग्नि, २ मंदाग्नि, ३ दीपाग्नि, ४ मध्यमाग्नि ॥८०॥ ५ खराग्नि और ६ भटाग्नि. अब इनके लक्षण कहता हूँ कि—

धूमाग्निके लक्षण ।

विज्वालो यो धूमशिखो धूमाग्निः स उदाहृतः।८१।

अर्थः—विना ज्वाला (ज्योति) के धुवाँ बहुत ऊँचा चोटीतक उठे सो धूमाग्नि कहाती है ॥ ८१ ॥

दीपाग्नि तथा मंदाग्निके लक्षण ।

द्वाभ्यां तस्य चतुर्थाभ्यां योऽग्निर्दीपाग्निरुच्यते ।
चतुरंशेन तेनैव मन्दाग्निः स प्रकीर्तितः ॥ ८२ ॥

अर्थः—और उस धूमाग्निको जो दूनी फिर और उसको चौगुनी करै उसे दीपाग्नि कहिये फिर उस दीपकसमान अग्निको चौगुनी जला देनेसेही वह मन्दाग्नि कहाती है ॥ ८२ ॥

मध्यमाग्नि तथा खराग्निके लक्षण।

अर्द्धीकृताभ्यां द्वाभ्यां तु मध्यमाग्निरुदाहृतः ।
अर्द्धस्तैः पञ्चभिः प्रोक्तः खराग्निः सर्वकर्मसु । ८३ ।

अर्थः—अर्द्धीकृत कहिये मंदाग्नि उससे दूनी अग्निको मध्यमाग्नि कहा है, और पांचों अग्नि अर्थात् पूरी अग्निसे आधी अग्नि जलानेसे सब अर्क कर्मोंमें खराग्नि कही है ॥ ८३ ॥

भटाग्निका लक्षण ।

मस्तकावधि पात्रस्य चतुर्दिक्षु क्रमेण च ।
प्रसरंति यदा ज्वालाः स भटाग्निरुदीरितः ॥८४॥

अर्थः—पात्रके मस्तक ऊपरतक क्रमसे चारों दिशाओंमें ज्वाला फैलती हैं; उस अग्निको भटाग्नि कहा है ॥ ८४ ॥

अग्निमान ।

सार्द्धयामं च यामं च यामार्द्धं च मुहूर्तकम् ।
मुहूर्तमात्रमित्येवमर्कार्थं वह्नयः स्मृताः ॥ ८५ ॥

अर्थः—अब अर्कके निमित्त उक्त अग्नि जलानेका क्रम कहते हैं–प्रथम डेढ़प्रहर, २ प्रहरभर, ३ आधे प्रहर ४ ढाईघड़ी और ५ मुहूर्तमात्र (२ घड़ी) ही यह क्रम है ॥ ८५ ॥

काष्ठमान ।

ससारमतिशुष्कं यं मुष्टिमध्ये समेष्यति ।
तत्काष्ठं ग्राह्यमित्याहुः खदिरादिसमुद्भवम् ॥ ८६ ॥

अर्थः—अब लकड़ी कहते हैं–जो सहित सारके अर्थात् कठीली, भारी और सूखी लकड़ी हो, हलका वीधा न हो, खदिरादि (खैरीआदि) का उत्पन्न हो वह काष्ठ अर्कोंमें ग्रहण करने योग्य कहा है ॥ ८६ ॥

अर्कपात्रग्रहण ।

जीर्णास्थिपात्रे गृह्णीयादर्कं वा काचसम्भवे ।
पाषाणकेऽथवा पात्रे अभावे मृन्मये न्यसेत् ।८७।

अर्थः—पूर्वोक्त जीर्णास्थि पात्रमें अथवा काँचके पात्रमें वा पत्थरके पात्रमें अर्कको ग्रहण करे. इन पात्रोंके अभावमें मिट्टीके पात्रमें रक्खै ॥ ८७ ॥

अर्क पीनेकी विधि ।

पिबेदर्कमनिर्वार्य पीत्वा ताम्बूलभक्षणम् ।
कुर्यादभुक्तताम्बूलो लवंगं भक्षयेत्तु च ॥ ८८ ॥

अर्थः—अर्कको प्यार करके पीजावे पीकर ताम्बूल (पान) खा लेवे, जो पान नहीं मिले तो लौंग भक्षण करलेवे ॥ ८८ ॥

ओषधी और उसके अर्कका साम्य ।

ये ये द्रव्यगुणाः प्रोक्ताः सर्वे तेऽर्के समाश्रिताः ।
सेवेतार्कं श्रिये तस्माद्राजा परमधार्मिकः ॥ ८९ ॥

अर्थः—जो गुण द्रव्यके कहे हैं अर्थात् ओषधियोंमें जितने गुण हैं वे उन ओषधियोंके अर्कमें रहते हैं, इस कारण परम धार्मिक राजा अपने कल्याणके अर्थ समझके अर्कको सेवै॥८९॥

अर्क और तैलके नियम ।

मर्दनादिषु सर्वत्र द्रव्यं तैलं प्रयोजयेत् ।
अर्क एव प्रयोक्तव्यो भक्षणे न तु भोजने ।९०।

अर्थः—मर्दन करने आदिमें सर्वत्र ओषधीका तेल काममें लावै, और भोजनपानमें अर्कही लेना योग्य है. भोजनमें तेल नहीं लेवै ॥ ९० ॥

अर्क किसको देना चाहिये ।

स्वस्थेन रोगिणा वाऽपि याचितोऽर्कस्य येन वा ।
ज्ञात्वा तल्लक्षणं दद्यादन्यथा ब्रह्महा भवेत् ॥ ९१ ॥

अर्थः—स्वस्थ (आरोग्य मनुष्य) वा रोगी अथवा जिस किसीने अर्कको माँगा हो तो उसके लक्षण (देश, काल व बल) जानकर अर्क देवै अन्यथा (नहीं देनेसे) ब्रह्महत्यारा होता है ॥ ९१ ॥

दूतमुखाक्षरप्रश्न ।

वर्णस्वराणां प्रमितिं दूतोक्तानां हि कारयेत् ।
एकयुक्तां द्विगुणितो त्रिभिर्भागं समाहरेत् ॥ ९२ ॥
एकशेषे गुणः शीघ्रं द्विशेषे वर्द्धते गदः ।
त्रिशेषे मरणं वाच्यं स्वार्थं याचयतेऽथवा ॥ ९३ ॥
अर्कं तदेतद्विज्ञाय दद्याद्योग्यं न चान्यथा ।
गदिना तु यदा दूतः प्रेषितस्तद्विचारयेत् ॥९४॥

अर्थः—दूतके कहे अक्षरोंकी संख्याको गिनके १ जोड़दे और दूना करके तीनका भाग देवै ॥ ९२ ॥ एक शेष रहे तो शीघ्र गुण हो, दो शेषमें रोग बढ़े, तीन शेष रहें तो मरण कहिये अथवा स्वार्थको याचै अर्थात् प्रश्न करै तोभी विचार करना ॥ ९३ ॥ यह विचारपूर्वक जानके अर्क देवे तो योग्य है; अन्यथा नहीं देना, किंतु रोगीने जो दूत भेजा हो तो यह विचारै सो आगे लिखते हैं ॥ ९४ ॥

रोगोद्धारचक्र ।

नपुंसकान्त्यैरूनास्तु स्वरा एकादश प्रिये ! ।
वर्णास्तत्संख्यका लेख्या कचटाद्यास्तु तत्स्थले ९५

एकादशसु कोष्ठेषु क्रमादङ्काश्च विन्यसेत् ।
रसास्त्रयो द्वयं वेदाः पर्वता ऋतवः कृताः ॥ ९६ ॥
वह्नयः पृथिवी शून्यं चन्द्रमाश्च ह्यतिक्रमात् ।

अर्थः—रावण मंदोदरीसे कहता है कि–हे प्रिये ! नपुंसक अक्षरको बतानेवाले जो स्वर उसमेंसे अन्त्यवालोंको छोड़के ग्यारह स्वर हैं सो इन ग्यारह स्वरोंको ग्यारह कोठोंमें लिखै और ग्यारहही अक्षर उन कोठोंमें, क० च० ट० आदि लिखै, ॥ ९५ ॥ ग्यारह कोठोंमें क्रमसे सब अंक रक्खै, और रस ६, त्रय ३, वेद ४, ॥ ९६ ॥ पर्वत ८, ऋतु ६, कृताः ४ वह्नयः ३, पृथिवी १, शून्य० और चंद्रमा १, इस क्रमसे चक्रमें देखना.

रोगोद्धारे एकादश कोष्ठकम्.

१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	कोष्ठसंख्या
अ	इ	उ	ऋ	ऌ	ए	ऐ	ओ	औ	अं	अः	स्वर
क	च	ट	त	प	य	श	क्ष	त्र	ज्ञ	ँ	वर्ण
ख	छ	ठ	थ	फ	र	ष	०	०	०	०	वर्ण
ग	ज	ड	द	ब	ल	स	०	०	०	०	वर्ण
घ	झ	ढ	ध	भ	व	ह	०	०	०	०	वर्ण
ङ	ञ	ण	न	म	०	०	०	०	०	०	वर्ण
६	३	२	४	८	६	४	३	१	०	१	अङ्क ११

रोगोद्धारचक्रफल।

विहाय जीवदूतस्य नामाक्षरसुयोजनम् ॥ ९७ ॥
एकमेवाऽऽतुरे युक्त्वा द्वयोरष्टावशेषितम् ।
कृत्वाऽङ्कयोगं गदिनोऽधिकशेषे शुभं भवेत् ॥९८॥

समशेषे दीर्घरोगो न्यूनशेषे तदा मृतिः ।
एतद्विचार्य दातव्यमन्यदप्यौषधं बुधैः ॥ ९९ ॥
चक्रद्वयं तु यो ज्ञात्वा दद्यादर्कं विमोहितः ।
जायते यद्यपयशो तत्र चापि मृते सति ॥१००॥

इति लङ्केशरावणकृतार्कप्रकाशे प्रथमशतकाध्यायः ॥ १ ॥

अर्थः—अंतमें जो जो बोलते हैं उसे छोड़ दूतके नामके अक्षरसहित स्वरके जोडे ॥ ९७ ॥ ऐसेही रोगीके नामाक्षरोंको जोड़ १ मिलाय दोनोंको आठका भाग देवे फिर दोनोंके शेषांकोंका मिलान कर देखे कि कौनसा अधिक है ? जो रोगीके शेषांक अंक हों तो शुभ होता है॥९८॥जो दोनोंके सम (बराबर) शेष रहे तो रोग बढ़ जावे. जो कमती शेष रहे तो रोगीकी मृत्यु हो. यह विचारके पण्डितने अन्य औषध देना ॥ ९९ ॥ यह पूर्वोक्त दोनों चक्र जानकर जो वैद्य निर्लोभ होके अर्क देवे वह मृतकसमान हुए रोगीसे भी अपयशरहित हो सुखी रहता है ॥ १०० ॥

इति श्रीमत्पण्डित नारायणप्रसादकृतभाषार्कप्रकाशे प्रथमं शतकम् ॥ १ ॥

अथ द्वितीयं शतकम् २।

रावण उवाच।

अथातः सम्प्रवक्ष्यामि ह्यर्कनिस्सारणं प्रिये।
पञ्चप्रकारद्रव्यस्य कुर्यान्निष्कासनं बुधः ॥ १ ॥

अर्थः-रावणने मन्दोदरीसे कहा कि-हे प्यारी ! अब मैं तुझसे द्रव्यमेंसे अर्क निकालनेकी विधि कहता हूँ. बुध (पंडित) पाँच प्रकारकी ओषधीका अर्क निकालै ॥ १ ॥

पंचविध द्रव्यवर्णन।

अत्यन्तकठिनं चाद्यं कठिनं च द्वितीयकम्।
आर्द्रं तृतीयमुद्दिष्टं चतुर्थं पल्वलं भवेत् ॥ २ ॥
पञ्चमं तु द्रवद्रव्यं तेषां विधिरथोच्यते।

अर्थः—प्रथम वहुत साधारण कठिन, और दूसरा कठिन, तीसरा आर्द्र (गीला), चौथा पल्वल कहिये कुछ ढीला हो ॥ २ ॥ पाँचवाँ पतला चूवनेवाला द्रव्य है. अब इन द्रव्योंकी विधि कही जाती है कि—

द्रव्यके अर्ककी विधि।

बुसवच्चूर्णयेद्द्रव्यमत्यन्तकठिनं तु वै ॥ ३ ॥
द्विगुणे निक्षिपेत्तोये छायायां स्थापयेत्तु तत्।
यावच्छुष्कं भवेत्तोयं द्रव्यं स्याच्छिथिलं तथा ॥४॥
ततः पुनः क्षिपेत्तोयं पूर्वद्रव्यसमं भिषक्।
कृत्वाऽष्टप्रहरैस्तप्तं सूर्यचन्द्रकरैरलम्।
सम्पूज्य गणपं सूर्यं भैरवं कुलदेवताम् ॥ ५ ॥

निक्षिपेदर्कयंत्रे तच्छित्वाऽस्यार्कं समाहरेत् ।
वर्षाधिकं तु यद्द्रव्यमत्यन्तकठिनं च यत् ॥ ६ ॥
चन्दनादीनि सर्वाणि ह्यत्यन्तकठिनानि हि ।

अर्थः—बहुत कठिन द्रव्यका भूसाके समान चूरा करै ॥ ३ ॥ फिर उसमें दूना जल छोड़ै फिर उस जलमें छोड़ी द्रव्यको छायामें रख देवैं जब जल सूखै और जल सूखनेसे द्रव्य गाढ़ा होजाय ॥ ४ ॥ तब फिर वैद्यजन उसमें पूर्वद्रव्यसमान अर्थात् प्रथम जितना जल छोड़ा था उतना जल छोड़ै फिर उसको दिनमें सूर्यकी किरणोंसे ताप देवै, रात्रिको चांदनीमें रक्खै, इसप्रकार आठ प्रहरतक धूप और ठण्ढ देवै और गणेश, सूर्य, भैरव, कुलदेवताका पूजन करके ॥५॥ ओषधीको अर्कयंत्रमें छोड़ै फिर पूर्वोक्त प्रकारसे अर्क खींचले. परंतु जो द्रव्य वर्षभरसे अधिक पुराना तथा बहुत कठिन द्रव्य हों ॥ ६ ॥ चंदनादि सब अतिही कठिन द्रव्य हैं—

अर्कयोग्यद्रव्य ।

कीटैर्भुक्तं घुणैर्भुक्तं यच्च गन्धविवर्जितम् ॥ ७ ॥
रहितं च रसेनापि नार्के कर्मणि योजयेत्
यथार्के संस्थितं द्रव्यं कुर्याद्भोक्तुस्तथा वपुः ॥ ८ ॥
अर्के तरुणभैषज्यं तस्मात्संयोजयेत्प्रिये ।

अर्थः—तथा जो द्रव्य कीड़ोंसे खायागया हो वा घुनोंसे खाया भया छिद्रसहित हो और गन्धरहित हो ॥ ७ ॥ और रससे भी रहित अर्थात् सूखा हो तो उस औषधको अर्कके काममें न लावै क्योंकि, जैसा द्रव्य अर्कमें पड़ैगा तैसेही पीनेवालेका शरीर अच्छा होवेगा ॥ ८ ॥ इससे हे प्रिये ! नवीन ओषधीको अर्कके काममें लेवै ।

कठिन द्रव्योंके अर्ककी विधि ।

यवान्यजाजीत्रिकटुभूनिम्बादिकमौषधम् ॥ ९ ॥
ज्ञेयं तत्कठिनं द्रव्यं तदर्कस्य विधिं शृणु ।
द्विगुणं निक्षिपेत्तोयं द्रव्ये हि कठिने प्रिये ॥ १० ॥
अष्टप्रहरकं तं च कुर्यात्पर्यायमेककम् ।
रक्षेद्द्रव्यं द्विगुणितं दृष्ट्वा देशं तु कालकम् ॥ ११ ॥
पश्चाद्दत्वाऽर्कयन्त्रे तदर्कं निष्कासयेच्छनैः ।

अर्थः—अजवायन, कालाजीरा, त्रिकटु (सोंठ–मिर्च–पीपल), भूनिम्ब (चिरायता) आदिक जो द्रव्य हैं ॥ ९ ॥ सो कठिन द्रव्य जानिये. उनके अर्ककी विधि सुनो. हे प्रिये ! कठिन औषधका अर्क निकालना हो तो उसमें द्रव्य दूना जल छोड़ देवै ॥ १० ॥ और पूर्वोक्त प्रकारसे आठ प्रहरतक सूर्यचन्द्रमाकी धूप ठण्ढ देवै; परंतु देश कालको देखकर द्विगुणित कहिये दो दिन दो रात अर्थात् १६ प्रहरतक सूर्य चंद्रके धूप ठण्ढमें धरै ॥ ११ ॥ उपरांत अर्कयंत्रमें उसको अर्कको धैर्य्यसे निकास लेवै—

आर्द्र और नीरस द्रव्योंके भेद ।

आर्द्रं द्रव्यं द्विधा प्रोक्तं सरसं नीरसं तथा ॥ १२ ॥
सदुग्धं गुप्तरसकं द्विधा नीरसमुच्यते ।
वास्तुकं सार्षपं शाकं निर्गुण्डचैरण्डमार्कवम् ॥ १३ ॥
धत्तुराद्यमिदं सर्वमार्द्रं सरसमुच्यते ।

अर्थः—और आर्द्र कहिये गीला द्रव्य दो प्रकारका है. रससहित, और नीरस ॥ १२ ॥ एक दूधसहित, दूसरा गुप्तरस कहिये रसहीनवाला, यह नीरस दोप्रकारका कहा है. वथुआ,

सरसोंका शाक, सँभालू, अरंड, भंगरा, ॥ १३ ॥ धतूरा आदि ले यह सब द्रव्य गीले रसवाले कहाते हैं—

इनका अर्क निकालनेकी विधि ।

एषां नालांश्चूर्णयित्वा विंशांशं निक्षिपेज्जलम् ॥१४॥
मुहूर्तमुष्णे संस्थाप्य ग्राह्योऽर्को विबुधोत्तमैः ।

अर्थः—इनकी नालोंका चूर्ण करके इनसे वीसवें हिस्से जलको छोड़देवै ॥ १४ ॥ मुहूर्त कहिये दो घडी धूपकी गर्मीमें रखकर, उत्तम वैद्य यंत्रसे इनका अर्क निकास लेवै ।

पत्रार्क निकालनेकी विधि ।

पत्राणि च शतांशेन तुल्यतोयेन सेचयेत् ॥ १५ ॥
दद्याद्घटीमर्ककरे ततोऽर्कं कलयेच्छनैः ।

अर्थः—और जो पत्तोंका अर्क निकालना हो तो उनसे सौवें १०० हिस्सेका जल उससे सींच देवै ॥ १५ ॥ फिर एक घड़ी सूर्यकी धूपमें रखके अर्कको खींच लेवै—

नीरसार्द्र द्रव्योंकी अर्कविधि ।

वटाश्वत्थकरीराद्यमार्द्रद्रव्यं तु नीरसम् ॥ १६ ॥
विंशांशं निक्षिपेत्तोयं यामं घर्मं च धारयेत् ।
ततो निष्कासयेदर्कं क्रमवृद्ध्यग्निनोक्तवत् ॥१७॥

अर्थः—और वड़, पीपल, बाँस ये विनारसके आर्द्र (गीले) द्रव्य हैं ॥ १६ ॥ इनमें बीसवे हिस्सेका जल छोड़ एकप्रहरतक घाममें रखदेवे फिर क्रमसे पूर्वोक्त बँधी हुई अग्निसे अर्कको निकालै ॥ १७ ॥

सदुग्ध द्रव्योंके अर्क ।

सदुग्धं तु द्विधा प्रोक्तं मृदुतीक्ष्णमिति क्रमात् ।

शातलावज्रसेहुंडशौरिण्याद्यास्तु तीक्ष्णकाः ॥१८॥
खंडानि तेषां कृत्वाऽथ निक्षिपेदुष्णके जले।
दिनत्रये तु निष्कास्य तोयं दद्याच्च कुट्टयेत् ॥१९॥
यावन्न दृश्यते दुग्धं दद्यात्तोयं दशांशकम्।
शनैर्निष्कासयेदर्कं स तु तीक्ष्णार्कसंज्ञकः ॥ २० ॥

अर्थः—और दूधसहित द्रव्य दोप्रकारका कहा है; मृदु (कोमल) और तीक्ष्ण (करी). यह क्रमसे कि शातला (शाथर), वज्र (कोकिलवृक्ष), सेहुंड (थूहर), शौरिणी (उत्तर दिशाकी प्रसिद्ध औषधि) आदि तीक्ष्णद्रव्य हैं ॥ १८ ॥ उनके खंड (टुकड़ा) करके गरम जलमें छोड़ देवे और फिर तीन दिनोंसे निकालके जल मिलाय कूटै ॥ १९ ॥ जबतक दूध देखनेसे बन्द हो फिर उसमें दशवाँ हिस्सा जल मिला देवै और अर्कको सावधानतासे धैर्यपूर्वक निकालै; वह अर्क तीक्ष्णसंज्ञक है ॥ २० ॥

मृदुदुग्ध ओषधियोंका अर्क

दुग्धिकार्कक्षिरिण्याद्या मृदुदुग्धाः प्रकिर्तिताः।
जले चतुर्गुणे दद्यात्तान् घर्मे विनिवेशयेत् ॥ २१ ॥
यावज्जलस्योष्णता स्यात्ततो यंत्रे विनिक्षिपेत्।
शनैर्निष्कासयेदर्कं ततोऽर्को मृदुसंज्ञकः ॥ २२ ॥

अर्थः—दुद्धि, आक (मदार), खिरणी आदि ये कोमल दुग्धवाले द्रव्य कहे हैं. इनको चौगुणे जलमें मिलाय घाममें रख देवै ॥ २१ ॥ जबलग जल गर्म होवे फिर यंत्रमें छोड़ देवै और धीरेसे अर्क निकाल लेवे; सो अर्क मृदु (कोमल) संज्ञक जानना ॥ २२ ॥

रसवाले आम्र आदि फलोंके अर्क ।

खण्डीकृत्वैव चाम्राणां फलानां मृदुपाकिनाम् ।
सरसानां च गृह्णीयादर्कं तोयेन वर्जितः ॥ २३ ॥

अर्थः—और नरम पकेभए सरस आम्र आदिफलोंके खंड (टुकड़ा) करके जल डालनेके विना अर्क निकालले ॥ २३ ॥

काष्ठार्क ।

काष्ठौदुम्बरिकादीनामाम्राणां दारुभागिनाम् ।
कृत्वा स्वल्पानि खण्डानि अशीत्यंशं प्रदापयेत् २४
पृथक् पृथक् चतुर्वारं स्वर्जिक्षारं च सैन्धवम् ।
दत्त्वा विमर्दयेत्सर्वं चत्वारिंशांशकं जलम् ॥ २५ ॥
क्षिप्त्वा तत्कलशे घर्मे यामार्द्धेनोष्णता भवेत् ।
ततो यंत्रे हि तद्दत्त्वा गृह्णीयादर्कमुत्तमम् ॥ २६ ॥

अर्थः—गूलर आदिकोंका गीला काष्ठ तथा आँब, देवदारू आदि काष्ठका अर्क निकालना होवै तो उनके छोटे टुकड़े करके अस्सीवाँ हिस्सा जल डालदेवै ॥ २४ ॥ फिर अलाहिदा अलाहिदा चार बार सज्जीखार, और सेंधौ छोड़के सबको अच्छेप्रकार मसल लेवे और चालीसवाँ हिस्सा जल मिलाकर उसको कलश (घड़ा) में डालके अर्ध प्रहर (४ घड़ी) तक घाममें रखदेवै; जब गर्म होजाय तब उसको यंत्रमें डालके विधिपूर्वक श्रेष्ठ अर्कको निकाल लेवै ॥ २५ ॥ २६ ॥

अत्यंत पक्क फलोंका और फूलोंका अर्क ।

अतिपक्कफलानां तु वितोयं चार्कमाहरेत् ।
पुष्पार्कार्थं षोडशांशजलं पुष्पेषु चार्पयेत् ॥२७॥

अर्थः—जो बहुत पके रसीले फल हों उनका बिना जलके अर्क निकाल ले और फूलोंका अर्क निकालनेके निमित्त फूलोंसे सोलहवाँ हिस्सा जल मिलादेवे और अर्क खींच ले ॥ २७ ॥

कायफर आदिका अर्क।

अथवा कट्फलादीनि चिल्हिकादीनि यानि च ।
प्रक्षेप्यान्युदके तानि बहुधा दोषशांतये ॥ २८ ॥
ततश्चत्वारिंशदंशं जलं दत्त्वा समाहरेत् ।

अर्थः—अथवा कायफर आदि और चीड़ आदि काष्ठका अर्क निकालना चाहे तो उनका दोष दुर्गन्धि दूर होनेके अर्थ बहुतवार जलमें छोड़ सुखावै ॥ २८ ॥ फिर चालीसवाँ हिस्सा जल डाल उसमेंसे अर्क खींच लेवै ।

द्रवद्रव्योंका अर्क।

तदर्कमथ च द्रावद्रव्यार्कोपाय उच्यते ॥ २९ ॥
द्रवद्रव्यक्षेपणे च प्रोच्यतेऽबाधकल्पना ।
पिधानानि विचित्राणि तेषामन्तो न विद्यते ॥३०॥

अर्थः—अब द्रव (गीले) द्रव्योंके अर्क खींचनेका उपाय कहते हैं ॥ २९ ॥ द्रव (गीले) द्रव्यके छोड़नेमें जो दोष कहे हैं सो पिधानादि अनेक नामके हैं उनका अन्त नहीं अर्थात् उन योगोंका बहुत विस्तार है ॥ ३० ॥

आच्छादनकी विधि।

शतपत्रप्रसूनैर्वा जात्युत्थैर्मालतीभवैः ।
पारिजातैः केतकिजैर्वा पिधानं समाचरेत् ॥३१॥

अर्थः—प्रथम पिधान कमलके फूलोंसे अथवा जाती चमे-

लीके फूलोंसे वा पारिजात (नींव) के फूलोंसे यद्वा केतकीके फूलोंसे पिधान (आच्छादन) देवै ॥ ३१ ॥

स्निग्धपदार्थोंकी आच्छादनविधि ।

दुग्धे दध्यथवा तक्रे क्षौद्रे तैले च सर्पिषि ।
मूत्रादौ देवतोये च चम्बेल्यादि पिधानकम् ।३२।

अर्थः—दूध, दही अथवा छाछमें वा शहत, तेल तथा घीमें गोमूत्रमें और सुन्दर देनेयोग्य जलमें चंबेलीके फूलोंका जो पिधान है सो देवै ॥ ३२ ॥

द्रवद्रव्योंके अर्कोंके लिये पात्र ।

कान्तयायससत्वस्य कृतं पात्रमनुत्तमम् ।
निष्कासयेदेवमर्कं द्रवद्रव्यस्य नान्यथा ॥ ३३ ॥

अर्थः—और कान्तिसार, लोहसत, पाषाणसतसे मिलाय उत्तम पात्र बनावे. एवं द्रव (गीले) द्रव्यका अर्क निकाले इससे अन्यथा नहीं निकालना ॥ ३३ ॥

द्रवद्रव्योंके स्तंभक द्रव्य ।

अथ च स्तम्भकं द्रव्यं दध्नो हि नवनीतकम् ।
दृढबिल्वो जलस्योक्तो मधूच्छिष्टं तु सर्पिषः ।३४।
गोकण्टकस्तु दुग्धस्य तथा मद्यस्य कीत्रकम् ।
तैलस्य तस्य पिण्याकं सर्वं घृतसमन्वितम् ॥३५॥

अर्थः—अब गीले द्रव्योंके स्तम्भक यानी रोकनेवाले द्रव्य कहते हैं कि–दहीका स्तम्भक (रोकनेवाला) माखन है, जलका स्तम्भक दृढ़बिल्व (बेलगिरी) है, और घीका स्तम्भक शहत ॥ ३४ ॥ दुग्धका स्तम्भक गोकंट (गोखरू) तथा

मद्य (मदिरा) का स्तम्भक कीचक (बाँसका सार) है. यह स्तंभनौषधि पिधानयोगके लिये कही गई हैं और योग्य वस्तु बुद्धिसे जान लेवै. तैलका स्तंभक पिण्याक (खल) जानिये ये सारी वस्तुयें घीके साथ यंत्रमें रक्खै ॥ ३५ ॥

द्रवद्रव्योंके अर्ककी विधि।

यंत्रे दत्त्वा द्रवद्रव्यं यथा स्थालीनिवेशनम् ।
तथा स्थलं स्थापयित्वा द्रव्यैर्यंत्रं प्रपूरयेत् ॥ ३६ ॥
आच्छाद्यं सारिकैः पूर्णं स्थालीं कुर्यादधोमुखीम् ।
तथा चाकर्षितः सर्वो द्रवः फेनं परित्यजेत् ॥ ३७ ॥

अर्थः—और यंत्रमें गीले द्रव्यको रखकर यथायोग्य थालीमें धरै जिसमें पतला होके वहै नहीं, ऐसीथालीमें रख सब चीजोंसे यंत्रको पूर्ण कर देवे ॥ ३६ ॥ फिर उसके सारिका (किनारे) से पूर्ण आच्छादित करदे अर्थात् जोड़ अच्छे प्रकार बंद कर दे और औंधी थालीसे बंध कर खाम लगादे. इसप्रकार ऐसेही सब द्रवद्रव्य खीचैं. जब फेन (झारा) छोड़ै तो श्रेष्ठ अर्क जानना ॥ ३७ ॥

अर्कोंका दुर्गंधनाशन ।

दुर्गंधियों भवेदर्कस्तं कुर्याच्चारुगन्धकम् ।
सर्वेषामेव मांसानां दुर्गन्धानां च सर्वशः ॥ ३८ ॥
घृताभ्यक्ता हिङ्गुजीरमेथिकाराजिकाकृताः ।
नवीनायां हण्डिकायां दद्याद्धूपं पुनः पुनः ॥ ३९ ॥
तत्र दद्यात्तदर्कं तु यथा दुर्गन्धता व्रजेत् ।
तथा पुनः पुनः कार्यं जायते गन्धवारणम् ॥ ४० ॥
आयाति रोचको गन्धो स भवेद्वह्निदीपनः ।

अर्थः—दुर्गन्धिवाले मांसादिक द्रव्यका जो अर्क दुर्गंधयुक्त होवे तो उसको सुगंधियुक्त ऐसे करलेवै कि ॥ ३८ ॥ उनमें घी मिला भया हींग, जीरा, मेथी, राई भुनीभई लेके नवीन हाँड़ीमें रख वारंवार धूनी देवे ॥ ३९ ॥ तो अर्कमें जितनी दुर्गंधता होवे उतनी सब वारवार धूनी देनेसे वह दूर होजावे ॥ ४० ॥ और सुंदर सुगंधवाला द्रव्य होजाय तो वह द्रव्य जठराग्निको दीपन करनेवाला हो जाता है।

अर्कको गंधककी वासना देना।

सर्वेष्वर्कप्रयोगेषु गन्धपाषाणवासना ॥ ४१ ॥
अर्काणां तु प्रदातव्या ते भवन्त्यर्कसम्भवाः।

अर्थः—सब अर्कप्रयोगोंमें गंधपाषाण (गंधक) की वासना (सहाय) देना । ४१ ॥ क्योंकि अर्कोंको वासना देनेसे श्रेष्ठ अर्क होजाते हैं।

वात आदि दोषशमनके अर्थ अर्कोंको पृथक्पदार्थोंकी वासना।

सर्वत्र वातरोगेषु महिषाक्षादिवासना ॥ ४२ ॥
महिषाक्षस्तथा रालं निर्यासः सरलस्य च।
कृष्णागुरुलवङ्गं च महिषाक्षादिपञ्चकम् ॥ ४३ ॥
सर्वेषु पित्तरोगेषु चन्दनादि च वासनम्।
सर्वेषु कफरोगेषु जटामांस्यादि वासनम् ॥ ४४ ॥

अर्थः—और बहुत करके सब वातरोगोंमें महिषाक्ष (भैंसहागूगल) की वासना देनी चाहिये ॥ ४२ ॥ सो कहते हैं कि-महिषाक्ष, राल तथा निर्यास, सहल, कृष्णागरु (काला

अगर.) और लवंग (लौंग) यह महिषाक्षादिपंचक कहाता है ॥ ४३ ॥ सब प्रकारके पित्तरोगोंमें चंदनादि वासना देनी चाहिये और सब कफके रोगोंमें जटामांसी आदिकी वासना देना ॥ ४४ ॥

चन्दनादि वासना।

चन्दनं च तथोशीरं कर्पूरो गन्धबाकुची।
एला कचूरिणी धूली सप्तैते चन्दनादयः ॥ ४५ ॥

अर्थः—अब चन्दनादि वासना कहते हैं कि–१ चंदन २ उशीर (खस), ३ कपूर, ४ गंधबकुची, ५ एला (इलायची), ६ कचूर, और ७ धूली (धमासा) यह सातों चन्दनादि वासनाका गण है ॥ ४५ ॥

जटामांस्यादि वासना।

जटामांसी नखं पत्री लवङ्गं तगरं रसः।
शिलया गन्धपाषाणः सप्त मांस्यादिका अमी।४६।

अर्थः—अब द्वादशांग धूप कहते हैं–१ जटामासी, २ नखी, ३ पत्रक, ४ लौंग, ५ तगर, ६ रसकपूर, ७ गंधक यह जटामांस्यादि वासनाका गण है ॥ ४६ ॥

त्रिदोषनाशक धूप।

वासयेद्द्वादशाङ्गेन त्रिदोषघ्नेन चार्ककम्।
नश्यन्ति यस्य धूपेन उपग्रहपिशाचकाः ॥ ४७ ॥

अर्थः—तीनों दोषों (वात पित्त कफों)को नाश करनेहारी द्वादशांग धूपसे अर्कोंको सुगंधित करै, जिस धूपकी धूनीसे उपग्रह (पूतना भूतादि) और पिशाच सब नष्ट होते हैं ॥४७॥

दशांग धूप।

पञ्चांशो गन्धपाषाणस्तावन्महिषगुग्गुलुः ।
चतुरंशं चन्दनं च जटामांसी च तावती ॥ ४८ ॥
त्रिभागः सर्जकः क्षारस्तावदेव हि रालकम् ।
उशीरं च द्विभागं स्याद्घृतमष्टनखं समम् ॥ ४९ ॥
कर्पूरो मृगनाभिस्तु ह्येकभागौ प्रकीर्तितौ ।
एषो दशाङ्गधूपस्तु रुद्रस्याऽपि मनो हरेत् ॥ ५० ॥

अर्थः—अब दशांग धूप कहते हैं कि-पांच भाग गंधक, उतनाही भैंसहा गूगल, चार भाग चंदन, उतनीही जटामासी, ॥ ४८ ॥ तीन भाग सज्जीखार, उतनीही राल, दो भाग उशीर (खस), और अट्ठाइस भाग घी ॥ ४९ ॥ कपूर व कस्तूरी एक एक भाग, यह दशांग धूप महादेवजीके भी मनको हरनेवाला है ॥ ५० ॥

प्याज और लहसनका अर्क।

पलाण्डुलशुनादीनां निर्गन्धीकरणं शृणु ।
उत्पाद्यान्तर्विषं सम्यक् तक्रमध्ये विनिःक्षिपेत् ५१
पर्यायमेकमत्यम्ले मध्येऽस्मिन्विरसे सति ।
दद्यान्निष्कास्यान्यतक्रं कुर्यात्तच्चाष्टयामकम् ॥५२॥
द्रोणीपुष्परसेष्वेव मूर्वापत्ररसेऽपि वा ।
त्रिपर्यायोत्तरं तत्तु रसोनं क्षालयेत्सुधीः ॥ ५३ ॥
हरिद्राराजिकातोये स्थाप्यं पर्यायमेककम् ।
उष्णोदकेन संक्षाल्यं पर्यायं वासयेत्ततः ॥ ५४ ॥

सहस्रपत्रैः पुष्पैर्वा अभावे पल्लवैरपि ।
आलोडयेद्दशांशेन पंचांशेन च वासना ॥ ५५ ॥
युक्तं कृत्वा याममात्रं स्थापयेत्प्रकटातपे ।
ततो निष्कासयेदर्कं जात्यादिकपिधानकम् ॥५६॥
तस्यार्कस्य सुगंधेन एकदा मोहितो हरः ।
को जानाति रसोनस्य ह्यर्कोऽयमिति भूतले॥५७॥

अर्थः—अब पलांडु (प्याज), लहसन आदिकोंकी दुर्गंधि दूर करना कहते हैं–हे प्यारी पार्वती ! तू श्रवण कर कि, प्याज और लहसनके भीतरका विष (गूदा) निकालकर फिर उसे तक्र (छाछ) में डाल देवै ॥ ५१ ॥ सो इस प्रकार कि, अतिही खट्टी छाछमें डालै, जब विरस होजावे तब निकालके सुखावे सूखेपर फिर छाछहीमें आठ प्रहर रक्खै ॥ ५२ ॥ फिर निकालके द्रोणी (नील) के फूलके रसमें, अथवा मुरहरके पत्तेके रसमें तीन तीन वार प्याज और लहसनको धोवै इस प्रकार बुद्धिमान् जन धोवै ॥ ५३ ॥ फिर एकवार हलदी और राईके जलमें राखै फिर उसको गर्म जलमें रक्खै और उसी गर्मजलमें धो करके फिर धूनी देवे ॥ ५४ ॥ सहस्रपत्र कहिये कमलके पुष्पोंसे अथवा पत्तोंसे ही धूनी देवे फिर उसके दशांश धूपकी धूनी देवे, पञ्चांशसे वासना देव ॥ ५५ ॥ फिर एक प्रहरतक तीक्ष्ण धूपमें रख देवे और उसमें चबेलीका पिधान देकर अर्क निकाल लेवे ॥ ५६ ॥ उस अर्कको सुगंध करके एकवार श्रीमहादेवजी भी मोहित होगये थे. कौन जानै कि यह लहसनका अर्क है ? ऐसा यह अर्क पृथ्वीमें सुगन्धियुक्त होवे ॥ ५७ ॥

मांसके अर्ककी प्रशंसा ।

एकतः सर्व एवार्का मांसार्कस्तु तथैकतः ।
मया स्वर्गो गृहीतस्तु प्राप्तं तत्र मयाऽमृतम्॥५८॥

तदा प्रोक्तं शिवस्याग्रे मम धिग्जीवनं प्रभो ।
नीता वाथ प्रयुक्ता वा सुधा देवैर्मया तु सा ॥५९॥
न दृष्टा तत्र देवेश शिरश्छेदं करोम्यहम् ।
ततः प्रसन्नो गिरिशो वाक्यं मां प्रति सोऽब्रवीत्॥६०॥
दत्तं मया समस्तं ते देवावध्यत्वमेवच ।
किं ते कार्यं तु सुधया सुधातोऽधिकरोचनम् ॥६१॥
सम्प्रवक्ष्यामि मांसार्कं मद्यस्यार्कं तथैव च ।
द्रव्याणां विजयादीनां लभ्यते यैः सुखं महत् ॥६२॥

अर्थः—एक ओर सब अर्क हैं और एक ओर मांसार्क है. मैंने स्वर्गको जीत लिया और मुझको अमृत प्राप्त भया ॥ ५८ ॥ उस अमृतको देवता चुरा लेगये तब सिवजीके आगे मैंने कहा कि—हे प्रभो ? मेरे जीवनको धिक्कार है, क्योंकि हमारा लाया भया अमृत था सो देवताओंने लेजाके काममें प्रयुक्त किया ॥ ५९ ॥ जहां अमृत मैंने रक्खा था वहाँ नहीं देखकर हे शिवजी ! मैं अपना शिर छेदन करता हूँ. तब महादेवजी प्रसन्न होकर मुझसे यह वाक्य बोले ॥ ६० ॥ कि, हमने तुमको सब देवताओंसे अवध्य वरदान दिया. अर्थात् तुम किसीसे हारोगे नहीं, मरोगे भी नहीं और सब देवता तुम्हारे वशमें रहैंगे. तुम अमृतसें भी अधिक रोचक मांस और मद्यका अर्क अच्छे-प्रकार करता हूँ; जिससे सब धनादिकोंका और विजय आदि-कोंका सुख बहुतही प्रात होवै सो सुन ॥ ६१ ॥ ६२ ॥

मांसके भेद ।

मांसं तु त्रिविधं ज्ञेयं मृदुलं कठिनं घनम् ।
तेषामर्कं यथा प्रोक्तं यंत्रान्निष्कासयेच्छनैः ॥ ६३ ॥

अर्थः—मांस तीन प्रकारका जानिये. १ मृदुल (कोमल), २ कठिन (कर्रा), ३ घन (गाढ़ा). उनका अर्क जैसा कहा गया है वैसेही यंत्रसे धैर्यसे निकाल लेवै ॥ ६३ ॥

कोमलमांसका अर्क अष्टगंधसहित।

मृदुलं यद्भवेन्मांसं चत्वारिंशांशकं पटुः ।
स्थूलखण्डीकृते तस्मिन्दत्त्वा तत्क्षालयेज्जलैः ॥६४॥
षष्ट्यंशेनाष्टगन्धेन तद्विलोड्य च निःक्षिपेत् ।
रसमिक्षोरष्टमांशं तदभावे पयः क्षिपेत् ॥ ६५ ॥
जातीपत्रं लवंगं च त्वगेलानागकेशरम् ।
मरीचं मृगनाभिश्च विदुर्गन्धाष्टकं त्विदम् ॥ ६६ ॥
कार्यं पुष्पपिधानाद्यमर्कं निष्कासयेत्ततः ।
जायतेऽसौ महास्वादुः सुधारससमः प्रिये ॥६७॥

अर्थः—जो मांस कोमल होवै उसके चालीस भाग लेवे ओर बड़े बड़े टुकड़े करके जलसे उन टुकड़ोंको धोवै ॥ ६४ ॥ और उससे साठवाँ हिस्सा अष्टगंध लेके उसमें डाले और मिला देवै, फिर उसमें आठवाँ हिस्सा ईखका रस छोड़ दे ईखका रस न हो तो इसके अभावमें दुग्ध डाल देवै ॥ ६५ ॥ अब अष्टगंध कहते हैं- १ जायफल, २ लौंग, ३ तज, ४ इलायची ५ नागकेशर, ६ मरिच, ७ कस्तूरी, और ८ कपूर यह अष्टगंध जानिये ॥ ६६ ॥ उसमें फूल आदिकोंका पिधान देकरके फिर अर्क निकाल लेवे. हे प्रिये ? सो अर्क बहुत मधुर अमृतके समान होता है ॥ ६७ ॥

कठिन मांसका अर्क।

दृढमांसस्य खंडानि लघून्येव प्रकल्पयेत् ।
दद्याच्च तुवरं तत्र लवणं प्रोक्तया दिशा ॥ ६८ ॥

क्षालयेदारनालेन त्रिवारं कोष्णवारिणा ।
क्षालयेत्सप्तवाराणि हरेदर्कं तु पूर्ववत् ॥ ६९ ॥

अर्थः—और जो मांस कड़ा होवे उसके छोटेही टुकड़े करै फिर उसमें तुवर (खारी) लवण छोड़ै और आरनाल (काँजी) से तीनवार धोवै फिर गर्मजलसे सातवार धोवै और पहले कहे अनुकूल यंत्रमें रखकर, धीरेसे अर्क निकाल लेवै ॥ ६८॥६९ ॥

घन मांसका अर्क ।

घनमांसस्य खंडानि कुर्यादतिलघूनि च ।
आलोड्य शंखद्रावेण क्षालयेत्पयसा पुनः ॥७०॥
सप्तवाराणि लवणं क्षालयेद्वासयेत्पुनः ।
तद्दत्त्वा यंत्रमध्ये तु हरेत्पूर्ववदर्ककम् ॥ ७१ ॥

अर्थः—घन (गाढ़े) मांसके बहुत छोटे २ खंड़ करै और उसमें शंखद्राव डालकर हिलावै फिर जलसे धोवै और फिर सात वार लवण छोड़ जलसे धोवै फिर उसको यंत्रके बीच रखकर पूर्व कहे क्रमसे अर्क खींच लेवै ॥ ७० ॥ ७१ ॥

शंखद्रावकरणविधि ।

स्वर्जिक्षारं यवक्षारं श्वेतक्षारं च टङ्कणम् ।
सौभाग्यक्षारकं सौरं क्षारं शंखभवं तथा ॥ ७२ ॥
अर्कसेहुण्डपालाशक्षारश्च तुवरी तथा ।
अपामार्गभवं क्षारं तथाऽष्टौ लवणानि च ॥ ७३ ॥
लवणाष्टकमेतच्च सैन्धवं च सुवर्चलम् ।
विडं समुद्रसञ्जातमुद्भिदं रोमकं गडम् ॥ ७४ ॥

कृत्वा सर्वाणि चैकत्र निम्बुनीरेण भावयेत् ।
एकविंशतिवाराणि काचकूप्यां निवेशयेत् ॥७५॥
नखांशनिम्बुकरसैः सर्वमार्द्रीकृतं तु तत् ।
अधः सच्छिद्रपिठरीमध्ये कूपीं निवेशयेत् ॥७६॥
मृत्कर्पटसमायुक्तं सहेदग्निं यथावधि ।
तस्याग्रे कूपिका योज्या दीर्घकण्ठा मनोहरा॥७७॥
सा कूपिका जले स्थाप्या मेलयेच्च द्वयोर्मुखम् ।
जलमुष्णं यथा न स्याद्यथा वोपरि कूपिका ॥७८॥
अग्नयः क्रमतो देयास्तथा यामं च पञ्चमम् ।
अनेनैव प्रकारेण क्षारार्काणां समुद्भवः ॥ ७९ ॥

अर्थः—अब शंखद्राव कैसा बनाना सो कहते हैं—सज्जी, जवाखार, सपेदखार, सोहागा, (इसीको सौभाग्यक्षार कहते हैं.) सोर (सोरा), शंखक्षार, ॥७२॥ आँक, थूहर और ढांक इनकी खार तथा तुवरी (खार), ओंगवा चिर्चीराकी खार, तैसेही आठों लवण ॥७३॥ सो आठ लवण ये हैं कि-१ सेंधो, २ सोवर्चल (सोंचर लवण,) ३ विडलवण, ४ सामुद्रलवण, ५ उद्भिदलवण, ६ रोमकी खानका लवण, ७ गड़, और ८ खारी ॥ ७४ ॥ इन सब लवणोंको एकत्र कर नींबूके रसमें इक्कीस वार भावना देवे (वारवार भिगोवै) काँचकी कुप्पी (बोतल) में रख देवै ॥ ७५ ॥ फिर बीसवें हिस्से नींबूके रससे भिगोके सब गीलेहीको नीचे छिद्रवाली पिठरी अँगीठी) में बोतलको रख देवै ॥ ७६ ॥ फिर थोड़ीसी हलकी कपड़मिट्टी करै जिससे फूटने न पावे और अग्नि भी सह लेय. फिर उसके नीचे कूपिका (अर्क लेनेका पात्र) छोटे मुख और लंबे कंठका सुंदर लेवे ॥ ७७ ॥ उसको जलमें रख, दोनोंका मुख

मिलादेवै, और जैसे बोतलकी गर्मीसे ऊपरकी कुप्पीका जल उष्ण (गर्म) न होवे वैसेही ॥ ७८ ॥ क्रमसे पाँच प्रहर अग्निकी आँच देवै इसही प्रकारसे खारोंके अर्कोंकी उत्पत्ति है अर्थात् इस प्रकार क्षारार्क निकलता है ॥ ७९ ॥

सिद्धहुए शंखद्रावकी परीक्षा।

दद्यादस्थीनि मांसानि शंखशुक्त्यादिकान्यपि ।
सर्वाण्यपि विलीयन्ते शंखद्रावे न संशयः ॥ ८० ॥

अर्थः—इस शंखद्राव अर्कमें अस्थि (हाड़), मांस, शंख, सीपी आदि कुछ भी गिर पड़ै तो निस्सन्देह सब गलकरके जलके समान हो जावैंगे ॥ ८० ॥

कोमल और कठिन मांसके जीव।

पारावताश्च चटकाः शशसूकरटिट्टिभाः ।
क्षुद्रमत्स्यादिकाः सर्वे मांसेषु मृदुलाः स्मृताः।८१।
मृगरोहितकाद्याश्च मत्स्याः शल्लकिशम्बराः ।
एते कठिनमांसाः स्युर्जीवास्तु जलचारिणः ॥८२॥

अर्थः—अब सब मांसोंमें जो कोमल जीव उनके नाम कहते हैं—कबूतर, बटेर, व गँगैया, शश, (खगोश) शूकर (सुवर), टिट्टिभ (टिटहरीपक्षी), और छोटी मछरी आदिक ये सब मांसोंमें कोमलमांसवाले जीव कहे हैं ॥८१॥ अब कठिन मांसवाले कहते हैं कि—मृग (हिरण) रोहितक आदि जो कहाते हैं, और शल्लकि शंबर आदि मछली और जलचारी जीव ये कठिन मांसवाले जीव हैं ॥ ८२ ॥

गाढ़ मांसके जीव।

गजकुंभीरघण्टाद्याः सगन्धाः कर्करादयः ।
गोधागोश्वल्लुलायाद्या घनमांसाः प्रकीर्तिताः।८३।

अर्थः—अब घन (गाढ़े) मांसवाले जीव कहते हैं-हाथी, कुंभीर (नाका) घडियाल आदि, गन्धियुक्त कर्कर (पक्षि-विशेष) आदि, गोधा (गोहं), गौ, कुत्ता, भैंसा आदि ये घनमांसवाले जीव कहाते हैं ॥ ८३ ॥

अन्नादिकोंका अर्क (मद्य)।

अन्नादिसम्भवो योऽर्कस्तन्मद्यं परिकीर्तितम् ।
तस्य भेदान्प्रवक्ष्यामि सटितात्तत्समुद्धरेत् ॥८४॥

अर्थः—अब मद्य (मदिरा) का भेद कहते हैं कि-अन्नादिसे विधिपूर्वक खींचा भया जो अर्क उसको मद्य कहते हैं. उसका अर्क पतले भये हो, उनमेंसे निकालै ॥ ८४ ॥

मद्यके दुर्गन्धका दूरीकरण।

तद्वासनानिवृत्त्यर्थमष्टगन्धं प्रयोजयेत् ।
पूर्वोक्तैर्धूपयेद्धूपैर्जायते गन्धवर्जितम् ॥ ८५ ॥

अर्थः—और उसकी वासना दूर करनेके अर्थ उसमें अष्टगंध डालदे पूर्वोक्त धूपोंकी धुनी देनेसे दुर्गंध दूर हो जाती है८५

तुषोदक मद्य ।

अर्द्धं तत्र जलं देयं सिद्धे देयोऽष्टगन्धकः ।
तुषोदकं यवैरामैः सतुषैः शकलीकृतैः ॥ ८६ ॥

अर्थः—फिर उसमें आधा जल देवै तैयार होनेपर अष्टगंध मिला देनेसे श्रेष्ठ होजाता है और कच्चे यवोंको भूसीसमेत लेके कूटै फिर यंत्रमें रख, अर्क खींचनेसे तुषोदकनाम मद्य कहलाता है ॥ ८६ ॥

सौवीरमद्य ।

सौवीरं तु यवैश्चैवं निस्तुषैःशकलीकृतैः ।
गोधूमैरपि सौवीरं जायते स्वल्पमादकम् ॥ ८७ ॥

अर्थः—यवोंके छिलके हटाकर यंत्रमें रख अर्क खींचनेसे सौवीरनाम मद्य कहिये. गेहुओंसे भी निकाला मद्य सौवीर कहलाता है और थोड़े नशेवाला होता है ॥ ८७ ॥

आरनाल और धान्याम्ल मद्य ।

आरनालं तु गोधूमैरामैः स्यान्निस्तुषीकृतैः ।
धान्याम्लं शालिचूर्णादि कोद्रवादिकृतं भवेत् ॥८८॥

अर्थः—कच्चे गेहुओंके छिलके उतारकर; यंत्रमें रख खींचनेसे आरनालनाम मद्य कहिये. और शालि (चावल) आदिका चूर्ण और कोदों आदिसे खींचा हुआ मद्य धान्याम्ल कहता है ॥

शण्डाकीमद्य ।

शण्डाकी राजिकायुक्तैः स्यान्मूलकदलद्रवैः ।
सर्षपस्वरसैर्वापि शालिपिष्टिकसंयुतैः ॥ ८९ ॥

अर्थः—राई मूलीके पत्तोंसहित करके अथवा सरसोंके रसका भी चावलकी पिट्ठीके साथ खींचनेसे शंडाकी नाम मद्य होता है ॥ ८९ ॥

सूक्तनाममद्य ।

कंदमूलफलादींश्च सस्नेहलवणानि च ।
एकीकृतस्तु योऽर्कः स्यात्स सूक्तमभिधीयते ॥९०॥

अर्थः—मूल, फल आदि स्नेह (चिकनाई) और लवणसहित एकमें मिलाय जो अर्क निकाला जावै सो सूक्तनाम मद्य कहा जाता है ॥ ९० ॥

अरिष्टमद्य ।

पक्वौषधाम्बुसंसिद्धो योऽर्कः स स्यादरिष्टकम् ।
अरिष्टं लघुपाकेन सर्वतो हि गुणाधिकम् ॥ ९१ ॥

अर्थः—और पकीहुई औषध और जलसे सिद्ध किया हुआ जो अर्क है उसको अरिष्ट कहते हैं. अरिष्ट नाम मद्य हलके पाक करके खींचा जावे तो सबके अधिक गुणवाला होवै ॥ ९१ ॥

सुरा और वारुणीनामवाला मद्य ।

शालिपेठकपिष्ट्यादि कृतो योर्कः सुरा तु सा ।
पुनर्नवा शिवापिष्टैर्विहिता वारुणी स्मृता ॥ ९२ ॥

अर्थः—शालि (चावल) पेठा आदि की पिट्ठीसे जो सिद्ध किया हुआ अर्क है सो सुरा नाम मद्य कहिये, और पुनर्नवा (साँठी) शिवा (हड़) की पिट्ठीसे जो सिद्ध हो तो वारुणी कहिये ॥ ९२ ॥

सीधु और शीतरसनाम मद्य ।

इक्षोः पक्वै रसैः सिद्धः सीधुः पक्वरसश्च सः ।
आमैस्तैरेव यः सिद्धः स च शीतरसः स्मृतः ॥९३॥

अर्थः—और ईखके पके रससे सिद्ध हुई जो हो सो सीधु तथा पक्का रसवाला कहाता है और कच्चे रससे खींचा हो वह शीतरस कहाता है ॥ ९३ ॥

राजस और सात्विक मद्य ।

पर्यायाद्यो भवेन्मद्यस्तामसो राक्षसप्रियः ।
मण्डादी राजसो ज्ञेयस्ततो वै सात्विको भवेत् ।९४।

अर्थः—और जो मद्य कई वार खींचा जाय वह तामस नाम

मद्य राक्षसोंको प्रिय होता है तथा जो मंडआदि है सो राजसी है सो जानना, और जो उससेभी कम होवै अर्थात् जिससे स्वरूपको न भूलै (नशा न आवै) वह मद्य सात्विक है॥९४॥

सात्विकादि मद्य पीनेका समय।

सात्विकं गीतहास्यादौ राजसं साहसादिके ।
तामसे निन्द्यकर्माणि निद्रां च बहुधा चरेत् ।९५।

अर्थः—सात्विकको गीतहास्यादिमें ग्रहण करै, और राजस साहस (पराक्रम) के कर्मोंमें ग्रहण करै, और तामस मद्यको पीकर, निन्दित कर्म करै और बहुधा निद्राको लेवै ॥ ९५ ॥

वारुणीमद्यके भेद।

पुनर्नवाशिलापिष्टैर्विहिता वारुणी च सा ।
संहितैस्तालखर्जूररसैर्या सा च वारुणी ॥ ९६ ॥

अर्थः—पुनर्नवाको पत्थरपर पीसनेसे जो मद्य बनता है उसे वारुणी कहते हैं और ताड व खजूरके रससे जो मद्य बनता है उसे भी वारुणी कहते हैं ॥ ९६ ॥

वारुणीमद्यके गुण।

सुरावद्वारुणी लघ्वी पीनसाध्मानशूलनुत् ।
ग्राहिणी शोथगुल्मार्शोग्रहणीमूत्रकृच्छ्रजित् ॥९७॥

अर्थः—वारुणीमद्यके गुण सुराके समान हैं; परंतु विशेष-गुण ये हैं कि–यह हलकी है और पीनस, पेट फूलना, शूल, सूजन, गुल्म, बवासीर, संग्रहणी और मूत्रका अवरोध इन रोगोंको नष्ट कर देती है ॥ ९७ ॥

नशावाले द्रव्योंका अर्क।

भंगादिमत्तद्रव्याणां यवानीपादयोगतः ।
अर्कं निष्कासयेद्धीमान् बोधकः स्यान्मदस्य सः ९८

अर्थः—भाँग आदि मत्त (मतवाले) करनेवाले द्रव्योंमें चौथा हिस्सा अजवायनका योग देके बुद्धिमान् जन उन औषधोंमेंसे अर्क निकालै सो नशा बढ़ानेवाला होता है ॥ ९८ ॥

धतूर आदिके मादक बीजोंका अर्क।

धतूरादिकबीजानि क्षिप्त्वा पयसि धापयेत् ।
कण्ठशोषविबंधादिरहितोऽर्को भवेत्स हि ॥ ९९ ॥

इति श्रीरावणकृतार्कप्रकाशे द्वितीयं शतकम् ॥२॥

अर्थः—धतूरा आदिके बीजोंको जलमें डालकर धोवै फिर अर्क निकालै तो वह अर्क कण्ठको न सुखानेवाला अर्थात् कण्ठशोषके विबंधसे रहित होता है ॥ ९९ ॥ ऐसे इस रावणकृत अर्कप्रकाशमें यंत्रद्वारा अर्क निकालनेका दूसरा शतक समाप्त भया ॥ २ ॥

इति श्रीमत्पण्डितनारायणप्रसादकृतभाषाऽर्कप्रकाशे
द्वितीयं शतकम् ॥ २ ॥

अथ तृतीयं शतकम् ३।

रावण उवाच।

अथातः संप्रवक्ष्यामि केवलार्कगुणान् प्रिये ।

अर्थः—रावण बोला कि–हे प्रिये! अब मैं तुझसे केवल अर्कहीके गुण वर्णन करता हूँ सो सुन—

हड़के अर्कके गुण ।

हरीतक्याः शूलकृच्छ्रकामलानाहनाशनः ॥ १ ॥

अर्थः—तहाँ प्रथम हड़के अर्कके गुण कहता हूँ, कि–हरीतकी (हड़) का अर्क शूल (दर्द), कृच्छ्र (कठिन पीड़ा), कामला और पांडु इन रोगोंको नाश करनेवाला है ॥ १ ॥

बहेड़ा और आंवलेके अर्कके गुण ।

बिभीतकस्य तृट्छर्दिकफकासविनाशनः ।
आमलस्य त्रिदोषास्रपित्तमेहान्विनाशयेत् ॥ २ ॥

अर्थः—और विभीतक (बहेड़े) का अर्क तृषाको, छर्दि (वमन) को कफ और खाँसीको नाश करनेवाला है, आँवलेका अर्क तीनों दोषोंको तथा रक्तविकारको, पित्तको मेह कहिये धातुक्षीणताको दूर करता है ॥ २ ॥

सोंठ और अदरखके अर्कके गुण ।

शुण्ठ्या विबन्धाऽऽमवातशूलश्वासबलासहृत् ।
आर्द्रकस्य ज्वरं दाहं हरेद्वच्योऽग्निदीप्तिकृत् ॥ ३ ॥

अर्थः—सोंठका अर्क विबंध (रुकावट) को, आमवात रोगको, शूल (दर्द) को, श्वासको और कफको नष्ट करता है. अदरखका अर्क ज्वर और दाहको दूर करता है और जठराग्निको दीप्त (तेज) करता है ॥ ३ ॥

पीपल और मिर्चके अर्कके गुण ।

पिप्पल्याः श्वासकासामवातार्शोज्वरशूलहृत् ।
मरिचस्य श्वासकृमीन् हरेत्सर्वान् गदानपि ॥ ४ ॥

अर्थः—पीपलका अर्क श्वास, खाँसी, आमवात, बवासीर

ज्वर और शूल (पीडा) को हरता है. मिर्चका अर्क श्वास और कीड़ोंको तथा सब रोगोंको भी नाश करता है ॥ ४ ॥

पीपलामूल और चव्यके अर्कके गुण।

ग्रन्थिकस्य प्लीहगुल्मकफवातोदरापहः ।
चव्यार्कोत्थं तु रुचिकृत् विशेषाद्गुदजापहः ॥ ५ ॥

अर्थः—ग्रन्थिक (पिपलामूल) का अर्क, प्लीहे[1] (गांठ) रोगको, गुल्मे[2]को, कफको, वातरोगको, उदररोगको दूर करता है. चव्य (चविका) का अर्क रुचि करता है और विशेष-करके गुदाके मस्सोंको दूर करता है ॥ ५ ॥

बड़ी पीपल और चित्रकके अर्कके गुण।

अर्कस्तु गजपिप्पल्या वातश्लेष्माग्निमांद्यहृत् ।
चित्रकस्याग्निकृत्कासग्रहणीकृमिनाशनः ॥ ६ ॥

अर्थः—और बड़ी पीपलका अर्क वातविकार, कफरोग और मन्दाग्निको नाश करता है. चित्रकका अर्क जठराग्नि बढ़ाता है, और कास (खाँसी) और संग्रहणी, तथा कृमिरोगका नाश करता है ॥ ६ ॥

अजवायन और अजमोदार्कके गुण।

यवान्याः पाचनो रुच्यो दीपनस्त्रिकशूलहृत् ।
अजमोदोद्भवो वातकफहा बस्तिशोधनः ॥ ७ ॥

अर्थः—अजवायनका अर्क पाचन है और रुचि बढ़ाता है अग्निको दीप्त करता है, कटिके दर्दका नाश करता है. अजमोदका अर्क वात कफको हरता है, बस्तिस्थानको शुद्ध करता है ॥७॥

---

१ प्लीह बाईं पसलीकी गाँठको कहते हैं. २ गुल्म गाँठमात्रको कहते हैं.

खुरासानी अजवायनके अर्कके गुण।

पारसीकयवान्यास्तु ग्राही पाचनमादनः।

अर्थः—खुरासानी अजवायनका अर्क, ग्राही (भोजनको ठहराता) है, पाचन (पचानेवाला) है, मादन (नाश करनेवाला) है.

जीरेके अर्कके गुण।

जीरकस्य तु संग्राही गर्भाशयविशुद्धिकृत् ॥८॥

अर्थः—जीरेका अर्क भोजनादिको एकत्र रखता है, गर्भाशय (कोष्ठ) को शुद्ध करता है ॥ ८ ॥

काला जीरा और कलौंजीके गुण।

कृष्णाजीरस्य चक्षुष्यो गुल्मछर्द्यतिसारजित्।

कारव्या बलकृद्दोष्यो ज्वरघ्नः पाचनो रसः ॥९॥

अर्थः—काले जीरेका अर्क नेत्रोंको गुणकारी है और गुल्म (गांठ) छर्दि (वमन), अतिसार (दस्तोंके रोग) को जीतता है. कारव्या (कलौंजी) का अर्क बल करता है, दोष प्रगट करता है, ज्वरको नाश करता और पाचन (पचाता) है तथा रस बढाता है ॥ ९ ॥

धनियां और सौंफके अर्कके गुण।

धान्यकस्य तृषादाहवमिश्वासत्रिदोषहृत्।

मिश्या ज्वरानिलश्लेष्मव्रणशूलाक्षिरोगहृत् ॥१०॥

अर्थः—धनियाँका अर्क तृषा, दाह, वमि (उबकाई), और साँस, त्रिदोष (वातपित्तकफ) को करता है. (सौंफ) का अर्क ज्वर, वात, कफ, फोड़ा, शूल और नेत्ररोगको हरता है ॥ १० ॥

सोयेके अर्कके गुण ।

मिश्रेयाया वह्निमान्द्ययोनिशूलकृमीन् हरेत् ।

अर्थः—मिश्रेया नामकी सौंफका अर्क मंदाग्नि और योनि-रोग तथा कृमिरोगोंको हरता है—

लालमिरचके अर्कके गुण ।

ज्वालाकस्य ह्यपस्मारभूतप्रेतत्रिदोषहृत् ॥ ११ ॥

अर्थः—ज्वालाक (मिर्चसमान) का अर्क अपस्मार (मृगी) और भूत प्रेत त्रिदोष व ज्वरको नाश करता है ॥ ११ ॥

मेथी और वनमेथीके गुण ।

मेथिकायाः श्लेष्मवातज्वरामकफनाशनः ।
वनमेथ्याः सर्वरोगान् हरेत्कुञ्जरवाजिनाम् ॥ १२ ॥

अर्थः—मेथीका अर्क श्लेष्म (कफ), वातज्वर और आमसे उत्पन्न होनेवाले कफका नाश करनेवाला है, वनमेथीका अर्क सब रोगोंको हरता है और हाथी घोड़ोंको गुणकारी है ॥१२॥

हाल्यूँ और हींगके अर्कके गुण ।

चन्द्रसूरस्य हिक्कासृग्वातहृत् पुष्टिवर्द्धनः ।
हिंगुनः पाचनो रुच्यः कृमिशूलोदरापहः ॥ १३ ॥

अर्थः—और चंद्रसूर (हाल्यूँ) का अर्क हिचकी, रक्तवि-कार और वातको हरता है तथा पुष्टिको बढ़ाता है. हींगका अर्क पाचक है, रुचिको बढ़ाता है, कृमिरोग तथा पेटके दर्दका नाश करता है ॥ १३ ॥

बचके अर्कके गुण ।

वचाया वह्निवमिकृद्विबन्धाध्मानशूलहृत् ।

अर्थः—वचका अर्क अग्नि बढ़ाता है; वमन करता है; बन्धेज करता है, और अफरा तथा शूलका नाश करता है.

खुरासानी बचके अर्कके गुण ।

पारसीकवचायास्तु भूतोन्मादबलं हरेत् ॥ १४ ॥

अर्थः—पारसीक (खुरासानी) बचका अर्क भूतोन्मादके बलको हरता है ॥ १४ ॥

कुलिञ्जनके अर्कके गुण ।

कुलिञ्जनस्य स्वरकृत् हृत्कण्ठमुखशोधनः ।

अर्थः—कुलिञ्जनका अर्क स्वरको करता है और हृदय, कंठ, तथा मुखको शुद्ध करताहै.—

कुलिञ्जनभेदार्कके गुण ।

स्थूलग्रन्थिभवश्चार्को विशेषात्कफकासनुत् ॥१५॥

अर्थः—स्थूलग्रन्थि कहिये प्रसिद्ध वचभेद है; उसका अर्क विशेषकरके कफ और खाँसीको हरता है ॥ १५ ॥

द्वीपान्तरबचके अर्कके गुण ।

द्वीपान्तरवचायास्तु हरेच्छूलं फिरङ्गकम् ।

अर्थः—दूसरे द्वीपकी बच (चोपचिनी) का अर्क शूल और फिरंगरोगको दूर करता है.

हाऊबेरके अर्कके गुण ।

हपुषाया हरेत्प्लीहं विषं मेहं च दारुणम् ॥ १६ ॥

अर्थः—हपुषा नाम हाऊ बेरका अर्क प्लीह (बाईं पसली की गाँठ) को, विषको और दारुण प्रमेहको हरता है ॥१६॥

बड़े हाऊबेरके अर्कके गुण ।

हवुषायाः समीरार्शोग्रहणीगुल्मशूलंहृत् ।

अर्थः—हवुषा (बड़े हाऊ) बेरका अर्क समीरार्श (बादी बवासीर), संग्रहणी, पेटकी गाँठ, और शूल कहिये दर्दको हरता है.

बायबिडङ्गके गुण ।

वैडङ्गश्चोदरश्लेष्मकृमिवातविबन्धनुत् ॥ १७ ॥

अर्थः—बायविडंगका अर्क उदररोग, कफरोग, कृमि (कीड़ा) बादी, अफारा, बंध इनका नाश करता है ॥ १७ ॥

तुम्बर और वंशलोचनके अर्कके गुण ।

तुवरो गुरुताष्वासप्लीहोदरकृमीन् हरेत् ।
वंशलोचनजस्तृष्णाक्षयकासज्वरान्हरेत् ॥ १८ ॥

अर्थः—तुंवरका अर्क भारीपन, साँस, गाँठ और पेटके कीड़ोंको नाश करै. वंशलोचनका अर्क प्यास, क्षय, खाँसी ज्वर इन रोगोंको नाश करता है ॥ १८ ॥

समुद्रफेन और विजयसारके अर्कके गुण।

समुद्रफेनजः शीतो लेखनः कफहृत्सरः ।
जीवकोत्थः शुक्रकफबलकृच्छीतलः समः ॥ १९ ॥

अर्थः—समुद्रफेनका अर्क शीतल है; लेखन कहिये मलको उखाड़ता और कफको हरता है; तथा दस्तावर है. जीवक (विजयसार) का अर्क शुक्र (वीर्य) कफ व बलको करता है. शीतल और सम है ॥ १९ ॥

काकराशृंगी और मेदाके अर्कके गुण ।

ऋषभः पित्तदाहासृक्कासवातक्षयापहः ।
महामेदोद्भवार्कस्तु वृष्यः स्तन्यः कफापहः ॥२०॥

अर्थः—ऋषभ कहिये काकराशृंगीका अर्क पित्त, दाह, रक्तविकार, खांसी, बादी और क्षय इन रोगोंको हरता है. मेदाका अर्क वृष्य कहिये बल व दूधको बढ़ाता है और कफका नाश करता है ॥ २० ॥

महामेदा और ककोलीके कर्कके गुण ।

महामेदोद्भवः शीतो रक्तवातज्वरप्रणुत् ।
काकोल्याः प्रायशः शीतः पित्तशोथज्वरापहः ।२१।

अर्थः—फिर महामेदा (सोंठसमान गाँठ जिसकी) उसका अर्क शीतल है; यह रक्तविकार, वात, और ज्वरको जीतता है; काकोलीका अर्क प्रायः शीतल है और पित्त, शोथ (सूजन) व ज्वरका नाश करनेवाला है ॥ २१ ॥

क्षीरकाकोली और ऋद्धिके अर्कके गुण ।

क्षीरकाकोलिकाजातो बृंहणो दाहवातहा ।
ऋद्ध्या बल्यस्त्रिदोषघ्नो रक्तपित्तविनाशनः ॥ २२ ॥

अर्थः—क्षीरकाकोलीका अर्क वर्द्धक है और दाह (जलन) तथा वातविकारको हरता है. ऋद्धिका अर्क बलकारक है. तीनों दोषोंको नाश करता है और रक्तपित्तका नाश करनेवाला है २२

वृद्धि और मुलहठीके अर्कके गुण ।

वृद्ध्या गर्भप्रदः शीतः क्षतकासक्षयापहः ।
मधुपर्ण्याः केशकरः स्वर्जः पित्तास्रजित

LIBRARY

अर्थः—वृद्धिका अर्क गर्भको देनेवाला ठंढा तथा घाव, खाँसी और क्षयको नाश करता है. मधुपर्णी (मुलहटी) का अर्क केश और स्वरको बढ़ाता है और पित्त, वात व रक्त-विकारको जीतता है ॥ २३ ॥

जलैठी और कबीलेके अर्कका गुण ।

जलयष्ट्या विषच्छर्दितृष्णाग्लानिक्षयापहः
कम्पिलस्य विरेकी स्यान्मेहस्य विकारनुत् ॥ २४ ॥

अर्थः—जलयष्टी (जलैठी) का अर्क विष, वांति, तृषा, ग्लानि और क्षयका नाश करता है. कपिल (कबील) का अर्क दस्तावर है तथा शिश्नके विकारोंको नाश करता है ॥ २४ ॥

अमिलतासके अर्कके गुण ।

आरग्वधस्य पित्तास्रवातोदावर्तशूलनुत् ।
कण्डुमेहश्वासकासकृमिकुष्ठज्वरापहः ॥ २५ ॥

अर्थः—आरग्वध (अमिलतास) का अर्क पित्त, रक्त-विकार, वादी, उदावर्त्त (उफाण) और शूलका नाश करता है तथा कंडू (खुजली) प्रमेह, श्वास, खाँसी, कृमिरोग, कुष्ठ और ज्वर इनका भी नाश करता है ॥ २५ ॥

चिरायता और खँभारीके अर्कके गुण ।

भूनिम्बस्य तृषाकुष्ठज्वरव्रणकृमिप्रणुत् ।
भद्रायार्कस्तु पित्तासृक्कृमिवीसर्पकुष्ठनुत् ॥ २६ ॥

अर्थः—भूनिंब (चिरायता) का अर्क तृषा (प्यास) कुष्ठ (कोढ़), ज्वर फोड़ा और कृमि (कीड़ा) रोगको हरता है. भद्रा (खंभारी) का अर्क पित्त, रक्तविकार, कृमिरोग और फैलनेवाले कुष्ठको नाश करता है ॥ २६ ॥

मैनफल रास्नेके अर्कके गुण।

मदनोत्थश्छर्दिनेत्रचातुर्थिकज्वरादिहृत्।
रास्नोद्भवः समीराद्यवातशूलोदरापहः ॥ २७ ॥

अर्थः—मदन (मैनफल) का अर्क वमन, नेत्ररोग और चातुर्थिक ज्वर आदिको नाश करता है राईका अर्क वायुविकारको, बादीको और उदरव्यथाको नष्ट करता है ॥ २७ ॥

नागदमन और माईके अर्कके गुण।

नागभिन्नोद्भवो भोगिलूताद्याखुविकारनुत्।
माचिकाजस्तु पित्तास्रपक्वातीसारहा लघुः ॥२८॥

अर्थः—नागभिन्न (नागदवन) का अर्क सर्प, मकरी, मूषक आदिके विषको दूर करता है. माचिका (माई) का अर्क पित्त, रक्तविकार तथा पका भया अतीसार (रुधिर मिले दस्तों) का नाश करता है और हलका है ॥ २८ ॥

तेजबलके अर्कके गुण।

तेजस्विन्याः श्वासकासकफहृद्वह्निदीपनः।

अर्थः—तेजबलका अर्क श्वास, खाँसी और कफको हरता है और जठराग्निको तेज करता है.—

मालकांगनीके अर्कके गुण।

ज्योतिष्मत्या वान्तिकरो वह्निबुद्धिस्मृतिप्रदः।२९।

अर्थः—ज्योतिष्मति (मालकांगनी) का अर्क वांति कराता और अग्नि बढ़ाता तथा बुद्धिस्मरण देता है ॥ २९ ॥

कूट और पुहकरमूलके अर्कके गुण।

कुष्ठस्य हन्ति वातास्रकासकुष्ठमरुत्कफान् ।
पौष्करस्यारुचिश्वासान् विशेषात्पार्श्वशूलनुत् ।३०।

अर्थः—कूटका अर्क बादी, रक्तविकार, खाँसी कुष्ठ और वात, कफ इन रोगोंका नाश करता है. पुहकरमूलका अर्क अरुचि, श्वास तथा विशेषकरके कोषकी पीड़ाका नाश करता है ॥३०॥

चोक और ककड़ासींगीके अर्कके गुण ।

हेमाह्वाया एष वान्तिकरकण्डूविनाशनः ।
शृंग्या हरेदूर्ध्ववातहिक्कातृष्णास्वरक्षयान् ॥ ३१ ॥

अर्थः—हेमाह्व (चोक) का अर्क वमन करता है; करकंडू (खुजली) को नाश करनेवाला है. ककड़ासींगीका अर्क ऊर्ध्व-वायु, हिचकी, प्यास और स्वरभंग इन रोगोंका नाश करता है३१

कायफल और भारंगीके अर्कके गुण।

कट्फलोत्थः श्वासकासप्रमेहार्शोरुचिर्हरेत् ।
भार्ङ्ग्या हरेत्कफश्वासपीनसज्वरमारुतान् ॥३२॥

अर्थः—कट्फल (कायफल) का अर्क श्वास, खाँसी, प्रमेह, बवासीर और अरुचिको करता है. भारंगीका अर्क कफ, श्वास, पीनस, ज्वर और वायु इन रोगोंका नाश करता है ॥ ३२ ॥

पाषाणभेदके अर्कके गुण।

पाषाणभेदजो योनिरोगकृच्छ्राश्मगुल्महा ।

अर्थः—पाषाणभेदका अर्क योनिरोग, पिसाब रोकना और बहुत कठोर गुल्म कहिये गाँठको दूर करता है.—

कुसुम्भके अर्कके गुण ।

कौसुंभजो वर्णकरो रक्तपित्तकफापहः ॥ ३३ ॥

अर्थ—कुसुमका अर्क वर्णकारी है तथा रक्तपित्त व कफका नाश करता है ॥ ३३ ॥

धाई और मजीठके अर्कके गुण ।

धातकीजस्तृषाशीतविषकृमिविसर्पजित् ।
माञ्जिष्ठजो विषश्लेष्मरक्तातीसारकुष्ठहा ॥ ३४ ॥

अर्थः—धातकी (धाई, वा आँवला) का अर्क प्यास, शीत, विष, कृमिरोग और विसर्पिरोगको दूर करता है. मजीठका अर्क विष, कफ, रक्त अतिसार और कुष्ठको नाश करता है ॥३४॥

लाख और हलदीके अर्कके गुण ।

लाक्षाजः कृमिसर्पव्रणोरःक्षतकुष्ठहा ।
हरिद्राया मेहशोथत्वग्दोषव्रणपाण्डुनुत् ॥ ३५ ॥

अर्थः—लाखका अर्क कृमिरोग विसर्परोग, व्रण (फोड़ा) उरःक्षत (हृदयका घाव) और कुष्ठ इन रोगोंको हरता है. हलदीका अर्क प्रमेह, शोथ (सूजन), त्वचाके दोष, व्रण (घाव) और पांडु (पीलिया) का नाश करता है ॥ ३५ ॥

वनहलदीके अर्कके गुण ।

आरण्यकहरिद्रयाः कुष्ठवातास्रनाशनः ।

अर्थः—और वनहलदीका अर्क कुष्ठ, वात व रक्तविकारका नाश करता है.—

कपूरहलदीके अर्कके गुण ।

कर्पूरकहरिद्रायाः सर्वकण्डूविनाशनः ॥ ३६ ॥

अर्थः—कपूरहलदीका अर्क सब प्रकारकी खुजलीका नाश करता है ॥ ३६ ॥

दारुहलदी और रसोंतके अर्कके गुण ।

दार्व्या विशेषतो लेपान्नेत्रकर्णस्य रोगनुत् ।
रसाञ्जनोद्भवो नेत्रविकारव्रणदोषहृत् ॥ ३७ ॥

अर्थः—दारुहलदीके अर्कके लेपसे विशेषकरके नेत्र और कर्णके रोगका नाश होता है. रसांजन (रसोंत) का अर्क नेत्रविकार और व्रणदोषको हरता है ॥ ३७ ॥

बकुची और पँवारके अर्कके गुण ।

बाकुच्याः कृमिविष्टम्भपाण्डुशोथकफापहः ।
प्रपुन्नाटस्य हन्त्येव कण्डूदद्रूविषानिलान् ॥ ३८ ॥

अर्थः—बकुचीका अर्क कीड़े रुक जाना, पांडु (पीलिया), सूजन और कफ इन रोगोंको हरता है. प्रपुन्नाट (पँवार) का अर्क भी खाज, दाद, विष व वायुको नाश करता है ॥ ३८ ॥

अतीस और लोधके अर्कके गुण ।

विषाजो दीप्तिकृच्चार्को कफपित्तातिसारहा ।
लोध्रजः शीतलो ग्राही चक्षुष्यः कफपित्तनुत् ३९

अर्थः—अतीसका अर्क जठराग्निको दीप्ति करता है, कफ,

पित्त, और अतिसारका नाश करता है. लोधका अर्क शीतल है, मलको रोकता है, नेत्रोंको गुणकारक है, और कफपित्तको दूर करता है ॥ ३९ ॥

चिरपोटा और भिलावेके अर्कके गुण।

बृहत्पत्रोद्भवो नेत्रोदरातीसारशोथहृत्।
भल्लातकोद्भवो हन्याज्ज्वरोदरकृमिव्रणान् ॥ ४० ॥

अर्थः—बृहत्पत्रा (चिरपोटा) का अर्क नेत्ररोग, उदररोग, अतिसार व सूजन इनको हरता है, भिलावेंका अर्क ज्वर, पेटके कीड़े और व्रण (घाव) का नाश करता है ॥ ४० ॥

गिलोय और बेलके अर्कके गुण।

गुडूच्या दीपनो ग्राही कासपाण्डुज्वरापहः।
बैल्वः श्लेष्महरो बल्यो लघू रूक्षश्च पाचनः ॥४१॥

अर्थः—गुडूची (गिलोय) का अर्क जठराग्नि दीप्त करता है; ग्राही कहिये मलको ठहराता है; खाँसी, पीलिया और ज्वरको नाश करता है. बेलका अर्क कफको हरता है; बल करता है; हलका, रूखा और पाचक है ॥ ४१ ॥

कुम्भेर और नागरबेलके अर्कके गुण।

कुम्भारीजो भ्रमतृष्णाशूलार्शोविषदाहनुत्।
ताम्बूल्या मुखदौर्गन्ध्यमलवातश्रमापहः ॥ ४२ ॥

अर्थः—(कुँभेर) का अर्क भ्रम, प्यास, शूल, बवासीर, विष और जलनको हरता है. ताम्बूली (नागरवेल) का अर्क, मुखकी दुर्गंधि, मलदोष, वमन व श्रम (खेद) को दूर करता है ४२

पाढ़ल और अरणीके अर्कके गुण।

पाटल्याश्छर्दिशोथास्त्रत्रिदोषारुचिदाहहा ।
अग्निमन्थोद्भवः शोथकृमिपाण्डुबलासनुत् ॥ ४३ ॥

अर्थः—पाढ़लका अर्क छर्दिरोग, सूजन, रक्तविकार, त्रिदोष (वात पित्त कफ) कृत रोग, अरुचि और दाह (जलन) का नाश करता है. अग्निमंथ (अरणी) का अर्क सूजन, कीड़ा, पीलिया और बलास (कफ) इनका नाश करता है ॥ ४३ ॥

अरलू और शालिपर्णीके अर्कके गुण।

स्योनाकजस्तु गुल्मार्शकृमिहृद्रुचिदीप्तिकृत् ।
शालिपर्ण्याः क्षतकृमिज्वरच्छर्द्यतिसारहा ॥ ४४ ॥

अर्थः—स्योनाक (अरलू) का अर्क गाँठ और बवासीर रोगमें गुदाके मस्सा (कीड़ा) को हरता है और रुचि तथा, अग्नि दीप्त करता है. शालिपर्णीका अर्क घाव, कीड़ा, ज्वर, छर्दि और दस्त इन रोगोंको हरता है ॥ ४४ ॥

पृश्निपर्णीके अर्कके गुण।

पृश्निपर्ण्या ज्वरश्वासरक्तातीसारदाहजित् ।

अर्थः—पृश्निपर्णीका अर्क ज्वर, श्वास, रक्तातिसार और दाह इनका नाश करता है.—

छोटी कटैलीके अर्कके गुण।

वार्ताक्यर्को ज्वरालस्य मलारोचकशूलहा ॥४५॥

अर्थः—वार्ताकी (छोटी कटैली) का अर्क ज्वर, आलस्य, मल, अरुचि और शूल इनका नाश करता है ॥ ४५ ॥

कटेरीके अर्कके गुण।

कण्टकार्य्या गर्भकरः पाचनः कफकासहा।

अर्थः—कटेरीका अर्क गर्भ करता है, पाचन है, कफ और खाँसीका नाश करता है.–

गोखरूके अर्कके गुण।

गोक्षुरस्याश्मरीमेहकृच्छ्रहृद्रोगवातहा ॥ ४६ ॥

अर्थः—गोखरूका अर्क अश्मरी (लिंगमें वीर्यकी गाँठ), प्रमेह, मूत्रच्कृछ्र, हृदयरोग, और बादीका नाश करता है ॥४६॥

जीवंती और मुद्गपर्णीके गुण।

जीवन्त्याः श्वासहृन्नेत्रदोषत्रितयनाशनः।

मुद्गपर्ण्याः शोथदाहग्रहण्यर्शातिसारजित् ॥ ४७ ॥

अर्थः—जीवंतीका अर्क श्वासरोग, हृदयरोग, नेत्ररोग और त्रिदोषका नाश करता है; मुद्गपर्णीका अर्क सूजन, जलन, संग्रहणी, बवासीर और अतीसारको जीतता है ॥ ४७ ॥

माषपर्णी और अरण्डके अर्कके गुण।

माषपर्ण्याः शुक्रकरो वातपित्तज्वरास्रजित्।

पञ्चांगुलोद्भवः शूलशिरःपीडोदरापहः ॥ ४८ ॥

अर्थः—माषपर्णीका अर्क वीर्यवर्द्धक है और वात, पित्त, ज्वर तथा रक्तविकारको जीतता है. पंचांगुल कहिये अरंड़का अर्क शूल, शिरका दर्द और उदररोगको दूर करता है ॥४८॥

अरण्डभेदके अर्कके गुण।

हबुषोत्थो वृद्धकासश्वासकुष्ठामभारुतान्।

अर्थः—हवुषा (हाऊ बेर) का अर्क बहुत बढ़ीहुई (बहुत दिनोंकी) खाँसी, श्वास, कुष्ठ और आमवात इनको हरता है:—

मन्दारके अर्कके गुण ।

मन्दारजों वातकुष्ठकण्डूव्रणविषापहः ॥ ४९ ॥

अर्थः—मंदारका अर्क बादी, कुष्ठ, खाज, घाव और विषका नाश करता है ॥ ४९ ॥

आक और वज्रीके अर्कके गुण ।

अर्कार्कः प्लीहगुल्मार्शश्लेष्मोदरकृमीन् हरेत् ।
वज्रीजो लेपतो हन्याद्व्रणशोथोदरज्वरान् ॥५०॥

अर्थः—आकका अर्क प्लीह (बाईं कोखकी गाँठ), गुल्म, बवासीर, कफ और उदररोगको तथा जंतुवोंको हरता है. वज्रीका अर्क लेप करनेसे घाव, सूजन, उदररोग और ज्वर इन रोगोंका नाश करता है ॥ ५० ॥

सातला और कलिहारीके अर्कके गुण ।

सातलोत्थः कफानाहपित्तोदावर्तशोथहा ।
लाङ्गल्या लेपतो हन्याच्छोफार्शोव्रणरोगजान् ५१

अर्थः—सातला (थूहर भेद) का अर्क कफ, अफरा, पित्त, उफान और सूजनको हरता है. लांगली (कलिहारी) का अर्क लेप करनेसे शोफ (सूजन), अर्श (बवासीर) व व्रण (फोड़ा) इन रोगोंके विकारोंको जीतता है ॥ ५१ ॥

कनेर और चचेड़ेके अर्कके गुण ।

करवीरोद्भवो नेत्रकोपकुष्ठव्रणापहः ।
चाण्डालोत्थस्तु विषवद्भक्षणे लेपने महत् ॥५२॥

अर्थः—करवीर (कनेर) का अर्क नेत्रकोप, कुष्ठ और

फोड़ा इनको हरता है. चांडाल, कहिये चचेड़ेका अर्क भक्षण करनेमें विषके समान है और लेपन करनेमें अच्छा है; अनेक रोगोंको हरता है ॥ ५२ ॥

धतूरा और वासा इनका अर्क ।

धत्तूरजो हरेल्लिख्यायूकाकृमिविषादिकम् ।
वासोद्भवो ज्वरच्छर्दिमेहकुष्ठक्षयापहः ॥ ५३ ॥

अर्थः—धतूरेका अर्क लीख, जुवाँ, कीड़ोंका विष आदि हरनेवाला है. वाँसाका अर्क ज्वर, छर्दि, प्रमेह, कुष्ठ और क्षयका नाश करनेवाला है ॥ ५३ ॥

पित्तपापड़ेके अर्कके गुण ।

पर्पटो हन्ति पित्तास्रभ्रमतृष्णाकफज्वरान् ।

अर्थः—पर्पट (पित्तपापड़ा) का अर्क रक्त पित्त, भ्रम, प्यास, कफ और ज्वर इन रोगोंका नाश करता हैं.—

नीमके अर्कके गुण ।

निम्बजः श्रमतृट्कासज्वरारुचिकृमिप्रणुत् ॥५४॥

अर्थः—नीमका अर्क खेद, तृष्णा, खाँसी, ज्वर, अरुचि और कृमिरोग इनको हरता है ॥ ५४ ॥

बकायनके अर्कके गुण ।

महानिम्बोद्भवो गुल्ममूषिकाविषनाशनः ।

अर्थः—महानींबका अर्क गाँठ और मूषकके विषको नाश करनेवाला है.—

पारिभद्रनाम नीमके अर्कके गुण ।

पारिभद्रोऽनिलश्लेष्मशोथमेदकृमिप्रणुत् ॥ ५५ ॥

अर्थः—पारिभद्र नामक नीमका अर्क वात, कफ, सूजन और मेदाके कीड़ोंका नाश करता है॥ ५५ ॥

कचनारके अर्कके गुण।

काञ्चनारो गण्डमालागुदभ्रंशव्रणापहः ।

अर्थः—कचनारका अर्क गंडमालाका, गुदाके छेदका और फोड़ाका नाश करता है.—

कोविदारके अर्कके गुण।

कोविदारस्तु पित्तास्रप्रदरक्षयकासहा ॥ ५६ ॥

अर्थः—कोविदार (मिर्च) का अर्क पित्त, रक्तविकार, प्रदर (योनिरोग), क्षय और खाँसी इनका नाश करता है॥५६॥

सहिंजनेके अर्कके गुण।

सौभाञ्जनार्को रुचिकृच्छुक्रलो ग्राहिदीपनः ।

अर्थः—सौभांजन (सहिंजना) का अर्क रुचि करता है; वीर्य बढ़ाता है; मलको रोकता है और जठराग्नि दीप्त करता है.—

मीठे सहिंजनेके अर्कके गुण।

मधुशिग्रूद्भवो॰ हन्याद्विद्रधिश्वयथुक्रमीन् ॥ ५७ ॥

अर्थः—मधु शिग्रूद्भव कहिये मीठ सहिंजनेका अर्क विद्रधि (दाद), श्वयथु (आलस्य), व कृमि (कीड़ा) इनका नाश करता है ॥ ५७ ॥

सफेद सहिंजनेके अर्कके गुण।

शिग्रुजो विषहृन्नेत्र्यो नस्येनाक्षिशिरोर्तिहा ।

अर्थः—शिग्रु नाम सहिंजनेका अर्क विषको हरता है और नेत्रपोषक है. तथा सूंघनेसे भी शिर और नेत्रके रोग हरता है.—

गिरिकन्या (ग्वारपट्टा) के अर्कके गुण।

गिरिकन्याकुष्ठशूलशोथव्रणविषापहः ॥ ५८ ॥

अर्थः—गिरिकन्या (ग्वारपट्टा) का अर्क कुष्ठ, शूल, सूजन, घाव और विष इन रोगोंका नाश करनेवाला है ॥५८॥

सिन्दुवार (सिंदुरियां, निर्गुण्डी) के अर्कके गुण।

सिन्दुवारोद्भवो हन्ति शूलशोथाममारुतान्।

अर्थः—सिंधुवारोद्भव (सिंधुरिया) का अर्क शूल, सूजन और आमवात इन रोगोंका नाश करता है.–

सिंभालूके अर्कके गुण।

निर्गुण्ड्यर्को हरेज्जन्तुव्रणकुष्ठारुचिं लघुः ॥ ५९ ॥

अर्थः—निर्गुंडी (सिंभालू) का अर्क जंतुओंके व्रण (घाव) कुष्ठ और अरुचिको हरता है और हलका है ॥ ५९ ॥

कुड़ा और करंजवेके अर्कके गुण।

कौटजो दीपनः शीतः कफतृष्णामकुष्ठजित्।

करञ्जः कफगुल्मार्शोव्रणक्रिमिव्रणापहः ॥ ६० ॥

अर्थः—कुटजका अर्क अग्निको तेज करता है, शीतल है, कफ, प्यास और कच्चे कुष्ठको जीतता है. करंजवेका अर्क कफ, गाँठ, बवासीर, फोड़ा, घावके कीड़ा इनका नाश करता है ६०

घीकरञ्जवेके अर्कके गुण।

घृतकारञ्जको भेदी वातार्शः क्रमिकुष्ठजित्।

अर्थः—घृतकरंजवेका अर्क बादी और बवासीरको काट करता है; कीड़े तथा कुष्ठको जीतता है.—

करञ्जीके अर्कके गुण ।

करञ्ज्यो वमिवातार्शःकृमिकुष्ठप्रमेहजित् ॥ ६१ ॥

अर्थः—सामान्य करंजीका अर्क, उबकाई, वादी, बवासीर, कृमिरोग, कुष्टरोग और प्रमेहको जीतता है ॥ ६१ ॥

सफेद घुंघुचीके अर्कके गुण ।

उच्चटार्कः केशकरो वातपित्तज्वरापहः ।

अर्थः—उच्चटा (घुंघुची) का अर्क केशोंको बढ़ाता है और वात, पित्त, ज्वरको हरता है.—

लाल घुंघुचीके अर्कके गुण ।

गुञ्जायाश्च हरेच्छ्वासमुखशोषभ्रमिज्वरान् ॥ ६२ ॥

अर्थः—गुंजा (घूँघुची वा चिरमिटी) का अर्क श्वास, मुखसूखन, भ्रम और ज्वरको हरता है ॥ ६२ ॥

कौंच और मांसरोहिणीके अर्कके गुण ।

कपिकच्छूद्भवो वृष्यो बृंहणो वाजिकर्मकृत् ।
मांसरोहिण्युद्भवस्तु वृष्यो दोषत्रयापहः ॥ ६३ ॥

अर्थः—कापकच्छु (कौंच) का अर्क शरीरपोषक, वृद्धिकारक और जवानी चढ़ाता है. मांसरोहिणीका अर्क बलकारी है और तीनों दोषोंको हरता है ॥ ६३ ॥

चीढ़के अर्कके गुण ।

चिह्लजः कुरुते पुष्टिं तत्फलं मारयेज्जनान् ।

अर्थः—चिह्ल कहिये चीढ़ाका अर्क पुष्टि करता है. उसका फल मनुष्योंको मारता है, अर्थात् फल विषसमान है.—

कांटेदार कटैलीके अर्कके गुण।

कण्टकार्या दीपनश्च श्लेष्मशोथहरोऽरुचिः ॥६४॥

अर्थः—काँटेदार कटैलीका अर्क दीपन है; कफ और सूजनको हरता है और अरुचि करता है ॥ ६४ ॥

बेत तथा जलबेतके अर्कके गुण।

वेतसो हरते दाहं शोथार्शोयोनिरुग्व्रणान् ।
जलवेतसजो ग्राही शीतो वातप्रकोपनः ॥ ६५ ॥

अर्थः—वेतका अर्क दाह, सूजन, मस्सा, योनिरोग और फोड़ाका नाश करता है. जलवेतका अर्क मलको बाँधता है, शीतल है और वायुके कोपको करता है ॥ ६५ ॥

समुद्रफलके अर्कके गुण।

हिज्जलार्कस्तु हरते चराचरविषं स्फुटम् ।

अर्थः—हिज्जल (समुद्रफल) का अर्क चर और अचर इन दोनों विषोंको हरता है.—

अंकोलके अर्कके गुण।

अङ्कोटकस्तु शूलामशोथग्रहविषापहः ॥ ६६ ॥

अर्थ—अंकोट (चिलगोजा) का अर्क शूल, आम, सूजनका रुकना और विषको हरता है ॥ ६६ ॥

खरैंटी और बरियरेके अर्कके गुण।

बलार्को ग्राहिवातास्रपित्तास्रक्षतनाशनः ।
अतिपूर्वबलार्कस्तु मूत्रातीसारनाशनः ॥ ६७ ॥

अर्थः—बला (खरैंटी) का अर्क मलको बाँधता है; वात-

रक्त और पित्तरक्त तथा घावको नाश करता है। अतिबला (बरियरा) का अर्क मूत्रातिसार (बहुत मूत्र) का नाश करता है ॥ ६७ ॥

सहदेईके अर्कके गुण।

महाबलार्को हरते कृच्छ्रघातानुलोमनः ।

अर्थः—महाबला (सहदेई) का अर्क मूत्रकृच्छ्र और वातरोग (भारीचोट) को हरनेमें समर्थ है, अनुलोमी है.—

गँगेरनके अर्कके गुण।

नागपूर्वबलार्कश्च मूर्छामोहहरः परः ॥ ६८ ॥

अर्थः—नागबला [गँगेरन] का अर्क मूर्छा और मोह हरनेवाला है ॥ ६८ ॥

पतिजियाके अर्कके गुण।

लक्ष्मणार्कस्य पानाद्वै वन्ध्याऽपि लभते सुतम् ।

अर्थः—लक्ष्मण (पतिजिया) का अर्क सेवन करनेसे वंध्याको भी पुत्र प्राप्त होवै.—

स्वर्णवल्लीके अर्कके गुण।

स्वर्णवल्याःशिरःपीडां त्रिदोषान् हन्तिदुग्धहा ६९

अर्थः—स्वर्णवल्ली (काकवल्लरी) का अर्क शिरकी पीड़ाको और त्रिदोषका नाश करता है; दूधको घटाता है ॥ ६९ ॥

कपास तथा बाँसके अर्कके गुण।

कार्पासार्कःशिरःशङ्खकर्णरोगान्विनाशयेत् ।
वंशजःकफपित्तघ्नःकुष्ठास्रव्रणशोथजित् ॥ ७० ॥

अर्थः—कपासका अर्क शिररोग, कनपटीरोग और कर्णरोग

इनका नाश करता है. बाँसका अर्क कफपित्तका नाश करता है; और कुष्ठ, रक्त, फोड़ा व सूजन इनको जीतता है ॥ ७० ॥

नाल और मुलहठीके अर्कके गुण ।

नालार्को बस्तियोन्यार्तिं दाहपित्तविसर्पहृत् ।
यष्ट्या जयेज्ज्वरच्छर्दिकुष्ठातीसारहृद्रुजः ॥ ७१ ॥

अर्थः—नाल (कमलकी डाँडी) का अर्क वस्ति (पेड़ू अर्थात् नाभि और मूत्रस्थानका मध्यभाग) और योनिकी पीड़ाको तथा दाह (जलन), पित्त, विसर्परोग (जो देहमें फैलकर फुंसी करदेता है) इनको दूर करता है. यष्टी (मुलहठी) का अर्क ज्वरको जीतता है; और छर्दि (वांति), कुष्ठ व अतिसार इन रोगोंको हरता है ॥ ७१ ॥

सफेद निशोथके अर्कके गुण ।

श्वेतत्रिवृद्भवोऽप्यर्को पित्तशोथोदरापहः ।

अर्थः—सफेद निशोथका अर्क पित्त, सूजन, उदररोगका नाश करता है.—

शरफोंकेके अर्कके गुण ।

शरपुङ्खोद्भवः प्लीहा गुल्मव्रणविषापहः ॥ ७२ ॥

अर्थः—शरफोंकका अर्क प्लीहसंबंधी रोगोंको और गाँठ, फोड़ा और विषका नाश करता है ॥ ७२ ॥

जवासके अर्क गुण ।

जवासजो मदभ्रान्तिपित्तासृक्कुष्ठकासजित् ।

अर्थ—जवासका अर्क मद (नशा), भ्रांति (मोह), पित्त, रक्तविकार, कुष्ठ व खाँसी इनको जीतता है.—

गोरखमुण्डीके अर्कके गुण ।

मुण्डजोऽत्यन्तबलकृत्प्लीहमेहानिलार्तिजित् ॥७३॥

अर्थः—गोरखमुंड़ीका अर्क बहुत बल करता है. प्लीह (पेटकी गांठ) और प्रमेह तथा वातकी पीड़ाको जीतता है ॥ ७३ ॥

अपामार्गके अर्कके गुण ।

अपामार्गोद्भवश्छर्दिकफमेदोनिलापहः ।

अर्थः—अपामार्ग (ओंगा) का अर्क वांति, कफ, मेदाका विकार और वात इनको हरता है.—

लाल अपामार्गके अर्कके गुण ।

आरक्तापामार्गभवो धातुस्तम्भनकारकः ॥ ७४ ॥

अर्थः—लालओंगेका अर्क धातुस्तम्भन (रुकावट) करता है.—॥ ७४ ॥

तालमखानेके अर्कके गुण ।

कोकिलाक्षिभवः शीघ्रं सेकाच्छोथान्निवारयेत् ।

अर्थः—कोकिलाक्षि (तालमखाना) का अर्क शीघ्र फोड़ा और सूजनको निवारण करता है.—

अस्थिसंहारकके अर्कके गुण ।

अस्थिसंहारकायास्तु भग्नसन्धानकृच्छिवे ॥७५॥

अर्थः—हे शिवे (कल्याणरूपे !) मंदोदरी ! अस्थिसंहारका अर्क घावको भरता है. हे शिवे (कल्याणरूपे), (यहाँपर रावणने मन्दोदरीसे शिवे कहा है ॥ ७५ ॥

पुनर्नवेके अर्क गुण ।

पुनर्नवाया रक्ताया ग्राही पित्तास्रनाशनः ।

अर्थः—पुनर्नवा (साँठी) का अर्क रक्तविकारका नाश करता है; मलको रोकता है और पित्तरक्तका नाश करता है—

राजबलाके अर्कके गुण ।

प्रसारिण्या वातहरो वृष्यः सन्धानकृत्सरः ॥७६॥

अर्थः—प्रसारिणी (राजबला) का अर्क वातविकारको हरता है; पोषक है; घावको पूर्ण करता है और रेचक है ॥७६॥

ग्वारिपाठाके अर्कके गुण ।

कुमारिकाया ग्रन्थ्यग्निदग्धविस्फोटकाञ्जयेत् ।

अर्थः—कुमारिका (ग्वारपाठा) का अर्क गाँठ, अग्निसे दग्ध और शीतलाके रोगमें फुँसियोंका नाश करता है—

सफेद पुनर्नवेके अर्कके गुण ।

पुनर्नवायाः श्वेतायाः सर्वनेत्रामयापहः ॥ ७७ ॥

अर्थः—सफेद साँठीका अर्क नेत्रोंके सम्पूर्ण रोगोंका नाश करता है ॥ ७७ ॥

सारिवेके अर्कके गुण ।

सारिवाया वह्निमान्द्यकासामविषनाशनः ।

अर्थः—सारिवा (सफेद साँवा) का अर्क मन्दाग्नि, खाँसी, आँव और विषको नाश करता है—

भँगरेके अर्कके गुण ।

भृङ्गराजस्य जातोऽर्कः केश्यो रुच्यः शिरोऽर्तिहृत् ७८

अर्थः—भँगरेका अर्क केश (बाल) बढ़ाता है; त्वचा (खाल) कोमल करता है; शिरकी पीड़ाको हरता है ॥ ७८ ॥

शणपुष्पी और चिरायतेके अर्कके गुण ।

शणपुष्पीलतायास्तु अर्कः पित्तकफापहः ।

त्रायन्त्यर्कः शूलविषविलेपीज्वरनाशनः ॥ ७९ ॥

अर्थः—शणपुष्पीकी लता (बेलि) का अर्क पित्त और कफका नाश करता है. त्रायंती (चिरायतेके फली) का अर्क शूल व बिषको हरता है, मलको लेपन करता है और ज्वरका नाश करता है ॥ ७९ ॥

मुरह और मकोयके अर्कके गुण ।

मूर्वाया मेहरोगघ्नः कण्डूकुष्ठज्वरापहः ।
काकमाच्या नेत्रहितश्छर्दिहृद्रोगनाशनः ॥ ८० ॥

अर्थः—मूर्वा (मुरह) का अर्क प्रमेह रोगका नाश करता है; खाज, कुष्ठ और ज्वरका नाश करता है. काकमाची (मकोय) का अर्क नेत्रको हितकारी है; छर्दि (वांति) तथा हृदयरोगका नाश करता है ॥ ८० ॥

काकनासा और काकजंघाके अर्कके गुण ।

काकनासाभवो वामी शोथार्शःश्वित्रकुष्ठनुत् ।
काकजङ्घोद्भवो हन्याज्ज्वरकण्डूविषक्रिमीन्॥८१॥

अर्थः—काकनासाका अर्क वामी (वमनकारी) है और सूजन, बवासीर व चित्ती कुष्ठको हरता है. काकजंघाका अर्क ज्वर, खुजली, विष और कृमिरोग इनको हरता है ॥ ८१ ॥

नागपुष्पीके अर्कके गुण ।

नागिन्यास्तु हरेच्छूलयोनिदोषवमिक्रिमीन् ।

अर्थः—नागिनी (नागपुष्पी) का अर्क शूल, योनिरोग, वांति और कीड़ोंका नाश करता है—

मेढ़ासींगीके अर्कके गुण।

मेषशृङ्ग्याः श्वासकासव्रणश्लेष्माक्षिशूलहा ॥८२॥

अर्थः—मेढ़ासिंगीका अर्क श्वास, खाँसी, फोड़ा, कफ और नेत्रपीड़ा इनका नाश करता है ॥ ८२ ॥

हंसपदी और सोमवल्लीके अर्कके गुण।

हंसपाद्या हन्ति लूतां भूतरक्तविषव्रणान्।
सोमवल्ल्यास्त्रिदोषघ्नो क्षीरकृच्च रसायनः ॥ ८३ ॥

अर्थः—हंसपदीका अर्क मकड़ी, भूतबाधा, रक्तविकार, विष और फोड़ा इनरोगोंका नाश करता है. सोमवल्लीका अर्क तीनों दोषोंका नाश करता है; दूधको बढ़ाता है; और रसायन अमृतबेलि है ॥ ८३ ॥

आकाशबेलीके अर्कके गुण।

आकाशवल्ल्याः शीतोऽर्कः पित्तश्लेष्मामनाशनः।

अर्थः—आकाशबेलिका अर्क शीतल है; पित्त, कफ व आँचका नाश करता है—

पातालगरुडीके अर्कके गुण।

पातालगरुडीजार्को वृष्यः पवननाशनः ॥ ८४ ॥

अर्थः—पातालगरुडी (छरहिंटा) का अर्क बलकारी और वायुके विकारका नाश करता है ॥ ८४ ॥

तुलसी और मोढ़पत्रके अर्कके गुण।

वृन्दावृक्षोद्भवोऽर्कस्तु विषरक्षोव्रणापहः।
वटपत्रीभवश्चोष्णो योनिमूत्रगदापहः ॥ ८५ ॥

अर्थः—वृंदावृक्ष (तुलसी) का अर्क विष, राक्षसबाधा

और फोड़ाका नाश करता है. वटपत्री (मोढपत्र) का अर्क गर्म है; योनिरोग और मूत्ररोगका नाश करता है ॥ ८५ ॥

हिंगुपत्री और वंशपत्रीके अर्कके गुण ।

हिङ्गुपत्र्या विबंधार्शःश्लेष्मगुल्मानिलापहः ।
वंशपत्र्याः पाचनोष्णो हृद्बस्तिगदसङ्घहृत् ॥८६॥

अर्थः—हिंगुपत्रीका अर्क बंध, बवासीर, कफ, गाँठ और वायुको हरता है, वंशपत्रीका अर्क पाचन है, गर्म है, हृदय और वस्तिके सम्पूर्ण रोगोंका नाश करता है ॥ ८६ ॥

मछेली और सरहटीके अर्कके गुण ।

मत्स्याक्ष्यर्को ग्राहिशीतकुष्ठपित्तकफास्रजित् ।
सर्पाक्ष्या रोपणः सर्पवृश्चिकोद्भवदंशहृत् ॥ ८७ ॥

अर्थः—मत्स्याक्षी (मछेली) का अर्क मलको रोकता है; शीत है; कुष्ठ, पित्त, कफ व रक्त इनको हरता है. सरहटीका अर्क अन्नको जमाता है; साँप विच्छूके दंशके विषको हरता है ॥८७॥

शंखपुष्पी (शंखाहूली) के अर्कके गुण ।

शङ्खपुष्प्या विषहरः स्मृतिकान्तिबलाग्निदः ।

अर्थः—शंखपुष्पी (शंखाहूली) का अर्क विष हरता है; स्मरण, प्रकाश, बल और जठराग्निको बढ़ाता है—

अर्कपुष्पीके अर्कके गुण ।

अर्कपुष्प्याः कृमिश्लेष्ममेहचित्रविकारनुत् ॥८८॥

अर्थः—अर्कपुष्पीका अर्क कीड़ा, कफ, प्रमेह और चित्तविकारको हरता है ॥ ८८ ॥

लाजावन्ती और तुम्बीके अर्कके गुण ।

लज्जालुकाया भगरुग्रक्तपित्तातिसारहृत् ।

अलम्बुषासम्भवोऽर्कः कृमिपित्तकफापहः ॥ ८९ ॥

अर्थः—लज्जालू (लाजावंती) का अर्क योनिरोग, रक्तपित्त और अतिसारको हरता है. अलंबुषा (तुंबी) का अर्क कृमिरोग और पित्त तथा कफको हरता है ॥ ८९ ॥

दुद्धी और भुईआमलेके अर्कके गुण ।

दुग्धिकायाः कफकरो वृष्यस्तम्भी कृमिप्रणुत् ।
भूमिवल्ल्याः कासतृष्णाकफपाण्डुहृत्तापहः ॥९०॥

अर्थः—दुद्धीका अर्क कफकारी है; बलको बढ़ाता है; रुकावट करता है; और कृमिरोगका नाश करता है. भूमिवल्ली (आँवली) का अर्क खाँसी, प्यास, कफ, पीलिया और हृदयके तापको हरता है ॥ ९० ॥

ब्राह्मी और ब्रह्ममण्डूकीके अर्कके गुण ।

ब्राह्म्या बुद्धिप्रदश्चार्कः षण्मासाभ्यासतः कविः ।
ब्रह्ममण्डूकिजः पाण्डुविषशोषज्वरान्हरेत् ॥ ९१ ॥

अर्थः—ब्राह्मीका अर्क बुद्धि देता है; छे महीना अभ्यास करनेसे कवि करता है; ब्रह्ममंडूकपर्णीका अर्क पीलिया, विष, सूजन और ज्वर इनको हरता है ॥ ९१ ॥

गोमा और सूर्यमुखीके अर्कके गुण ।

द्रोणपुष्प्या ज्वरश्वासकामलाशोथजंतुजित् ।
सूर्यमुख्या हरेत्स्फोटयोनिरुकृमिपाण्डुताम् ॥९२॥

अर्थः—द्रोणपुष्पी (गोमा) का अर्क ज्वर, श्वास, कामला और सूजन इनको जीतता है. सूर्यमुखीका अर्क फोड़ा योनिरोग, कृमिरोग और पीलिया इन रोगोंका नाश करता है ॥९२॥

बाँझककोड़ी और मार्कण्डिकाके अर्कके गुण।

वन्ध्याक्कर्कोटकीजातः सर्पदर्पव्रणापहः।
मार्कण्डिकाया दुर्गन्धिविषगुल्मोदरापहः ॥ ९३ ॥

अर्थः—बाँझककोड़ीका अर्क सर्प डसेके व्रणका नाश करता है. मार्कंडिकाका अर्क दुर्गंधि, विष और गाँठ तथा उदररोगका नाश करता है ॥ ९३ ॥

दारुहलदी और काले धतूरके अर्कके गुण।

देवदाल्याः शूलगुल्मश्लेष्मार्शोवातजित्परम्।
धत्तूरजो ग्राहिकौजोवह्निकृद्व्रणदाहहृत् ॥ ९४ ॥

अर्थः—देवदाली (दारुहलदी) का अर्क शूल, गाँठ, कफ बवासीर व वात इन रोगोंको विशेष जीतता है. धतूरका अर्क कब्ज है; बल और जठराग्निको बढ़ाता है तथा फोड़ा और दाह (जलन) को हरता है ॥ ९४ ॥

गोभी और नागपत्रके अर्कके गुण।

गोजिह्वाया मेहकासव्रणसारज्वरापहः।
नागपुष्प्याः सर्वविषसर्वग्रहविनाशनः ॥ ९५ ॥

अर्थः—गोभीका अर्क प्रमेह, खाँसी, व्रण, शोथ और ज्वरको हरता है. नागपुष्पी (नागपत्र) का अर्क सब प्रकारके विष और सम्पूर्ण ग्रह (बाधा) का नाश करता है ॥ ९५ ॥

बरबेलके अर्कके गुण।

वेल्लन्तरोमूंत्रघाताश्मरीयोन्यनिलार्तिजित्।

अर्थः-दरबेलका अर्क मूत्रबंधरोग, अश्मरी (पथरी), योनिरोग और वातपीड़ा इन रोगोंको जीतता है—

नकछिकनीके अर्कके गुण ।

छिक्कन्या वह्निरुचिकृद्दर्शकुष्ठकृमिप्रणुत् ॥ ९६ ॥

अर्थः—नकछिकनीका अर्क अग्नि बढ़ाता है, रुचि करता है, और बवासीर, कुष्ठ तथा कृमिरोगका नाश करता है ॥ ९६ ॥

कुहुँदरेके अर्कके गुण ।

कौहुन्दरो ज्वरं रक्तमुखशोषकफं हरेत् ।

अर्थः-कहुँदरेका अर्क ज्वर, रक्तविकार, मुखसूजन और कफको हरता है—

सुदर्शनके अर्कके गुण ।

सुदर्शनार्कश्चात्युष्णः कफास्रं वातरोगजित् ॥९७॥

इति श्रीरावणकृतार्कप्रकाशे तृतीयं शतकम् ॥३॥

अर्थः-सुदर्शनका अर्क बहुत गर्म है, और कफ, रक्तविकार तथा वातरोगको जीतता है ॥ ९७ ॥

यह लंकानाथरावणके बनाये अर्कप्रकाशमें अर्कविधान नाम तीसरा शतक पूर्ण भया ॥ ३ ॥

इति श्रीमत्पण्डितनारायणप्रसादकृतभाषार्कप्रकाशे तृतीयं शतकम् ॥ ३०० ॥

अथ चतुर्थं शतकम् ४।

रावण उवाच।

षड्रस और उनका बलाबल।

सिताचिंचोषणपट्टविभीतककटीलकाः ।
एतत्षड्रसमित्युक्तं विपरीतबलाधिकम् ॥ १ ॥

अर्थः—रावण बोला कि-१ सिता (मिश्री), २ चिंच (इमली), ३ ऊषण (मिर्च), ४ पट्ट (परवल), ५ विभीतक (वहेड़ा), और ६ कटीलक (करेला) यह षड्रस कहलाते हैं. इनमें विपरीत क्रमसे एकसे एक अधिक बली हैं. जैसे करेलासे वहेड़ा, बहेड़ेसे परवल, परवलसे मिर्च, मिर्चसे इमली और इमलीसे मिश्री अधिक वली है ॥ १ ॥

षड्रसके गुण ।

एषामर्कं प्रत्यहं च पिबेत्पलयुगं प्रिये ।
अरुचिं चैव मन्दाग्निं स्वप्नेऽपि स न पश्यति ॥२॥

अर्थः-रावण कहता है कि-हे मन्दोदरी ! इनके अर्कका नित्य प्रति चार पल कोई पीवै तो वह अरुचि और मन्दाग्निको स्वप्नमें भी नहीं देखता है ॥ २ ॥

उन्मत्तपञ्चक और उसके अर्कके गुण।

उन्मत्तो सोम विजया जातीपत्री च खाखसम् ॥
उन्मत्तपञ्चकं चैतद्यवानी पञ्चभिः समा ॥ ३ ॥
दुग्धनिर्वापितादस्मादर्को लेह्यो यथोक्तितः ।
खादेत्पिशाचवन्मत्तो रमयेद्रमणीशतम् ॥ ४ ॥

अर्थः—१ उन्मत्त (धतूरा), २ सोम (सोमलता), ३ विजया (भाँग), ४ जातीपत्री (जावित्री) और ५ खसखस यह उन्मत्तपंचक है. इन पाँचोंके समान भाग अजवायन डालकर ॥ ३ ॥ इस उन्मत्तपंचकको दूधमें मिलाय जैसें पूर्व कह चुके हैं उस विधिसे अर्क खींचे और प्रमाणसे खाय तो पिशाचके समान मत्त होकर सौ स्त्रियोंको रमण करै ॥ ४ ॥

त्रिसुगन्ध और उसके अर्कके गुण ।

त्वगेलापत्रकैस्तुल्यैस्त्रिसुगन्धमिति स्मृतम् ।
तदर्को मुखदौर्गंध्यच्छेदनो मलभेदनः ॥ ५ ॥

अर्थः—१ त्वक् (तज), २ एला (इलायची) और पत्रज ये बराबर हों तो इन्है त्रिसुगंध कहा है. इसका अर्क मुखकी दुर्गंधिका छेदन करता है और मलको भेदन करता है ॥ ५ ॥

चातुर्जात और उसके अर्कके गुण ।

नागकेशरमेला च पत्रकं दारु चीर्णकम् ।
चातुर्जातमिदं ज्ञेयं वह्निकृच्च विषापहम् ॥ ६ ॥

अर्थः—१ नागकेशर (तज), २ एला (इलायची,) ३ पत्रज और ४ दालचीनी यह चातुर्जात जानिये. इसका अर्क जठराग्निको बढ़ाता है और विषका नाश करता है ॥ ६ ॥

त्रिफला और उसके अर्कके गुण ।

पथ्यां बिभीतको धात्री त्रिफलैषा प्रकीर्तिता ।
एतदर्को मेहकुष्ठविषमज्वरपित्तनुत् ॥ ७ ॥

अर्थः—१ पथ्या (हड़), २ विभीतक (बहेड़ा) और

३ धात्री (आवँला) यह त्रिफला कहाती है. इसका अर्क प्रमेह, कुष्ठ, विषमज्वर और पित्तका नाश करता है ॥ ७ ॥

त्रिकुटा और उसके अर्कके गुण ।

विश्वोपकुल्या मरिचं त्रयं त्रिकटुरुच्यते ।
हरेद्गुल्मकफस्थौल्यमेदश्लीपदपीनसान् ॥ ८ ॥

अर्थः—१ विश्व (सोंठि), २ उपकुल्या (पीपल) व ३ मरिच ये तीनों त्रिकुटा कहाते हैं. इनका अर्क गाँठ, कफ करके स्थूलता (मुटाई) मेदोरोग, श्लीपदरोग और पीनसको हरता है ।८।

चतुरूषण और उसके अर्कके गुण ।

पिप्पली पिप्पलीमूलं मरिचं विश्वभेषजम् ।
चतुरूषणमित्युक्तमेतदर्कोऽग्नितत्परः ॥ ९ ॥

अर्थः—१ पीपल, २ पीपलामूल, ३ मिर्च और ४ सोंठ, ये चार औषध चतुरूषण कहाते हैं. इनका अर्क जठराग्निको प्रदीप्त करता है ॥ ९ ॥

पञ्चकोल और उसके अर्कके गुण ।

पिप्पली पिप्पलीमूलं चव्यचित्रकनागरैः ।
पञ्चकोलमिदं गुल्मप्लीहानाहोदरापहम् ॥ १० ॥

अर्थः—१ पीपल, २ पीपलामूल, ३ चव्य, ४ चित्रक और ५ सोंठ यह पंचकोल है. इसका अर्क गुल्म (गाँठ), प्लीह (बाँई कोखकी शूल) और उदररोगका नाश करता है. ॥ १० ॥

षड्रूषण और उसके अर्कके गुण ।

कणामूलोषणकणा चव्यचित्रकनागरैः ।
एतत्षड्रूषणं चोष्णं दीप्तिकारि विषापहम् ॥ ११ ॥

अर्थः—१ पीपलामूल, २ पीपल, ३ मिर्च, ४ चव्य, ५ चित्रक और ६ सोंठ यह षड्षण है. इसका अर्क गर्म है; जठराग्नि दीप्त करता है और विषका नाश करता है ॥ ११ ॥

चतुर्बीज और उसके अर्कके गुण ।

मेथिका चन्द्रसूरश्च कालाजाजी यवानिका ।
चतुर्बीजमिदं प्रोक्तं शूलाध्मानसमीरजित् ॥१२॥

अर्थः—१ मेथी, २ चंद्रसूर (हालम), ३ कालाजीरी और ४ अजवायन यह चतुर्बीज कहा है. इसका अर्क शूल, अफरा और वादीको जीतता है ॥ १२ ॥

अष्टवर्ग और उसके अर्कके गुण ।

जीवकर्षभकौ मेदकाकोल्यौ ऋद्धिवृद्धिके ।
अष्टवर्गोऽयमर्कस्तु भग्नसन्धानकृत्परः ॥ १३ ॥

अर्थः—१ जीवक, २ ऋषभक, ३ मेदा, ४ काकोली ५ क्षीरकाकोली, ६ ऋद्धि ७ वृद्धि और ८ महामेदा श्रेष्ठ यह अष्टवर्ग है. इसका अर्क कटे घावको जोड़नेमें है ॥ १३ ॥

बृहत्पञ्चमूल और उसके अर्कके गुण ।

बिल्वोऽग्निमन्थः स्योनाकः पाटला गणकारिका ।
पञ्चमूलं बृहत्प्रोक्तं तदर्कोऽत्यग्निदीपनः ॥ १४ ॥

अर्थः—१ बेल, २ अरणी, ३ सोनापाठा, ४ पाठा और ५ गंगेरन यह बृहत्पंचमूल कहा है. उसका अर्क जठराग्निको अति दीपन करता है ॥ १४ ॥

साधारण पञ्चमूल और उसके अर्कके गुण।

शालिपर्णी पृश्निपर्णी वार्ताकी कण्टकारिका।
गोक्षुरः पञ्चमूलं स्यात्तदर्कश्चाश्मरीप्रणुत् ॥ १५ ॥

अर्थः—१ शालिपर्णी, २ पीठा, ३ वार्ताकी, ४ कटहरी और ५ गोखरू यह साधारण पंचमूल है. इसका अर्क अश्मरीका नाश करता है ॥ १५ ॥

दशमूल और उसके अर्कके गुण।

उभाभ्यां पञ्चमूलाभ्यां दशमूलमुदाहृतम्।
तदर्कः सूतिकारोगत्रिदोषज्वरशोथहा ॥ १६ ॥

अर्थः—इन दोनों पंचमूलोंको दशमूल कहते हैं. उसका अर्क सूतिकारोगको, त्रिदोषको, ज्वरको और सूजनका नाश करता है ॥ १६ ॥

जीवनीयगण और उसके अर्कके गुण।

जीवंती मधुकं मुद्गा शालिपर्ण्यष्टवर्गकः।
जीवनीयगणस्यार्कः सर्वरोगविनाशनः ॥ १७ ॥

अर्थः—जीवनीया, महुवा, मूँगफली, मापपर्णी, शालिपर्णी और पूर्वोक्त अष्टवर्ग यह जीवनीयगण है. इसका अर्क सम्पूर्ण रोगोंका नाश करता है ॥१७॥

सुगन्धगण।

कर्पूरो मृगनाभिश्च कस्तूरी लतिका तथा।
गन्धमार्जारचौर्यं च श्रीखंडं पीतचन्दनम् ॥१८॥

कालीयकं च रक्ताङ्गं पतङ्गमगुरुद्वयम्।
देवदारुश्च सरलस्तगरं पद्मकं पुरुः॥ १९॥
सरनिर्यासकी रालः कुन्दरश्च शिलारसः।
सिल्हकश्च लवङ्गश्च जातीपत्रीफलं तथा॥ २०॥
एलाद्वयं दारुचीनी त्वक्पत्रं नागकेशरम्।
वालकं वीरणं मांसी कुंकुमं रोचना नखः॥२१॥
सुगन्धवीरणं बाला जटामांसी मुरा घनः।
सटीकर्चूर एकाङ्गी सुगन्धोऽयं गणोत्तमः॥२२॥

अर्थः—कपूर, कस्तूरी, स्पृक्का कस्तुरी बेली, सुगंधवाला मार्जार चौर्य्य (कस्तुरीका भेद), श्वेतचन्दन, पीतचन्दन, ॥ १८ ॥ कालीयक (कृष्णागरू), रक्तकांग (रक्तचंदन), पतंग, दोनों देवदारु, सरल, तगर, पद्मक, गूगल, ॥ १९ ॥ सर, निर्यास, राल, पालक, लोहवान, यावन, लोंग, जावित्री, जायफल, ॥ २० ॥ दोनों इलायची, दालचीनी, तज, पत्रज, नागकेशर, नेत्रवाला, मांसरोहिणी, गाँडर, दूब, काँस, मांस, केशर, गोरोचन, नखनखी, ॥ २१ ॥ सुगंधित खस, नेत्रबाला, जटामांसी, मुरहठी और कचूर ये सब ओषधियां इकट्ठी करनेसे इनका नाम उत्तम सुगंधगण है ॥२२॥

सुगन्धगणके अर्कके गुण।

विधिनिष्कासितो योऽर्को रुच्यः पाचनदीपनः।
मुखदौर्गन्ध्यहृन्नेत्र्यो लेपान्मेदश्रमापहः॥ २३॥

अर्थः—इनका अर्क विधिपूर्वक निकाला भया रोचक है; पाचन करता है; जठराग्निको प्रदीप्त करता है, मुखकी दुर्गन्धिको दूर करता है; नेत्रोंको गुणकारी है; लेपन करनेसे मेदेका रोग और श्रमको हरता है॥ २३॥

वीरण.

कुशः काशश्च दर्भश्च कत्तृणं भूतृणं तथा ।
श्वेतदूर्वा नीलदूर्वा रण्डदूर्वेति वीरणम् ॥ २४ ॥

अर्थः—कुश, काँश, डाभ, तृण, भूतृण, घास, श्वेतदूब, नीलदूब, गंडदूब और गाँड़र यह वीरणसंज्ञक है ॥ २४ ॥

वीरणार्कके गुण ।

वीरणार्को हरेच्छूलं सन्धुक्षयति चानलम् ।
क्षतसन्धानकृद्‌वृष्यो बलं कुर्यादनेकधा ॥ २५ ॥

अर्थः—वीरणका अर्क शूलको हरता है; अग्निको दीप्त करता है; कटेहुए घावोंको भरता है; पोष करता और अनेक प्रकारके बलको करता है ॥ २५ ॥

दुग्धकन्दगण ।

अश्वगन्धा च मुसली विदारी च शतावरी ।
क्षीरवाराहिका चेति दुग्धकन्दगणस्त्वयम् ॥२६॥

अर्थः—असगंध, मुसली, विदारीकन्द, शतावरी और क्षीरवाराहिका यह दुग्धकन्दगण है ॥ २६ ॥

दुग्धकन्दगणार्कके गुण ।

बालको लभते वीर्यं रिरंसुर्बालया सह ।
अस्यार्कस्य च पानेन कुर्यात्षोडशवार्षिकम् ॥२७॥

अर्थः—इसका अर्क बालकोंके लिये पुष्टिकारक है; वीर्यको बढ़ाता है; सुन्दर बलवाली तरुण स्त्रीके साथ संभोग करनेकी इच्छा होती है; इसका अर्क पीनेसे वृद्ध पुरुष सोलह वर्षकासा तरुण होजाता है. (और वृद्धा स्त्री भी षोडशवर्षकी कन्याके समान हो जाती है.) ॥ २७ ॥

लघुदन्त्यादिगण और उसके अर्कके गुण

लघुदन्ती बृहद्दन्ती इन्द्रवारुणिनीलिके।
वासयेच्च सुगन्धेन राजयोग्यं विरेचनम्॥ २८॥

अर्थः—लघुदन्ती, बृहदंती, इन्द्रवारुणी और नील इनके अर्कको सुगन्धसे सुगन्धित कर ले, तो वह अर्क राजयोग्य रेचक होजाता है॥ २८॥

बडके फलोंका अर्क और उसके गुण।

दुग्धमिश्रैर्वटफलैः कमलाच्छादनोद्भवः।
वरोऽर्कः शीतलो ग्राही वर्ण्यो भगसुगन्धकृत् २९

अर्थः—दुग्धसे मिलाये भये बड़के फलोंको कमलका पिधान देके जो अर्क खींचें वह अर्क शीतल है; मलको रोकता है; और वर्ण (रंग) उत्तम करता है तथा योनिको सुगंधियुक्त करता है २९

पीपलके फलोंका अर्क और उसके गुण।

मूलनालदलोत्फुल्लफलैर्युक्ता हि पद्मिनी।
तत्पिधानं पिप्पलस्य फलानां योनिदोषनुत् ३०

अर्थः—पद्मिनी (कमलिनी) की जड़, नाल, पत्र और फल, फूलयुक्त लेके इनका पिधान देके पीपलके फलोंका अर्क निकाले यह अर्क योनिदोषको हरता है॥ ३०॥

कमलबीजोंका अर्क और उसके गुण।

नूतनकं मृदुबीजं, स्थलपद्मिनिपत्रकं महद्वीर्यम्।
उद्धृत्य सम्यगर्कं, मण्डलमेकं समश्नीयात्॥३१॥

ऋतुदिनतो या ललना, पिबति कुचस्तम्भनं कुर्यात्
गर्भर्तुभीतिरहिता, रमयति पुनः कलप्रसूताऽपि ३२

अर्थः—स्थलपद्मिनीके नवीन और कोमल बीजोंको लेकर अच्छे प्रकार विधिपूर्वक अर्क निकालै. फिर एक मंडल (१५दिन) तक पान करै ॥ ३१ ॥ ऋतुदिन कहिये जिस दिन रजस्वला हो उस दिनसे लेके जो स्त्री पीवे तो कुच स्तम्भन (कड़े) करता है, और ऋतु तथा गर्भके भयसे रहित होवे, और रमण करता; चाहे वह दूसरीही बार प्रसूत होनेको हो तोभी गर्भ और ऋतुको रोक दे ॥ ३२ ॥

सुखपूर्वक प्रसव करनेवाला अर्क।

बल्यश्चक्षुर्हितस्तिंदोः पिहितः कुमुदैः स च।
उपोदकी तदर्कस्य पानात्सूते विवेदनम् ॥ ३३ ॥

अर्थः—तिन्दुकीवृक्ष बल बढ़ानेवाला और नेत्रोंकी ज्योति बढ़ानेवाला होता है; उसका रात्रिविकासी कमलोंके सहित पिधान देके अर्क निकालै. उस अर्कके पीनेसे प्रथम प्रसूता भी स्त्री पीडारहित होके सन्तान उत्पन्न करती है ॥ ३३ ॥

दुग्धवाले वृक्षोंका अर्क।

न्यग्रोधोदुम्बराश्वत्थपारिशप्लक्षपादपाः।
पञ्चैते क्षीरिणो वृक्षास्तेषामर्को व्रणप्रणुत् ॥ ३४ ॥
मन्दोष्णः स्नानतो लेपाद्विसर्पामयनाशनः।
शोथघ्नस्तस्य सेकेन भग्नसन्धानको भवेत् ॥३५॥

अर्थः—न्यग्रोध (बड़), उदुम्बर (गूलर), अश्वत्थ (पीपर), पारिश (कदम्ब) और प्लक्ष (पाकर) ये पांच वृक्ष दुग्धवाले हैं; इनका अर्क फोड़ोंका नाश करता है ॥ ३४ ॥

इस अर्कके स्नानसे मंदाग्नि प्रबल होती है; लेपसे फोड़,. फुंसी आदि विषीले दाग नष्ट होजाते हैं. उसके सेकसे सूजन नष्ट होती है और कटे घावको जोड़नेवाला होता है ॥ ३५ ॥

सेवंति आदि पुष्पोंका अर्क।

सेवंतीं शतपत्रं च वासन्तीं गुलदावदीम् ।
चंबेलीं यूथिकां चम्पां बकुलं च कदम्बकम्॥३६॥
छादयेत्केतकीपत्रैर्ग्राह्योऽर्को गुरुमार्गतः ।
पुष्पार्क इति विख्यातो मरिचैः सहितं पिबेत् ३७

अर्थः—सेवती, कमलिनी, माधवी, गुलदाउदी, चँबेली, जुही, चम्पा, अशोक, कदंब ॥३६॥ इन पूर्वोक्त द्रव्योंके फूल ले केतकीके पत्तोंसे ढाँककर गुरूके बताये मार्गसे अर्क खींचले तो यह पुष्पार्क कहाता है. इसको मिर्चके साथ पीवै ॥ ३७ ॥

उपरोक्त अर्कके गुण ।

मण्डलेऽर्कप्रयोगेन क्लीबोऽपि पुरुषायते ।
वर्षाधिकं तु यक्ष्माणं हन्याच्छ्रेष्ठो मृगांकतः ॥३८॥

अर्थः—एकमण्डल (पक्ष) भर इस अर्कके पीनेसे क्लीब (नपुंसक) भी पुरुषभावको प्राप्त होता है; यह अर्क एक वर्ष भरसे अधिक पीवे तो यक्ष्मा (क्षय) रोगको हरता है. यह मृगांकरससे भी श्रेष्ठ है ॥ ३८ ॥

विषोंके अर्कोंके गुण ।

वत्सनाभश्च हारिद्रः सौतिकश्च प्रदीपनः ।
सौराष्ट्रिकः शङ्खकश्च कालकूटहलाहलाः ॥ ३९ ॥
ब्रह्मपुत्रस्त्वमी ख्याता विषभेदास्तदर्कतः ।

लेपेन गण्डमालाद्या वातरोगाः प्रयान्ति हि॥४०॥

अर्थः—अब विषके भेद कहते हैं कि–१ वत्सनाभ, २ हारिद्र, ३ सौतिक, ४ प्रदीपन, ५ सौराष्ट्रिक, ६ शंखक, ७ कालकूट, ८ हालाहल ॥३९॥ और ९ ब्रह्मपुत्र यै विषोंके नौ भेद प्रसिद्ध हैं. इनका अर्क लेपन करनेसे गंडमाला आदि रोग तथा वातरोगोंको शांत करता है ॥ ४० ॥

चावलोंके भेद।

रक्तशालिः सकलमः पाण्डुकः शकुनाहतः ।
सुगन्धकः कर्दमको महाशालिरदूषकः ॥ ४१ ॥
पुष्पाण्डकः पुण्डरीकस्तथा माहिषमस्तकः ।
दीर्घशूकः काञ्चनको हायनो लोध्रपुष्पकः ॥४२॥
इत्याद्याः शालयः सन्ति बहवो बहुदेशजाः ।

अर्थः—अब चावलोंके भेद कहता हूं–१ रक्तशालि, २ सकलम, ३ पांडुक, ४ शकुनाहत, ५ सुगन्धक, ६ कर्दमक, ७ महाशालि ८ अदूषक, ॥ ४१ ॥ ९ पुष्पांडक, १० पुण्डरीक, ११ माहिषमस्तक, १२ दीर्घशूक, १३ कांचनक, १४ हायन और १५ लोध्रपुष्पक ॥४२॥ इत्यादि अनेक प्रकारके चावल अनेक देशोंमें पैदा होते हैं.—

चावलोंके अर्क अर्थात् मद्य।

तासां पिष्टं यथालाभं क्षिपेदष्टगुणे जले ॥ ४३ ॥
यावज्जीवसमुत्पत्तिं जीवानां विलयस्तथा ।
ततो दत्त्वार्कयंत्रे तन्मद्यं निष्कासयेत्सुधीः ॥४४॥

अर्थः—उनकी पिट्टी जितनी प्रकारकी मिलै आठगुणे जलमें डाल देवै ॥ ४३ ॥ जब उसमें जीव उत्पन्न होजावें तथा जीव

उसमें भरभी जावें तब उसको अर्कयंत्रमें रख, बुद्धिमान् उसका मद्य निकालै ॥ ४४ ॥

उक्त मद्य (मदिरा) के गुण ।

स्वाद्वी मृद्वी ग्राहिणी च बलदा ज्वरहारिणी ।
नानादुःखहरा स्निग्धा चात्युन्मादत्रिदोषजित् ४५

अर्थः—यह मदिरा स्वादवाली, मीठी, अन्नको रोकनेवाली, बल देनेवाली, ज्वरको हरनेवाली, अनेक दुःखोंको हरनेवाली, चिकनी और अति उन्मादको करनेवाली तथा त्रिदोषको जीतनेवाली है ॥ ४५ ॥

सतुष धान्योंके अर्क (मद्य) ।

मुद्गो माषो राजमाषो निष्पावश्च मकुष्ठकः ।
चणकाढकिमाङ्गुल्यातृणकण्डाः कलापकः ॥ ४६ ॥
द्विदलीकृत्य विदुषा ततश्चूर्णीकृतः पुनः ।
पूर्ववत्साधयेन्मद्यं तुषधान्यसमुद्भवम् ॥ ४७ ॥

अर्थः—मूँग, उरद, कालाउरद, निष्पाव (मटर), मकुष्टक (मोठ), चना, अरहर, मांगुल्या (मसूर), तृणकंड (खेसारी), कलापक (केराव) ॥ ४६ ॥ इनकी बुद्धिमान् जन दाल बनाकर फिर चूर्ण करलेवै, फिर पूर्वोक्त क्रमसे मद्य निकालै. यह मद्य तुष (छिलका) सहित धान्यसे निकालै ॥ ४७ ॥

उपरोक्त मद्यके गुण ।

मासार्द्धात्कुरुते दोषं नियमात्सगुणं च तत् ।
भूमिस्थमयनादूर्ध्वं तनुते गुणसन्ततिम् ॥ ४८ ॥
विण्मूत्ररोधमाध्मानं त्रिदोषोन्मत्तता रुजम् ।

शिरोजठरजङ्घासु व्रणानपि विनाशयेत् ॥ ४९ ॥
ईषन्मदकरं स्निग्धं हरेत्पूर्वोदितान् गदान् ।
संवासयेत्पञ्चबाणमुद्दीपयति चांनलम् ॥ ५० ॥

अर्थः—यह मद्य मासार्ध (पक्ष) पर्यंत अधिक दोष करता है पक्षके उपरान्त नियमपूर्वक सेवन करनेसे गुणवाला भी हो जाता है और अयन (६ मास) पर्यंत पृथिवीमें स्थित रहे तो अनेक गुण अधिक करता है ॥ ४८ ॥ मलमूत्रके रोधको, अफरेको, त्रिदोषसे उत्पन्न हुए उन्मादादिक रोगोंको और शिर, पेट, जाँघमें फोड़ा, फुंसियोंका भी नाश करै ॥ ४९ ॥ यह कुछ नशा करता है; चिकना है; पूर्वोक्त रोगोंको हरता है और पंचबाण कहिये कामदेवको चैतन्य करता है; तथा जठराग्निको दीप्त करता है ॥ ५० ॥

तेलके धान्योंके अर्क ।

तिलातसी च तोरी च त्रिविधश्चापि सर्षपः ।
द्विधा राजी खसं चैव बीजं कौसुम्भसम्भवम् ॥५१॥
एतानि तैलधान्यानि शटितानि च पूर्ववत् ।
ततो निष्कासयेदर्कं गन्धपाषाणवासितम् ॥ ५२ ॥

अर्थः—तिल, अलसी, तिड़सा और तीनों प्रकारकी सरसों, दोनों प्रकारकी राई खसखस और कुसुमका वीज ॥५१॥ ये तेलके धान्य हैं; पूर्ववत् इनको सानकर फिर गंधपाषाणकी वासना देके विधिपूर्वक यंत्रसे अर्क खींचलेवे ॥ ५२ ॥

तैलधान्योंके अर्कके गुण ।

मुहुर्विलेपतो रोगान्नरकुञ्जरवाजिनाम् ।
हरत्येव न सन्देहः स्वर्जिक्षारसमन्वितम् ॥ ५३ ॥

सर्वेषु कर्णरोगेषु बाधिर्ये कर्णपूरणम्।
अनेन घर्षयेच्छङ्खनयनाञ्जनमाचरेत् ॥ ५४ ॥
कण्डूपुष्पं जलस्रावं पक्षरोगं व्यपोहति।
अभ्यङ्गाद्द्रुनाशः स्याद्बल्यं त्वच्यं च केशकृत् ५५

अर्थः—फिर इस अर्कके लेप करनेसे मनुष्य, हाथी, घोड़ा, आदिकका रोग हर जाता है; इसमें सन्देह नहीं और इसमें सज्जीखार मिला भया ॥ ५३ ॥ कानके सम्पूर्ण रोगोंमें और बधिरता (बहिरापन) में कानमें भरा जावे तो सब दोष मिटैं और इसीको शंखसे घिसकर नेत्रोंको अंजन बनाय लेवै ॥ ५४ ॥ तो कंडू (खाज), पुष्प (फुल्ला), जलस्राव (जलका झरना) और पलक तथा भौंहके सब रोग हरै; और इसके उबटनसे दाद नष्ट होती है; कांति करता है; बल देवै; और त्वचा तथा केश बढ़ाता है ॥ ५५ ॥

शहदके भेद।

माक्षिकं भ्रामरं क्षौद्रं पौत्तिकं छात्रमित्यपि।
दार्ढ्यमौदालकं दालमित्यष्टौ मधुजातयः ॥५६॥

अर्थः—अब शहतकी जाति लिखते हैं कि–१ माक्षिक, २ भ्रमर, ३ क्षौद्र, ४ पौत्तिक, ५ छात्र, ६ दार्ढ्य, ७ औदालक और ८ दाल, ९ जाती शहदकी हैं ॥ ५६ ॥

ईखकी जाति।

पौन्डुको भीरुकश्चापि वंशकः शतपोटकः।
कान्तारस्तापसेक्षुश्च काष्ठेक्षुः शुचिपत्रकः ॥५७॥
नैपालो दीर्घपत्रश्च नीलपोरोऽथ कोशकृत्।
एता द्वादशसंख्याता इक्षूणां जातयः स्मृताः ।५८।

अर्थः—अब ईखकी जाति लिखते हैं–१ पौंडुक, २ भीरुक, ३ नैशक, ४ शतपोटक, ५ कांतार, ६ तापसेक्षु, ७ काष्ठेक्षु, ८ शुचिपत्रक, ॥५७॥ ९ नेपाल, १० दीर्घपत्र, ११ नीलपर और १२ कोशकृत् ये ईखोंकी १२ प्रकारकी जातियें हैं ॥५८॥

ईखसे उत्पन्न होनेवाले मद्य गुड़ आदिके भेद ।

फाणितं चैव मत्स्यण्डी गुडखण्डकमेव च ।
सिता सितोपला चैते षड्भेदा इक्षुजा मताः॥५९॥

अर्थः—और १ फाणित, २ मत्स्यंडी, ३ गुड, ४ खाँड, ५ सिता (बूरा), और ६ सितोपला (मिश्री) ये इक्षुसे उत्पन्न होनेवाले गुड़ आदिके छे भेद हैं ॥ ५९ ॥

अम्लवर्ग ।

आम्र आम्रातको धात्री लकुचं च कपित्थकम् ।
नारङ्गं द्विविधा जम्बू करमर्द पियारकम् ॥ ६० ॥
बीजपूरं च जम्बीरं निम्ब्वम्लीकाम्लवेतसम् ।
दाडिमं पर्वतद्राक्षा द्विधा बदरतूदकम् ॥ ६१ ॥
वृक्षाम्लं हरमंथं च चांगेरी त्वम्लवर्गकः ।

अर्थः—अब खटाईका वर्ग कहते हैं कि–आम, अमड़ा, आँवला, बड़हर, कैथ, नारंगी, दोनों जामुन, करौंदा, चिरौंजी, ॥६०॥ विजौरा, नीबू जँबीरी नीबू, अमिली, अम्लवेतस, अनार, पर्वतदाख (मुनक्का), दोनों बेर (झरबेरीके बेर, देशी बेर), शहतूत, ॥ ६१ ॥ वृक्षाम्ल (चूक), हरमंथ और चांगेरी यह खटाईका वर्ग होता है.–

अम्लवर्गसे राजवारुणी मदिरा बनाना।

शुण्ठी कणा कणामूलं यवानी मरिचानि च ॥६२॥
तुल्यान्येतानि सर्वाणि एभ्यो द्विघ्नोऽम्लजो रसः।
प्रोक्तान्तर्गतदिक्कान्नंस्वादुसंख्या नखोन्मिता ।६३।
सर्वेभ्यो द्विगुणं स्वादं स्थापयेन्मासमात्रकम्।
कुर्यादष्टप्रहरकं प्रत्यहं च ततः पुनः ॥ ६४ ॥
ततो निष्कासयेदर्कं सुरेयं राजवारुणी ।
मासं भूमौ निखातव्या तत ऊर्ध्वं च भक्षयेत् ।६५।

अर्थः—सोंठि, पीपरि, पीपलामूल, अजवायन व मिर्च ॥ ६२ ॥ ये औषध तोलसे बराबर लेकर इनसे दूना अम्ल-वर्गका रस मिलावे फिर उसमें अच्छे प्रकारका शहद और १२ प्रकारके इक्षुरस ॥ ६३ ॥ सबसे दूने पदार्थ इनको एक-मासतक रक्खै. बराबर रात्रिदिन रक्खा रहने दे फिर ॥६४॥ निकाल लेवै और यंत्रमें रख अर्क खींच लेवै. इस अर्कको राजवारुणी सुरा कहते हैं. इसको १ मासतक भूमिमें गाड़ देवै, उपरांत निकालकर भक्षण करै ॥ ६५ ॥

राजवारुणी मदिराकी प्रशंसा।

मया महेश्वरमुखात् श्रुत्वा तस्यै समर्पिताम्।
तेन दत्ता भैरवेभ्यो लोलजिह्वाः पिबन्ति ते। ६६।

अर्थः—यह सुरा महादेवजीने पार्वतीजीको सौंपीभई सुनके मैंने उनसे प्राप्त की, फिर उन्होंने भैरवजीको दी जो चंचलजिह्वा हुए बड़ी प्रीतिके साथ पान करते हैं ॥ ६६ ॥

राजवारुणीके गुण।

इयं सीता लघुः स्वाद्वी स्निग्धा ग्राही विलेखनी।

चक्षुष्या दीपनी स्वर्या व्रणशोधनरोपणी ॥ ६७ ॥
सौकुमार्यकरा सूक्ष्मा परं स्रोतोविशोधिनी ।
कषाया च रसाह्लादा प्रसादजनका परा ॥ ६८ ॥
वर्ण्या मेधाकरी वृष्या तथाऽरोचकतां हरेत ।
कुष्ठार्शःकासपित्तास्रकफमेहक्लमक्रिमीन् ॥ ६९ ॥
मेदतृष्णावमिश्वासहिक्कातीसारविड्ग्रहान् ।
दाहक्षतक्षयायैवं योगवाह्याऽम्लवातला ॥ ७० ॥

अर्थः—यह शीतल, हलकी, स्वादु, चिकनी, मल बाँधनेवाली, विलेखनी (मल उखाड़नेवाली), नेत्र बँधानेवाली, तेजी करनेवाली, फोड़ाफुंसीको शुद्ध करके भरनेवाली ॥६७॥ युवावस्था करनेवाली, बहुत बारीक नाडियोंकी अत्यन्त शोधनेवाली, कुछ कसीली, रसको आनन्द बढ़ानेवाली, प्रसन्नता उत्पन्न करनेमें परमपरायण ॥ ६८ ॥ सुन्दर शरीरका रंग और बुद्धि करनेवाली, शरीरपोषणी तथा अरुचिको हरनेवाली और कोढ़, बवासीर, खाँसी, पित्त, लोहू, कफ, धातुक्षीणता (क्षयी) कृमिरोग ॥ ६९ ॥ मेदोरोग, प्यास, वमन, श्वास, हिचकी, अतिसार, अजीर्ण, दाह और घावरोग इन सबका नाश करती है तथा योगवाही (नशारूप) खट्टी वातकारी सुन्दर सुरराजवारुणी कहाती है ॥ ७० ॥

क्षुद्रवारुणी मदिरा बनाना ।

कङ्गुश्चीणा कोद्रवश्च श्यामाको वनकोद्रवः ।
शणबीजं वंशबीजं गवेधुश्च प्रसाधिका ॥ ७१ ॥
यावन्त्येतानि चोक्तानि तुषधान्यानि वेधशः ।
सर्वान् संकुट्य यत्नेन वितुषीकृत्य यत्नतः ॥ ७२ ॥

तक्रे वा क्वचिदम्ले वा आकीटं तद्विनिःक्षिपेत् ।
ततो निष्कासयेन्मद्यं भवेत्सा क्षुद्रवारुणी ॥७३॥

अर्थः—कांगनी, चीण, कोदौं, शामा, बनकोदौं, सनके बीज, बाँसबीज, गरहेडुआ अन्न और तीनी ॥ ७१ ॥ जितने ये कहे हैं सो तुषधान्य समझने. सबको यत्नपूर्वक कूट करके विना भूसीका करै इस यत्नसे कि, नाममात्रको भूसी न रहै ॥ ७२ ॥ फिर तक्र (मठा) में वा और किसी खटाईमें कीड़ा पडैं तबतक छोड़ देवै. फिर निकालकर मद्य निकालै. वह क्षुद्रवारुणी कहाती है ॥ ७३ ॥

क्षुद्रवारुणीके गुण ।

मण्डलार्धं तु भोक्तव्या बहुक्लेशकरैर्नरैः ।
क्षुधा तृषा चिंता च पर्वतारोहणादिकम् ॥७४॥
एतत्संसेवितो नास्ति महाभारवहोऽपि वा ।
सूता समुपवेष्टाचेज्जयेत् प्रसववेदनाम् ॥७५॥

अर्थः—जो मनुष्य बहुत क्लेश करता है; भूख, प्यास, चिन्तासे युक्त होवै और पर्वतादिपर चढ़ना चाहै उसने आधे-मंडल (८ दिन) तक वह सेवन करनी ॥ ७४ ॥ जिसने इसका सेवन किया हो वह इतनी चीजोंको कुछ न समझे. चाहै बहुत बोझा भी ढोना हो. जो सूता (जच्चा) पर यह अमल बैठ जावै तो उसके पुत्र उत्पन्न होनेसमयकी सब पीडा दूर करै ॥ ७५ ॥

जाङ्गलमांसका अर्क (मदिरा)।

हरिणैणकुरङ्गाश्च पृषतत्यः कुशंबरः ।
राजीवोऽपि च मुण्डी चेत्याद्या जाङ्गलसंज्ञिकाः७६

एषां मांसं तु कणशः कृत्वा पूर्वद्रवे क्षिपेत् ।
संस्थाप्य मण्डलं पश्चादर्कं निष्कासयेत्ततः ॥७७॥
एवं सर्वत्र मांसस्य वारुणीकरणक्रिया ।

अर्थः—हिरण, तामड़ा, काला हिरण, कुछ काला चाँद-विंदेवाला, बारहसींगा, लालरंगवाला, कमलसमान वर्णवाला तथा बिनासींगका इनको जांगलसंज्ञक कहते हैं ॥ ७६ ॥ इनके मांसको लेके बारीक कन करके प्रथम कहे द्रव मठा वा किसी खटाईमें छोड़ देवै. उसीमें एक मंडलतक रखकर फिर अर्क निकाल लेवै ॥ ७७ ॥ इसप्रकार सर्व प्रकारसे मांसकी वारुणी करनेकी क्रिया है.—

जाङ्गलमांसार्कके गुण ।

पित्तश्लेष्महरी कश्चिद्वातला बलवर्द्धिनी ॥ ७८ ॥

अर्थः—यह वारुणी पित्त और कफको हरती है. कोई वायु लिये बल बढ़ानेवाली है ॥ ७८ ॥

बिलमें रहनेवाले प्राणी ।

गोधाशशभुजङ्गाश्च वृश्चिकाद्या बिलेशयाः ।

अर्थः—गोह, शश (खरगोश, चौगोड़ा) और साँप, विच्छू ये बिलमें रहनेवाले प्राणी हैं—

बिलेशयमांसार्क (मदिरा) के गुण ।

एतत्सुरा वातहरा बृंहणा बद्धमूत्रविट् ॥ ७९ ॥

अर्थः—बिलेशय मांसकी मदिरा बादीको हरती है; बलादिको बढ़ाती है; मलमूत्रको रोंकती है ॥ ७९ ॥

गुफामें रहनेवाले प्राणी ।

सिंहव्याघ्रवृका ऋक्षतरक्षुद्वीपिनस्तथा ।

बभ्रुजम्बुकमार्जारा इत्याद्याः स्युर्गुहाशयाः ॥८०॥

अर्थः—सिंह (नाहर), व्याघ्र (बघेला), भेड़िया भक्ष, तरक्षु (चीता), उल्लू, नेउला सियार और बिल्ली आदि गुफामें शयन करनेवाले हैं ॥ ८० ॥

स्निग्धो बल्यो हितो नित्यं नेत्रगुह्यविकारिणाम् ।

अर्थः—इनका मांस चिकना, बलकारी और नित्यही हितकारी है और नेत्र, गुह्यस्थानमें विकारवालोंको गुणकारी है.—

पर्णमृग पशुओंके अर्कके गुण ।

वानरा वृक्षमार्जारा वृक्षमर्कटकादयः ॥ ८१ ॥
एते पर्णमृगाश्चार्को वृष्यो नेत्र्यश्च शोषिणाम् ।
श्वासार्शःकासशमनोत्सृष्टमूत्रपुरीषकः ॥ ८२ ॥

अर्थः—वानर, वृक्षविलाव, वृक्षमाकड आदि ॥ ८१ ॥ ये पर्णमृग हैं. इनके मांसका अर्क पोषक है; नेत्रोंको हितकारी है; अंगशोष रोगियोंको हितकारी है; श्वास, बवासीर और खाँसीको दूर करके रोगीको अच्छा करता है; मलमूत्रको छुड़ाता है॥८२॥

विष्किरपक्षियोंके अर्कके गुण ।

वर्तिका लावगिरिका कपिञ्जलकतित्तिराः ।
कुलिङ्गकुलटाद्याश्च विष्किराः समुदाहृताः ॥८३॥
बल्यो वृष्यो त्रिदोषघ्न एतदर्कस्तु पथ्यकः ।

अर्थः—बटेर, बतक, जीतर, सपेद व पीला तीतर, गरगौआ और कबूतर ये विष्किर कहिये बखेर कर खानेवाले हैं ॥ ८३ ॥ इनका अर्क बलदायक, पोषक, त्रिदोषको हरनेवाला और पथ्य (हितकारी) है.—

प्रतुद पक्षियोंके अर्कके गुण ।

हारीतो धवलः पाण्डुश्चित्रपुच्छो बृहच्छुकः ॥८४॥
पारावतः खञ्जरीटः पिकाद्याः प्रतुदाः स्मृताः ।
कफपित्तहरो ग्राही बद्धविण्मूत्रको भवेत् ॥८५॥

अर्थः—हरितवर्ण, धौला, पीला व चित्रपंखी इतने प्रकारका तोता, बड़ा तोता ॥ ८४ ॥ तथा पहाड़ी तोता, कबूतर, खंजन, कोयल आदि ये प्रतुद कहिये दुख दिखाते हैं. इनके मांसका अर्क कफ पित्तको हरता है; मलको बाँधता है; मूत्रको भी रोकता है ८५

प्रसर पक्षियोंके अर्कोंके गुण ।

काको गृध्र उलूकश्च चित्तलः शशघातकाः ।
चाषो भाषश्च कुकुर इत्याद्याः प्रसराः स्मृताः ८६
एतत्सुरा भस्मकरी तस्मान्मेदस्विनो हिता ।

अर्थः—तथा कौआ, गिद्ध, उल्लू, चील, बाज, बड़ा गीध, कुकुर यह प्रसर कहिये फाड़के खानेवाले पक्षी हैं ॥ ८६ ॥ इनकी सुरा भोजनको शीघ्र भस्म करती है. इससे मेदाके रोगवालोंको हितकारी है—

ग्राम्यपशुओंके अर्कोंके गुण ।

कालीयच्छागगोमेषा हयाद्या ग्राम्यसंज्ञकाः॥८७॥
दीपनो वातहृत्पैत्तो बृंहणो बलवर्द्धनः ।

अर्थः—कालीय, बकरा, बैल, मेढ़ा, घोड़ा आदि गाँववर्ती हैं ॥ ८७ ॥ इनका अर्क अग्नि प्रदीप्त करता है; वादीको हरता है पित्तको बढ़ाता है; तथा बलको बढ़ाता है—

कूलेचर पशुओंके अर्कोंके गुण ।

लुलायगंडवाराहचमरीवारणादयः ॥ ८८ ॥

कूलेंचरा एतदर्को वृष्यः श्लेष्मविवर्धनः ।

अर्थः—भैंसा सूअर, गौ, हाथी आदि ॥ ८८ ॥ जलके निकट विचरनेवाले हैं. इनके मांसका अर्क बलकारी है और कफको बढ़ानेवाला है—

प्लवंगम पक्षियोंके अर्कोंके गुण ।

हंससारसकाचाक्षचक्रक्रौञ्चशशारिकाः ॥ ८९ ॥
नन्दीमुखसकादंबा बलाकाद्याः प्लवाः स्मृताः ।
एतन्मद्यं शुक्रकरं बल्यं स्निग्धं त्रिदोषनुत् ॥९०॥

अर्थः—हंस, सारस, काचाक्षि, चकवा, क्रौंच (ढेंक), शशारिक (बनतीतर) आदि ॥ ८९ ॥ नंदीमुख, बतक, बगुला आदि प्लवग कहिये उछलके उड़नेवाले कहे हैं. इनका मद्य वीर्य बढ़ाता है; बलकारी है; चिकना है; तीनों दोषोंको जीतता है।९०।

कोशस्थित शंख-सीपि आदिकोंके अर्कोंके गुण ।

शङ्खशङ्खनखश्चापि शुक्तिशम्बूककर्कटाः ।
एते कोशस्थिताश्चार्को बृंहणो बलवर्द्धनः ॥९१॥

अर्थः—शंख छोटा शंख, सीपी, घोंघा और गेंगटा ये सब कोथलेमें रहनेवाले हैं. इनका अर्क जठराग्नि और बलको बढ़ाता है ॥ ९१ ॥

पादियोंके अर्कोंके गुण ।

कुम्भीरकूर्मनक्राश्च गोधामकरशङ्कवः ।
कटिकः शिशुमारश्च इत्याद्याः पादिनः स्मृताः ९२
एभ्यो जाता सुरा वातहंत्री स्निग्धा विशेषतः ।

अर्थः—नाका, कछुआ, घडियाल, गोह, मगरमच्छ सांकुच और सूम, आदि ये सब गुणोंमें पूर्वोक्त कोशस्थोंके समान हैं ॥ ९२ ॥ इनकी सुरा विशेष करके वातको नाश करती है; और चिकनी है—

मत्स्योंके अर्कोंके गुण।

मत्स्यो मीनो विसारश्च झषो वैसारिणोण्डजाः ९३
सकटी पृथुरोमा च रोहितश्च सुदर्शनः।
एते मत्स्या एतदर्को रोचको बलवर्द्धनः ॥ ९४ ॥

अर्थः—मच्छ, मीन, विसार, झष, वैसारण, अंडज ॥९३॥ सकटी, पृथुरोमा, रोहित और सुदर्शन इतने प्रकारके मच्छ हैं. इनका अर्क रोचक हैं; और बलको बढ़ावनेवाला है ॥ ९४ ॥

नृमत्स्योंके अर्कके गुण।

नृमत्स्यार्कं तु निष्कास्य नानापुष्पैः सुवासितैः।
यः सेवयेन्मासषट्कं वलीपलितवर्जितः ॥ ९५ ॥

अर्थः—नरमच्छका अर्क अनेकप्रकारके फूलोंकी सुगंधित वासनासे निकाल करके जो छे मासतक पीवै तो बुढ़ापेसे रहित होकर सदा युवासमान रहै ॥ ९५ ॥

मनुष्यमांसके अर्कके गुण।

मनुष्यमांसजार्कंतु मासषट्कं तु सेवयेत्।
न क्रामति शरीरेऽस्य सर्पादीनां विषं क्वचित् ९६

अर्थः—मनुष्यके मांसका अर्क भी जो मनुष्य छः महीना सेवन करै उसके शरीरको साँप आदिका विष कभी नहीं व्यापै॥९६॥

अण्डोंके अर्कके गुण।

त्वगेला मरिचं चन्द्रो लवंगं जातिपत्रकम्।
दत्त्वाऽण्डानामुपरितो घृतं विंशतिभागिकम् ९७
अण्डार्कोऽयं स्वगुणकृद्वृष्यो वातघ्नशुक्रलः।

अर्थः—तज, इलायची, मिर्च, कपूर, लौंग और जावित्री, अंडोंके ऊपर लगाकर उनसे वीसवाँ भाग घी डालकर अर्क खींच लेवै ॥९७॥ यह अंडार्क अपना गुण करता है सो यह कि–शरीरपोषण करता है, वादीको हरता है, और वीर्य बढ़ाता है.—

निम्बाम्रांकुरसम्भूतो वसंते ग्रीष्मके पुनः ॥९८॥
सेवंतीशतपत्रीजो वर्षायां त्रिफलाभवः।
पारिजातककाश्मीरीजातोऽर्कःशरदि स्मृतः॥९९॥
यवानीगुलदावद्योर्हेमंते शिशिरे पुनः।
यवानीनिम्बुजं सेवेत्तस्य रोगभयं कुतः ॥४००॥
इति लङ्कानाथकृताऽर्कचिकित्सायां नानौषधविधानार्थं शतकं चतुर्थं संपूर्णम् ॥ ४ ॥

अर्थः—नीबूका अर्क आमके पत्तोंके साथ खिचाय वसंतऋतुमें पीवै और ग्रीष्मऋतुमें–॥ ९८ ॥ सेवती पद्मिनीसे खींचा हुआ अर्क गरमीमें, तथा वर्षामें त्रिफलाका, और मन्दार तथा कुम्हेरणका खींचा अर्क शरदऋतुमें पीवै ॥ ९९ ॥ अजवायन और गुलदाउदीका हेमंतमें, अजवायन और बिजौरे नींबूका अर्क शिशिरऋतुमें जो पीवै उसको रोगका भय कभी नहीं होवै ।४००।

इति श्रीमत्पण्डितनारायणप्रसादमुकुन्दरामकृत-
भाषाऽर्कप्रकाशे चतुर्थं शतकम् ॥ ४ ॥

अथ पंचमं शतकम् ५।

ज्वरस्तंभन अर्क।

ज्वरागमनकाले तु घृतार्कं मरिचैः सह।
एतद्द्वयं पिबेद्यस्तु ज्वरः संस्तंभितो भवेत् ॥१॥

अर्थः—ज्वरके आगमनसमय घृतार्कको कालीमिर्चके साथ लेके ये दोनों जो मनुष्य पीवै उसका ज्वर थँभ जावै ॥ १ ॥

शीतज्वरहारी अर्क।

एकविंशतिवाराणि कदल्यर्केण भावितम्।
चूर्णं तालं मुद्गमितं दिनाच्छीतं ज्वरं हरेत् ॥२॥

अर्थः—इकीस बार केलेके अर्कमें हरतालके चूर्णको भिगोय सुखावै मूँगभर मात्र देवै तो एक दिनमें शीतज्वरका नाश करै ॥ २ ॥

अन्य तिजारीज्वरनाशन अर्क।

मेथी वनाढ्या तुलसी कालामललवंगकैः।
भूनिम्बेनार्क उत्पन्नो निर्वापो मौक्तिकाक्षयोः। ३।
मारितस्य प्रवालस्य भस्मनो ज्वरनाशनः।

अर्थः—मेथी, वनमेथी, तुलसी, स्याह, आँवले और लौंग इनका अर्क चिरायतेके साथ निकालै उससे मोती और कौड़ीको बुझाय देवै ॥ ३ ॥ उसमें शुद्ध मूँगाकी भस्म मिलाके देनेसे शीतज्वर नष्ट होवै—

विषमज्वरहारी अर्क।

सुराजीर्णगुणाजाज्या निहन्ति विषमज्वरान् ॥४॥

अर्थः—पुराने गुड़का जीरेके साथ निकाला हुआ अर्क विषमज्वरका नाश करता है ॥ ४ ॥

सन्निपातज्वरहारी अर्क।

अर्कस्तु दशमूलानां लवंगमरिचान्वितः ।
सन्निपातं हरेत्तूर्णमुपलाभः सुशायिनाम् ॥ ५ ॥

अर्थः—दशमूल सरवन, पिठवन, दोनों कटेली, गोखरू, बेलकी जड़, नरवेल, अरलू, कंभारी और पाढ़) का अर्क लौंग मिर्च मिलाय देवै तो शीघ्रही सन्निपातका नाश करै और सुख-पूर्वक नींद आवै ॥ ५ ॥

अतिसारनाशक अर्क।

शृंगवेरं नागवेरं मग्नमैरण्डजे द्रवे ।
पर्पटान्निर्गतार्कस्तु हरेदामातिसारकम् ॥ ६ ॥

अर्थः—सोठ, नागवेल और दोनों एरंड इनके जलमें पित्त-पापड़ाको भिगोय अर्क निकालै. वह अर्क आँवके अतीसारका नाश करता है ॥ ६ ॥

पक्कातीसारनाशक अर्क।

धातक्याम्रास्थिबिल्वानि लोध्रेन्द्रयवतोयदाः ।
पर्यायं मांहिषं तक्रे तदर्कः पक्कसारहा ॥ ७ ॥

अर्थः—धाई, आमड़ा, बेल, लोध, इन्द्रयव और नागर-मोथा इन सबको कईवार भैंसके छाछ (मठा) में भिगोय अर्क खींचै. वह अर्क पक्कातीसारका नाश करता है ॥ ७ ॥

रक्तातीसारनाशक अर्क।

वत्सकत्वग्दाडिमत्वक्साधितो मधुनाऽन्वितः ।

दधिभक्ताशिनोऽर्कोऽयं रक्तातीसारनाशनः ॥ ८ ॥

अर्थः-कुड़ेकी छाल और अनारकी छालका अर्क शहतके साथ देवै और दहीभात पथ्य देवै तो यह अर्क रक्तातीसारका नाश करता है ॥ ८ ॥

प्रवाहीनाशन अर्क ।

धातकी बदरीपत्रकपित्थरसमाक्षिकम् ।
लोध्रं दधिप्लुतं चार्कः प्रवाहीनाशनः परः ॥ ९ ॥

अर्थः—धाई और बेरके पत्ते, कैथका रस, शहत, लोध इनका अर्क दहीमें मिलाय देवै तो प्रवाही अर्थात् बहुत पतले दस्तोंको आराम करै ॥ ९ ॥

संग्रहणीरोगनाशक अर्क ।

तक्रनिर्वापिता मुद्गास्तदर्को धान्यजीरकैः ।
सैन्धवेन समायुक्तो हन्यात्सङ्ग्रहणीगदम् ॥१०॥

अर्थः-छाछमें बुझाये हुए मूँगका अर्क धनियाँ जीराके साथ सेंधालवणसे मिलाय देवै तो संग्रहणी रोगका नाश करै १०

बालरोगनाशक औषध ।

एकविंशतिवाराणि गैरिकं चूर्णभावितम् ।
छिक्कन्यार्केण तद्धूमाद्बालरोगक्षयो भवेत् ॥ ११ ॥

अर्थः—शुद्ध गेरूका चूर्ण नकछिकनीके अर्कमें २१ वार भिगोय भिगोय सुखावै उसको फिर मंत्रसे धूनी देवै उस धूनीसे बालकका सब रोग नष्ट होजावै ॥ ११ ॥

बालग्रहशान्तिके लिये धूप।

पूतीदशाङ्गसिद्धार्थवचाभल्लातदीपकैः।
सकुष्ठः सघृतैर्धूपो बालग्रहविनाशनः ॥ १२ ॥

अर्थः—पूतिकांत, सफेद सरसों, बच, भिलावां, अजमोदा, कूट और घी ये सब एकत्र करके धूप बनाना. यह धूप बालग्रहोंको दूर करदेता है ॥ १२ ॥

ग्रहभूतपिशाचाद्याः पूतना मातृकादयः।
धूपेनानेन सर्वेऽपि न स्पृशन्तीह बालकम् ॥ १३ ॥
कङ्करः कोणकश्चैव सकोणकठिनस्तथा।
एतेषां नो भयं भूयाद्यदि धूपः प्रधूपितः ॥ १४ ॥
वेणी येण्या च संयुक्ता कुकुरा रक्तसारिका।
प्रभूता स्वरिता रात्रिर्न स्पृशन्ति इमाः शिशुम् १५
जीवन्ति ते वर्षशतं धूपस्यास्य प्रभावतः।
इमां विद्यां न यच्छन्ति ते नरा ब्रह्मघातिनः ॥१६॥

इति बालग्रहशान्तिधूपः।

अर्थः—ग्रह, भूत, पिशाच आदि और पूतना मातृकादि ये सब इस धूपसे बालकको नहीं ग्रहण करते हैं, अर्थात् ये सब रोग भाग जाते हैं ॥ १३ ॥ तथा बालकरोगके अन्यभी भेद हैं. कंकण, कोण, सकोण और कठिन इन रोगोंका भय नहीं होवै; जो बालकको यह धूप देवै ॥ १४ ॥ वेणी, येणी, कुकुरा, रक्तसारिका, प्रभूता, स्वरिता और रजनी ये बालमातृका, उस बालकको न छुवै अर्थात् प्रसन्नतापूर्वक सहाय करैं ॥ १५ ॥ इस धूपके प्रभावसे वे बालक सौ वर्षपर्यन्त जीते हैं. जो कोई इस विद्यको प्रकट किसीको देते नहीं अथवा

ग्रहण नहीं करते वे नर ब्रह्मघाती जानने ॥ १६ ॥ इस प्रकार यह बालग्रहशान्तिधूप वर्णन किया.—

मन्दाग्निनाशक अर्क।

शुण्ठी पथ्या दाडिमत्वक् सगुडा वारुणी कृता।
शोषणी सा द्विपलिका प्रोक्ता मन्दाग्निनाशिनी १७

अर्थः—सोंठ, हड़ व अनारकी छाल इनमें गुड़ मिलाय वारुणी अर्क खींचै. सो वारुणी दो पल देनेसे शोषणी, व मन्दाग्निका नाश करनेवाली कही है ॥ १७ ॥

हैजाको दूर करनेवाला अर्क।

पञ्चकोलं शिवाऽजाजी मरिचं चाम्लभावितम्।
तदर्को हरति क्षिप्रं दुर्निवारविषूचिकाम् ॥ १८ ॥

अर्थः—पंचकोल[1], हड़, कालाजीरा और स्याह मिर्च, खटाईसे मिलाय इनका अर्क खींच देनेसे न हटनेवाले भी हैजाको दूर करै ॥ १८ ॥

अजीर्णनाशन अर्क।

यवान्यर्को मुस्तयुक्तः कट्वम्लाभ्यां विलोडितः।
गन्धपाषाणधूपेन वासितोऽजीर्णनाशनः ॥ १९ ॥

अर्थः—अजवायनका अर्क मोथा मिलाय कड़वी खटाईके साथ गन्धपाषाणकी धूप देके पिलावै तो अजीर्ण रोगको दूर करै १९

विषमाग्निनाशक अर्क।

शुण्ठी कुलिञ्जनं चाम्लभावितं तस्य चार्कतः।
पट्ठयुक्तं हरेच्छीघ्रं विषमाग्निं न संशयः ॥ २० ॥

---

१ पञ्चकोल पृ. ८४ श्लोक १० में देखो.

अर्थः—सोंठ, और कुलंजन खटाईसे भिगोय उसके अर्कमें लवण मिलाय देवै तो निस्सन्देह शीघ्र विषमाग्निको हरता है ॥ २० ॥

जडान्नको भस्म करनेवाला अर्क ।

दुग्धं दधि घृतं मूत्रं पललं महिषोद्भवम् ।
एतदर्को यदा पीतो गुर्वन्नभस्मकाग्निहृत् ॥ २१ ॥

अर्थः—भैंसका दूध, दही, घी, मूत्र और मांस इनका अर्क खींचकर पीवै तो अन्नसे जो कोष्ठ भारी होगया हो, उसे और भस्मक अग्नि (दाहादि) इनको शान्त करता है ॥ २१ ॥

उदरकृमियोंको नष्ट करनेवाला अर्क ।

खुरासानी यवानी च कुबेराक्षो विडङ्गकम् ।
व्योषश्चैषां कृतो ह्यर्कोऽग्निमन्दस्य च जन्तुहृत् ।२२।

अर्थः—खुरासानी, अजवायन, पाढ़ल, वायबिड़ंग और व्योष (सोंठ, मिर्च, पीपरि) इनका अर्क मन्दाग्निसे उत्पन्न हुए रोगोंका नाश करता है ॥ २२ ॥

लीख और जुवोंको नष्ट करनेवाला अर्क ।

रसेन्द्रेण समायुक्तश्चार्को धत्तूरपत्रजः ।
नागवल्लीभवो वाऽपि लिक्षायूकाविनाशनः ॥२३॥

अर्थः—शुद्ध पारेके साथ धतूरेके पत्तोंका या शुद्ध पारेके साथ निकाला हुआ नागवेलीका अर्क लीख और जुवोंको नष्ट करदेता है ॥ २३ ॥

खट्मल, मच्छड़, डांस, सर्प आदि प्राणिनाशक अर्क।

खट्वायां वा गृहेवाऽपि हरितालार्कलेपनात्।
मत्कुणा मक्षिकाः सर्पा मशका यांति तत्क्षणात्॥२४॥

अर्थः—खाट (शय्या) में, वा गृह (घर) में हरतालका अर्क लेपन करनेसे खट्मल, मच्छड़, मक्खी, सर्प और डांस उसी समय नष्ट होजाते हैं॥ २४॥

कफ और कीड़ोंका नाशक अर्क।

तक्रे दत्त्वा पलाशस्य बीजान्यर्कं समादिशेत्।
तदर्कपानात् कफहृत् कृमीनां नाशनं भवेत्॥२५॥

अर्थः—पलाश (ढांक) के बीजोंका अर्क मठेमें भिगोकर निकालै; उस अर्कको पीनेसे कफरोगका और पेटके कीड़ोंका नाश होवै॥ २५॥

रुधिरकृमिनाशक अर्क।

रुधिरस्थेषु कृमिषु गन्धकार्कं पिबेत्तु यः।
रात्रौ जागरणं कुर्यात् रक्तकृमिनिवर्तनम्॥ २६॥

अर्थः—रुधिरके विषे स्थित कीड़ा हों तो जो मनुष्य गन्धकका अर्क पीवै और रात्रिको जाँगरण करै उसके रक्तमेंसे कीड़ा निवृत्त (दूर) हो जायंगे॥ २६॥

पाण्डुरोगनाशक अर्क।

लोहचूर्णं वाऽपि लोहं किट्टचूर्णं पृथक् पृथक्।
फलत्रिकत्र्यथ व्योषार्कभावितं पाण्डुनाशनम्॥२७॥

अर्थः—लोहचूर्ण, लोह और लोहकिट्टका चूरा इनको पृथक् २ लेके इनके साथ त्रिफला और त्रिकुटाका अर्क खींच लेवै उसके पीनेसे पाण्डुरोग नष्ट होता है ॥ २७ ॥

कामलारोगके ऊपर अर्क।

त्रिफलार्को गुडूच्यर्को समं देयं तु माक्षिकम्।
दद्यात्प्रातः कामलाहृद्द्रोणपुष्परसाञ्जनात् ॥ २८ ॥

अर्थः—त्रिफलाका अर्क और त्रिकुटाका अर्क इन दोनोंमें समान भाग सोनामाखीका अर्क मिलाके देवे वा दड़गल (गूमा) का अर्क रसांजनके साथ शयनसे उठकर (प्रातःकालमें) देवै तो कामलारोगका नाश होता है ॥ २८ ॥

मिट्टी भक्षण करनेसे होनेवाले पाण्डुरोगको हरनेवाला अर्क।

हरीतकी गुडूची च पर्यायं तक्रभाविता।
तदर्को नाशयत्येव पाण्डुं मृद्भक्षणोद्भवम् ॥ २९ ॥

अथः—हड़ और गिलोय बराबर लेके छाछमें भिगोय अर्क खींच लेवै. वह अर्क मिट्टी खानेसे उत्पन्न हुए पांडुरोगका नाश करता है ॥ २९ ॥

कुम्भकामलारोगनाशक अर्क।

गोमूत्रे भावयेद्धीमान्पर्यायं च शिलाजतुम्।
निष्कासितस्तदर्कस्तुकुम्भकामालिकापहः ॥३०॥

अर्थः—शिलाजीतको गोमूत्रमें भिगोय अर्क निकाल लेवै. वह अर्क कुंभकामला अर्थात् नेत्ररोग वा बहुत बिगड़े हुए पांडुरोगका नाश करता है ॥ ३० ॥

हलीमकरोगनाशक अर्क।

लोहचूर्णं घनार्केण भावयेच्छतवारकम् ।
पिबेत्तु खादिरार्केण हलीमकनिकृन्तनम् ॥ ३१ ॥

अर्थः—लोहचूर्णको नागरमोथाके अर्कमें सौवार भिगोय २ सुखावै और खैरके अर्कके साथ पीवै तो हलीमक (पांडुरोग भेद) रोगको काट देवै ॥ ३१ ॥

रक्तपित्तनाशक अर्क।

अट्टरूषकमृद्वीकापथ्यार्कश्च सशर्करः ।
वृषार्कोऽयं समधुको रक्तपित्तनिवारणः ॥ ३२ ॥
लोध्रप्रियङ्गुमृद्वीकाचन्दनार्को रसान्वितः ।
वासायाः क्षौद्रसंयुक्तो वन्ध्यायारक्तपित्तहृत् ॥३३॥

अर्थः—अडूसा, दाख और हरे इनका अर्क शकरके साथ, और वासाका अर्क महुवाके साथ पीनेसे रक्तपित्तको निवारण करता है ॥३२॥ लोध, कांगनी, दाख, श्वेत चन्दनका अर्क शुद्ध पारेके साथ पीवै अथवा वासेका अर्क शहतके साथ पीवै तो वंध्या स्त्रीके रक्तपित्त रोगको हरता है (और गर्भ उत्पन्न करता है) ३३

नाकमेंसे जो लोहू गिरता है उसके ऊपर अर्क।

अर्को दाडिमपुष्पोत्थो मृद्वीकासंभवोऽपि वा ।
पानान्नस्याद्धरेन्नासारक्तमाम्रास्थिजोपिऽवा ॥३४॥

अर्थः—अनारके फूलका अर्क वा दाखका अर्क वा आमकी गुठलीका अर्क पीनेसे नासाके रक्तादि रोगोंको हरता है ॥ ३४ ॥

कण्ठमें दाह होनेपर अर्क।

द्राक्षाभयापिप्पलीनामर्कश्च सितया युतः।
मधुना कण्ठदाहघ्नः पित्तश्लेष्महरः परः ॥ ३५ ॥

अर्थः—दाख, हर्र व पीपरि इनका अर्क मिश्रीयुक्त शहतके साथ पीनेसे कण्ठदाहका नाश करता है और पित्त व कफको निःशेष ही करता है ॥ ३५ ॥

अम्लपित्त होनेपर अर्क।

छिन्नोद्भवानिम्बपत्रपटोलदलसम्भवः।
अर्कः क्षौद्रान्वितो हन्यादम्लपित्तं सुदारुणम् ॥३६॥

अर्थः—गिलोय, नींबके पत्ते और परवलके पत्ते इनका अर्क शहतके साथ पीनेसे दारुण अम्लपित्तका नाश करता है॥३६॥

राजयक्ष्मारोगनाशक अर्क।

ऊर्ध्वमूर्ध्वं द्विगुणिता त्वगेला पिप्पली मता।
सितोपलार्कः सक्षौद्रः सघृतो राजयक्ष्मनुत् ॥३७॥

अर्थः—तज, इलायची व पीपरि ये एकसे दूसरी द्विगुण लेकर उनका अर्क निकालै तो वह अथवा सितोपलाका अर्क शहतके साथ पीनेसे राजयक्ष्मानाम महारोगको हरता है ॥३७॥

शोष और क्षयरोग होनेपर अर्क।

अजस्य हृदयार्कस्तु तन्मातृदुग्धसाधितः।
जीवनीयकषायं तु पिबेच्छोषक्षयप्रणुत् ॥ ३८ ॥

अर्थः—बकरेके कलेजेका अर्क उसीकी माता (बकरी) के

---

१ यह जीवनीयगण शतक ४, श्लोक १७ में कहा है.

दूधमें मिलाकर पीवै और पूर्वोक्त यह जीवनीयगणका कषाय पीवै तो शोष (शरीर सूखना) व क्षयरोगका नाश होता है॥३८॥

मार्गजनित शोषके ऊपर अर्क।

चन्दनोशीरसेवन्तीशतपत्राह्वसम्भवः ।
अर्को हरेदध्वशोषं दिवासुप्तस्य वेगतः ॥ ३९ ॥

अर्थः—चन्दन, खस, गुलाब और सेवती इनका अर्क मार्गशोष व दिनके सोयेही हरारतको शीघ्र दूर करता है ॥ ३९ ॥

व्रणशोथनाशक अर्क।

दुग्धसंस्थापितकटुत्रयादर्कं समाहरेत् ।
ससितं व्रणशोथघ्नं यूषमांसरसाशिनः ॥ ४० ॥

अर्थः—दूधमें भिगोके त्रिकुटेका अर्क खींचै सो अर्क शक्करके साथ पीनेसे व्रण और शोथका नाश करता है. इसके सेवनमें मांसरसके साथ खिचड़ी खावै ॥ ४० ॥

छातीके घावपर अर्क।

बलाऽश्वगन्धा कम्भारी वटपत्री पुनर्नवा ।
दुग्धनिर्वापितो वाऽर्क उरःक्षतनिवारणः ॥ ४१ ॥

अर्थः—खरैंटी, असगन्ध, खँभारी, वोढ़पत्री और साँठी इनको दुग्धमें भिगोय अर्क निकाल पीवै तो छातीके घावकी पीड़ाका नाश करता है ॥ ४१ ॥

अत्यंत बढ़े हुए कफरोगके ऊपर अर्क।

धूर्तबीजत्रिकटुकयवान्यर्कविभावितम् ।
लवणं शतवारं च कफं हन्यात्सुदारुणम् ॥ ४२ ॥

अर्थः—धतूरेके बीज, त्रिकुटा (सोंठ मिर्च पीपरि), अजवायनके अर्कसे सौवार भिगोया सुखाया लवण अतिकठिन कफ़रोगका नाश करता है ॥ ४२ ॥

खाँसीसे उत्पन्न हुए क्षयरोगपर अर्क ।

कण्टकारीभवोऽर्कस्तु सकृष्णः सर्वकासहा ।
ककुभस्य त्वचा चूर्णं वासार्केण विभावितम् ॥४३॥
सितोपलाघृतमधुसंयुक्तः क्षयकासहृत् ।

अर्थः—कटेलीकी जड़का अर्क पीपरीके साथ पीनेसे सब प्रकारकी खाँसीको दूर करता है. अर्जुनवृक्षकी छालका चूर्ण अडूसेके अर्कमें भिगोवै ॥ ४३ ॥ मिश्री, घी, शहतके साथ पीनेसे क्षय, खाँसीके क्षयको हरता है.—

सूखी खाँसीको दूर करनेवाला अर्क ।

कण्टकारीयुगद्राक्षावासाकर्चूरनागरैः ॥ ४४ ॥
पिप्पलीखाखसैरर्कः शर्करामधुसंयुतः ।
शुष्ककासहरश्चैषो महादेवेन भाषितः ॥ ४५ ॥

अर्थः—दोनों कटाई, दाख, बासा, कचूर, सोंठ ॥ ४४ ॥ पीपरि, खस और खसदाना इनका अर्क शक्कर व शहदके साथ पीनेसे खाँसीको हरता है, यह महादेवजीने कहा है ॥ ४५ ॥

श्वासरोगको दूर करनेवाला अर्क ।

कूष्माण्डकशिफार्कस्तु कोष्णः श्वासं क्षणाद्धरेत् ।
आर्द्रकार्को माक्षिकेन युक्तः श्वासनिवारणः ॥४६॥

अर्थः—कूम्हेड़ेकी जड़का अर्क कुछ गरमगरम पीवै तो क्षणमात्रमें सांसका रोग नष्ट होवै और अदरखका अर्क शहतके साथ सेवन करनेसे श्वासरोगका निवारण करता है ॥४६॥

हिचकीको दूर करनेवाला अर्क।

स्विन्ना दुग्धे तु या शुण्ठी तदर्कस्तत्क्षणाद्धरेत्।
गुडद्रवेण वा सिद्धो हन्याद्धिक्कां न संशयः॥४७॥

अर्थः—दूधमें भीगीहुई सोंठका अर्क अथवा गुड़के द्रावसे बना हुआ जो अर्क वह उसी क्षण हिचकीका नाश करता है, इसमें संदेह नहीं ॥ ४७ ॥

स्वरभेदनाशक अर्क।

अर्को वा पंचकोलानां शृङ्गवेररसान्वितः।
गोघृतक्षौद्रसंयुक्तः स्वरभेदविनाशनः ॥ ४८ ॥

अर्थः—पंचकोल[1]का अर्क अदरखके साथ वा गोघृत और शहतके साथ पीवै तो स्वरभेद अर्थात् बिगड़े हुए स्वरकी आवाजको सुधारै और स्वरभेदका नाश करै ॥ ४८ ॥

उत्तम स्वर करनेवाला अर्क।

निम्बूरसेन मधुना मरिचैरवधूलितम्।
कुलिञ्जनार्कं पिबति रक्षसः किन्नरायते ॥ ४९ ॥

अर्थः—नींबूके रससे, शहतसे, व काली मिर्चोंसे घोले-हुए कुलंजके अर्कको पीवै तो राक्षस भी किन्नरके समान स्वरवाला हो जावै ॥ ४९ ॥

अरुचिको दूर करनेवाला अर्क।

मूलपत्रं यवानी च तिन्तिडीरससंयुतः।
सटितो हन्ति गण्डूषादर्कः सर्वमरोचकम् ॥ ५० ॥

---

१ यह पंचकोलवर्ग पृष्ठ. ८४ श्लोक १० में कहा है.

अर्थः—मूल और पत्तों समेत अजवायन इमलीके रसमें सनाभया ऐसा जो जल उससे कुल्ला करनेसे सब प्रकारका अरुचिरोग नष्ट करै ॥ ५० ॥

वमनको दूर करनेवाला अर्क ।

अश्वत्थत्वग्भवो वाऽपि कमलाक्षोद्भवस्तथा ।
माक्षिकाद्रिसमुत्थो वा दूर्वाजो वा हरेद्वमीन् ॥ ५१ ॥

अर्थः—पीपलकी छालसे उत्पन्न हुए वा कमलगट्टेसे उत्पन्न हुए वा सोनामाखीसे उत्पन्न हुए अथवा दूबसे उत्पन्न हुए अर्कको पीनेसे वमि (वमन) के रोगोंका नाश होवै ॥ ५१ ॥

प्यासको दूर करनेवाला अर्क ।

मुस्तपर्पटकोदीच्यधान्यचन्दनबालकाः ।
एतदर्को हरेदाशु सर्वतृष्णां न संशयः ॥ ५२ ॥

अर्थः—मोथा, पित्तपापरा, हाऊवेर, धनियां, चंदन, नेत्रवाला इनका अर्क शीघ्रही सब प्रकारके तृषारोगको निस्संदेह हरता है ॥ ५२ ॥

मुखशोष हरनेवाला अर्क ।

अमलं कमलं कुष्ठं लाजाश्च वटरोहकम् ।
अर्कीकृतं मधुयुतं मुखशोषनिवारणम् ॥ ५३ ॥

अर्थः—आँवला, कमलगट्टा, कूट, धानकी खील और बड़की जटा इनका बनाया हुआ अर्क शहतके साथ चाटनेसे मुखका सूखना दूर होवै ॥ ५३ ॥

क्षयके कोपको दूर करनेवाला अर्क ।

मध्वर्को वाथ दुग्धार्को हिंस्यात्कोपं क्षयोद्भवम् ।

अर्थः—शहतका अर्क वा दूधका अर्क क्षय रोगसे उत्पन्न कोपको हरता है—

घावकी पीडा, आँव और वमनसे उत्पन्न हुई प्यासको हरनेवाला अर्क।

तृष्णां हरेच्च रक्तार्को हतक्षतसमुद्भवाम् ॥ ५४ ॥
षड्रूषणवचाबिल्वजातोऽर्कस्त्वामसंभवाम् ।
मदनार्कः समाहन्यात्तृष्णां गुर्वन्नजां वमेः ॥ ५५ ॥

अर्थः—रक्तका अर्क तृष्णाको हरता; व मारनेसे हुए घावकी पीडाको हरता है ॥ ५४ ॥ षड्रूषण, बच व बेल, इनका अर्क आँवसे उत्पन्न तृषा (प्यास) को हरता है और मैनफरका अर्क भारी अन्नसे उत्पन्न हुई तृषा व वमनका नाश करता है ॥५५॥

दुर्बल रोगी पुरुषकी प्यासको हरनेवाला अर्क।

दुग्धस्यार्कः सितायुक्तः शतपत्रीसुवासितः ।
अतिरुग्णं दुर्बलं च देयं तृष्णानिवृत्तये ॥ ५६ ॥

अर्थः—मिश्री मिलाय कमलिनीसे सुवासना दिया हुआ दूधका अर्क अतिरोगी व दुर्बल मनुष्योंकी तृषा (प्यास) दूर करनेके निमित्त देना चाहिये ॥ ५६ ॥

अतिमूर्च्छाको दूर करनेवाला अर्क।

कोलमज्जोषणोशीरकेशरैः पुष्पवासितैः ।
निष्कासितार्कः ससितो मूर्च्छां जयति दुस्तराम्५७

---

१ पीपरी, पीपरामूल, चव्य, सोंठ, चीता और कालीमिर्च यह षड्रूषण है (शतक ४, श्लोक ११).

मधूकसारसिन्धूत्थवचोषणकणैः समाः।
आसामर्कस्य नस्यं स्याच्छीघ्रं संज्ञाप्रबोधकृत्॥५८॥

अर्थः—कोल (बेर) की मींगी, काली मिर्च, खसकी जड़ व केसर इनका अर्क निकाल फूलोंसे वासना देकर पीवै तो वह अर्क बहुत कठिन मूर्च्छाको जीतता है॥ ५७॥ अथवा महुवेका सार, सेंधालवण, बच, स्याह मिर्च और पीपरि ये सब बराबर लेके इनका अर्क खींच नस्य देनेसे शीघ्र प्रबोध करता है अर्थात् मूर्छाका नाश करता है॥ ५८॥

विषनाशक अर्क।

निर्विष्यार्को मत्स्यपित्तायुक्तो विषभवं जयेत्।
मद्यजं यत्पिबेन्मद्यं सुगन्धद्रव्यवासितम्॥ ५९॥

अर्थः—निर्विषीका अर्क केदारकुटकीसे युक्त देवै तो विषको जीतता है वा मदिराके अर्कको सुगंधित औषधियोंमें मिलाय पीवै॥ ५९॥

तन्द्रा (आलस्य) को हरनेवाला अर्क।

पिबेद्धुशलभाजार्कं सघृतं चाम्लशान्तये।
ऊषणार्कोऽगस्तिरसैः कृतो हरति तन्द्रिकाम्॥६०॥

अर्थः—धमासाका अर्क घीके साथ अम्लशांतिके अर्थ पीवै. स्याहमिर्चका अर्क अगस्तियाका रस मिलाय पीवै तो तंद्रा (आलस्य) रोगको हरता है॥ ६०॥

निद्राको नष्ट करनेवाला अर्क।

सैन्धवं श्वेतमरिचं सर्षपः कुष्ठमेव च।
वत्समूत्रेण जातोऽर्कः स स्यान्निद्रानिवारकः॥६१॥

अर्थः—सेंधालवण, श्वेत मिर्च, सरसौं, कूट इनको बछड़ाके मूतमें मिलाय अर्क निकालैं; उस अर्कको पीनेसे निद्रा दूर होती है ॥ ६१ ॥

सब नशाको हरनेवाला अर्क।

मद्यं खर्जूरिमृद्वीकापरूषकरसैर्युतम् ।
सदाडिमरसैः पीतं सर्वमदात्ययं जयेत् ॥ ६२ ॥

अर्थः—मद्य (मदिरा) को खजूर, दाख, फालसा और अनार इनके रसमें मिलाय पीवै तो सम्पूर्ण मदात्यय अर्थात् बहुत खाने पीनेसे उत्पन्न जो मद (नशा) उसका नाश होवै ॥ ६२ ॥

कोदौंसे उत्पन्न हुए नशाके ऊपर अर्क।

कूष्माण्डार्को गुडयुतः कोद्रवोत्थमदात्यये ।

अर्थः—कुम्हेड़ेका अर्क गुडयुक्त पीवै तो कोदौंसे उत्पन्न हुए नशाको दूर करै—

धतूरेके नशाको दूर करनेवाला अर्क।

दुग्धार्कः सितया युक्तो धूर्तजे तु मदात्यये॥६३॥

अर्थः—दूधका अर्क मिश्री मिलाय धतूरेके नशाके अर्थ पीवै ॥ ६३ ॥

अन्य अनेक प्रकारके नशोंको हरनेवाला अर्क।

जलार्कः शीतलो हन्ति छर्दिमूर्छातिसारजम् ।
ताम्बूलोत्थं च चूर्णार्कः शर्करार्कस्तु पूगजम्।६४।

जातीफलोत्थं पथ्यार्कोऽम्लजो भंगासमुद्भवम् ।
शीततोयावगाहोत्थं शर्करादधिचार्कक: ॥ ६५ ॥
अयमेव बिभीतोत्थं खाखसोत्थं तदुद्भवः ।
निम्बार्कश्चाहिफेनोत्थं हरेत्पानात्ययं प्रिये ॥ ६६ ॥

अर्थः—जलका शीतल अर्क वमन, मूर्च्छा व अतिसार इनके मदका नाश करै. चूनाका अर्क पानके मदके अर्थ और शकरका अर्क सुपारीके मदके अर्थ पीवै ॥ ६४ ॥ हड़का अर्क जायफलके मदको हरै. खटाईका अर्क भाँगके मदको नाश करता है. शीतल जलमें तैरनेसे उत्पन्न हुए मदको शकरदहीका अर्क दूर करता है ॥६५॥ यही अर्क बहेड़ेसे उत्पन्न हुए मदका नाश करता है. खसखसका अर्क पोस्तके मदको नाश करता है. रावण कहता है कि, हे प्रिये ! नींबका अर्क अफीमके मदका नाश करता है ॥ ६६ ॥

दाहादिके ऊपर अर्क ।

कोलामलकसंयुक्तं धान्याम्लं सर्वदाहनुत् ।
छादयेत्तस्य सर्वाङ्गं तदर्केणैव वाससा ॥ ६७ ॥

अर्थः—बेर और आँवलाके साथ धनियेका अर्क सम्पूर्ण दाहका नाश करै. जिसके पवनका विकार हो उसके सब अंगमें छोटी कटाईका अर्क लगावै ॥ ६७ ॥

स्वेद (पसीना) नाशक अर्क ।

सर्वाङ्गार्धांगकः स्वेदो वृन्ताक्यर्कप्रलेपनात् ।
हस्तपादभवः स्वेदो मर्दनाद्गच्छतो भृशम् ॥६८॥

अर्थः—छोटी कटाईका अर्क लेपन करनेसे उत्पन्न हुआ

सब अंग और आधे अंगका स्वेद (पसीना). व मलनेसे हाथ पाँवका पसीना निकल जाता है ॥ ६८ ॥

सब उन्मादोंको हरनेवाला अर्क ।

शङ्खपुष्पीभवो वाऽपि कूष्माण्डफलसम्भवः ।
मधुकुष्ठान्वितश्चार्कः सर्वोन्मादविनाशकः ॥६९॥

अर्थः—शंखाहूलीका हो वा कुम्हेड़ेके फलका अर्क हो, शहत और कूटके साथ पीवै तो यह अर्क सम्पूर्ण उन्मादोंका नाशक है ॥ ६९ ॥

भूतोन्मादको हरनेवाला अर्क ।

ज्वालामरिचजार्कस्य पानान्नस्याद्विलेपनात् ।
अञ्जनात्प्रशमं यान्ति भूतोन्मादक्षयाः क्षणात् ॥७०॥

अर्थः—चीता और मिर्चका अर्क पीने, सूँघने, लेपन करने व अंजनसे क्षणमात्रमें भूतोन्माद रोग नष्ट होजाता है ॥ ७० ॥

मृगीरोगपर अर्क ।

केतकस्य फलार्कस्य नस्यात्कर्णप्रपूरणात् ।
पानादञ्जनतो हन्यादपस्मारं न संशयः ॥ ७१ ॥

अर्थः—केतकीके फलके अर्कके सूँघनेसे, कानोंमें पूरने (डालने) से, पीनेसे और अंजनसे मृगीरोग नष्ट होवै, इसमें संशय नहीं ॥ ७१ ॥

बहिरापननाशक अर्क ।

वचात्वक्पिप्पलीशुण्ठीहरिद्रायष्टिसैन्धवम् ।
अजमोदाजाजिजोऽर्कः कुर्याच्छ्रुतिधरं नरम् ॥७२॥

अर्थः—बच, तज, पीपरि, सोंठि, हरदी, मुलहठी, सेंधालवण, अजमोद और काला जीरा इनका अर्क मनुष्यके बहिरापनको नष्ट करता है ॥ ७२ ॥

बाहुशोष और अफरारोगके ऊपर अर्क ।

बाहुशोषे बलामूलकृतार्कः सैन्धवान्वितः ।
आध्माने क्षौद्रखण्डाढ्यास्तृवृतापिप्पलीभवः ॥७३॥

अर्थः—बाहुशोषरोगमें खरैंटीकी जड़का अर्क सेंधालवणके साथ गुण करै, और निसोथ व पीपरिका अर्क शहत और शक्करके साथ अफराका नाश करता है ॥ ७३ ॥

गृध्रसीरोगके ऊपर अर्क ।

अतिस्विन्नं तु गोमूत्रे बीजमेरण्डजं ततः ।
कृतार्कः पलमात्रस्तु पेयो गृध्रसिनाशनः ॥७४॥

अर्थः—एरंडीके बीज गोमूत्रमें खूब भिगोवै फिर उसका अर्क खींच लेवे. एक पलमात्र नित्य पीवै तो गृध्रसी रोग नष्ट होवै ७४

वायुलोहू-गांठके ऊपर अर्क ।

गुडूचीत्रिफलाम्भोभिर्भावितं गुग्गुलुं बहु ।
क्षीरेणैरण्डतैलेन तदर्कः क्रोष्टुशीर्षहा ॥ ७५ ॥

अर्थः—गिलोय, त्रिफला व मोथा इनसे बहुत भिगोया गूगल और दूध एरंडके तेलके साथ खींचा हुआ उसका अर्क क्रोष्टुशीर्ष अर्थात् वायुलोहू गाँठकी सूझनको दूर करता है ॥७५॥

बादीको नष्ट करनेवाला अर्क ।

शेफाल्येरण्डसेहुण्डधत्तूरार्काश्वमारकैः ।

वक्रीकृतशिवामांसविषैरर्कः समीरहा ॥ ७६ ॥

अर्थः—राननिर्गुंडी, एरंड, थूहर, धतूरा, आक, कनेर, शृगालमांस और विषोंके साथ इनका अर्क बादीका नाश करता है ॥ ७६ ॥

वातरक्तहर अर्क ।

गुडूच्यर्कः शुण्ठियुक्तो वातरक्तहरः परः ।
वत्सादन्युद्भवोऽर्को वा पीतो गुग्गुलुसंयुतः॥७७॥

अर्थः—गुर्चका अर्क सोंठके साथ वातरक्तविकारका नाश करै; वा गिलोयभेदका अर्क गूगल मिलाय पीनेसे वातरक्तको हरता है ॥ ७७ ॥

ऊरुस्तंभहर अर्क ।

त्रिफलाग्रन्थिकव्योषभवमर्कं समाक्षिकम् ।
ऊरुस्तम्भविनाशाय समूत्रं वा पुरार्ककम् ॥७८॥

अर्थः—त्रिफला (आँवला बहेड़ा हड़) पिपलामूल और त्रिकुटाका अर्क शहत मिलाय ऊरुस्तम्भनाशके अर्थ पीवै; वा गोमूत्रके साथ गूगलका अर्क पीवै ॥ ७८ ॥

आमवात और रूखापननाशक अर्क ।

शटी शुण्ठी शिवा सोग्रा देवाह्वाऽतिविषा स्मृता ।
एषामर्कं पिबेदामवाते रूक्षे च भक्षयेत् ॥ ७९ ॥

अर्थः—कचूर, सोंठ, हड़, बच, देवदारु और अतीस इनका अर्क आमवातरोगमें पीवै और रूक्ष (खुश्की) में खावै ॥ ७९ ॥

पित्तजरोगोंपर अर्क ।

अर्कस्तु शतपत्र्या वा सेवन्त्या द्राक्षजोऽपि वा ।
चन्दनोशीरजो वाऽपि हन्यात्पित्तभवान् गदान् ८०

अर्थः—कमलिनी, गुलाब, दाख, चंदन और खश इनमेंसे किसीएक औषधिका अर्क सम्पूर्ण पित्तरोगोंको नष्ट करता है ८०

कफज रोगोंपर अर्क ।

वचाऽर्को वमनं हन्ति त्रिवृदर्को विरेचनम् ।
तुम्बुरार्कः पाचनेन कफरोगान्न संशयः ॥ ८१ ॥

अर्थः—बचका अर्क वमनका नाश करता है. निसोथका अर्क दस्तोंको, तुंबुरु वृक्षका अर्क पकानेसे निस्सन्देह कफरोगोंका नाश करता है ॥ ८१ ॥

साध्य और असाध्य शूलरोगोंके ऊपर अर्क ।

अश्वविष्ठाभवश्चार्को भ्रष्टहिङ्गुसमन्वितः ।
तत्कालं तु हरेच्छूलं साध्यासाध्यं न संशयः ॥८२॥

अर्थः—घोड़ेकी लीदका अर्क भुनी हुई हींगके साथ उसीक्षणमें साध्य और असाध्य शूलको निस्सन्देह हरता है ॥८२॥

पक्तिशूलहर अर्क ।

त्रिवृदेरण्डदन्तीनामर्केणैव विरेचनम् ।
निम्बार्कः कटुतुम्ब्यर्कः पक्तिशूलहरास्त्रयः ॥८३॥

अर्थः—निसोथ, अरंड और वज्रदंतीके अर्कहीसे दस्त होते हैं. नींवका अर्क, कड़वी तुंबीका अर्क ये तीनों पक्तिशूल हरनेवाले हैं ॥ ८३ ॥

उदावर्तरोगनाशक अर्क।

सव्योषं पिप्पलीमूलं त्रिवृद्दन्ती च चित्रकम्।
एतदर्कं गुडगुडमुदावर्तविनाशनम् ॥ ८४ ॥

अर्थः—त्रिकुटा, पीपलामूल, निसोथ, वज्रदन्ती और चित्रक इनका अर्क गुड़ मिलाय पीनेसे उदावर्त दरदमात्रका नाश करता है ॥ ८४ ॥

अफरारोगको हरनेवाला अर्क।

त्रिवृत्कृष्णाहरीतक्यो द्विचतुःपञ्चभागिकाः।
गुडयुक्तश्चैतदर्को हन्त्याध्मानं न संशयः ॥ ८५ ॥

अर्थः—निसोथ दो भाग, पीपरि चार भाग और हर्र पाँच भाग इनका अर्क गुडके साथ पीनेसे निस्सन्देह अफरा-रोगका नाश करता है ॥ ८५ ॥

हृदयरोगनाशक अर्क।

हरीतकीवचाशस्त्रापिप्पलीनागरोद्भवः।
शटीपुष्करमूलोत्थश्चार्को हृद्रोगनाशनः ॥ ८६ ॥

अर्थः—हड़, वच, पीपरि व सोंठ इनका अर्क और कचूर, पुहकरमूलका अर्क हृदयके रोगोंका नाश करता है ॥ ८६ ॥

बायगोलेके ऊपर अर्क।

कुमारिकार्कः सरसः सर्वगुल्मविनाशनः।
दुग्धशुक्तिभवार्कं वा भक्षयेद्वा गुडान्वितम् ॥८७॥

अर्थः—घीग्वारके पाठेका अर्क पतला पीवै तो सब प्रकारके गुल्मरोगोंका नाश करता है; वा दूधका अर्क गुड़के साथ पीवै ॥ ८७ ॥

रक्तगुल्मनाशक अर्क ।

पलाशवज्रशिखरीचिञ्चार्कतिलनालजाः ।
यवजः स्वर्जिका चेंति क्षारार्को रक्तगुल्मनुत् ॥८८॥

अर्थः—ढाक, पारीख, थूहर, ओंगा, इमली, तिलनाली, जवाखार और सज्जी इनका खारी अर्क रक्तगुल्म (गोलेके रोग) को हरता है ॥ ८८ ॥

प्लीहारोगनाशक अर्क ।

समुद्रशुक्तिजार्को वा पिप्पल्यर्कः सदुग्धकः ।
अर्कार्को वा सलवणः प्लीहरोगविनाशनः ॥८९॥

अर्थः—समुद्रसीपीसे खींचा अर्क वा पीपरिका अर्क दूधके साथ वा आकका अर्क लवणके साथ पीनेसे प्लीह (तापतिल्ली) के रोगका नाश करता है ॥ ८९ ॥

यकृद्रोगनाशक अर्क ।

कृष्णाविन्दसमुद्भूतो ह्यर्कः क्षारान्वितोऽपि वा ।
पूतीकरञ्जजोऽर्को वा यकृच्छूलविनाशनः ॥९०॥
पुनर्नवा सातला च हरिद्रा च कुमारिका ।
कृष्णाविन्दसमुद्भूतो ह्यर्कः क्षारान्वितोऽपि वा ९१

अर्थः—पीपरि और मोथासे उत्पन्न अर्क वा आकके खारके साथ पूतीकरंजवे भेदका अर्क दक्षिणपार्श्वकी शूलको नाश करता है ॥९०॥ साँठी, सातला (सेहुण्डभेद जिसे महाराष्ट्र देशमें सिकाकाई कहते हैं), हलदी और घीग्वारका पाठा इनका अर्क शूलको हरता है. पीपरि और माथासे उत्पन्न अर्क आकके खार सहित पीवै तो शूलको हरता है ॥ ९१ ॥

मूत्रकृच्छ्ररोगके ऊपर अर्क।

आरग्वधो दर्भकासपथ्याधात्रीत्रिकण्टकाः ।
यवासगिरिभेदार्कः सक्षौद्रो मूत्रकृच्छ्रहा ॥ ९२ ॥

अर्थः—अमलतास, दाभ, कास, हड़, आँवला, गोखरू, जवासा और पाषाणभेद इनका अर्क शहतके साथ मूत्रकृच्छ्रका नाश करता है ॥ ९२ ॥

मूत्राघातरोगके ऊपर अर्क।

कुशकाशबलामूलनलेक्ष्वर्कः सितायुतः ।
धान्यागोक्षुरजोऽर्को वा ससितो मूत्रघातहा ९३॥

अर्थः—कुश, कास, खरैंटीकी जड़, सोंठ और ईख इनका अर्क मिश्रीके साथ वा धनियाँ, व गोखरूका अर्क मिश्री डाल कर पीवै तो मूत्राघातरोगका नाश करता है ॥ ९३ ॥

पथरी और शर्करारोगके ऊपर अर्क।

कूष्माण्डार्को यवक्षारो हिङ्गुयुक् चाश्मरीप्रणुत् ।
शरपुंखाक्षारमूत्रभवोऽर्क शर्करां हरेत् ॥ ९४ ॥

अर्थः—कुम्हेड़ेका अर्क, जवाखार और हींग मिलाय पीवै तो अश्मरी (पथरी) रोग जाय. शरफोंकाका खार गोमूत्रका अर्क शक्करकेसी गाँठवाले मूत्ररोगका नाश करता है ॥ ९४ ॥

प्रमेहरोगके ऊपर अर्क।

गुडूच्यर्कः सितायुक्तो गोक्षुरार्कोऽथवा हरेत् ।
स्तम्भिन्यर्कोऽथवा मेहं मण्डलाद्दुग्धसेविनः ९५

अर्थः—गुर्चका अर्क मिश्री मिलाय वा गोखरूका अर्क वा

स्तंभिनीका अर्क प्रमेहका नाश करता है. इसके सेवनमें १५ दिन दूधका सेवन करना पड़ता है ॥ ९५ ॥

महामेदरोगनाशक अर्क ।

पिप्पल्यर्को मधुयुतो महामेदविनाशनः ।

अर्थः—पीपरिका अर्क शहतयुक्त महामेदका नाश करनेवाला है.—

शरीरदुर्गन्धिनाशक अर्क ।

बिल्वपत्रभवोऽर्कश्च देहदौर्गन्ध्यनाशनः ॥ ९६ ॥

अर्थः—बेलपत्रका अर्क देहकी दुर्गन्धिका नाश करता है ९६.

शरीरपुष्टीकरण अर्क ।

हयगन्धा सगोक्षूरा सत्वचा वटकाण्डकैः ।
निष्कासितो वा तन्मांसैरर्कः स्थौल्यकरः परः । ९७ ।

अर्थः—असगंध, गोखरू, तज और बड़की जटा इनसे निकाला हुआ अर्क वा मांसका अर्क बहुतही मोटा शरीर करनेवाला है ॥ ९७ ॥

कुष्ठनाशक अर्क ।

मञ्जिष्ठा त्रिफला तिक्ता वचा दारुनिशाऽमृता ।
निंब एभिः कृतार्कस्तु पानात्कुष्ठं विनाशयेत् ॥९८॥

अर्थः—मँजीठ, त्रिफला, कुटकी, बच, देवदारु, हलदी, गिलोय और नींव इनका अर्क पीनेसे कुष्ठका विनाश करे ॥९८॥

सिध्मकुष्ठनाशक अर्क ।

सर्षपा रजनी कुष्ठं मूलबीजं प्रियङ्गवः ।
काश्मीरी चैतदर्कस्तु सिध्मकुष्ठं विनाशयेत् ॥९९॥

अर्थः—सरसों, दोनों हलदी, कूट, मूलीके बीज, काँगनी और कुम्हेरण इनका अर्क सिध्मनामवाले कुष्ठका नाश करता है ॥ ९९ ॥

खुजली और दादको नष्ट करने-वाला अर्क ।

मञ्जिष्ठात्रिफलालाक्षालाङ्गलीरात्रिगन्धकः ।
समैस्तिलैश्च गोधूमैर्हरेत्पामां महद्रुजम् ॥ ५०० ॥
कुष्ठं कृमिजदद्रुघ्ननिशासैन्धवसर्षपाः ।
आम्रास्थिश्चैतदर्को वा लेपाद्दद्रुं विनाशयेत् ।५०१।

इति लङ्कानाथकृतार्कचिकित्सायां नानारोगनिवारणार्थं शतकं पंचमम् ॥ ५ ॥

अर्थः—मंजीठ, त्रिफला, लाख, करियारी, हलदी, गन्धक, बराबरके गेहूँ और तिलका अर्क पिये तो पामारोगको हरै. कूट, लाख, पवाँर, हलदी, सैंधव, सरसौं और आमकी गुठली इनके अर्कके लेपसे खुजली और दादरोगका नाश होजावै ॥ ५०० ॥

इति श्रीमत्पण्डितनारायणप्रसादमुकुन्दरामकृत-
भाषाऽर्कप्रकाशे पंचमं शतकम् ॥ ५ ॥

अथ षष्ठं शतकम् ६।

श्रीरावण उवाच।

गलगण्डरोगको नष्ट करनेवाला अर्क।

श्वेतापराजितामूलजातोऽर्कः सर्पिषा सह।
गलगण्डं हरेदेव मण्डलात्पथ्यभोजिनः ॥१॥

अर्थः—रावण मंदोदरीसे बोला—कि, हे प्रिये ? सपेद अनंताकी जड़का अर्क घीके साथ एक मंडल (पक्षभर) पीवै और पथ्यसे भोजन करै तो गलेकी गाँठको हरताही है ॥ १ ॥

गण्डमालाको हरनेवाला अर्क।

काञ्चनारत्वचोऽर्कस्तु शुण्ठीचूर्णेन संयुतः।
माक्षिकाढ्यो गण्डमालां बहुकालोद्भवामपि ॥२॥

अर्थः—कचनारकी छालका अर्क सोंठके चूरेके साथ व सोनामाखीके साथ पीवै तो बहुत दिनोंका हुआ भी गंडमालारोग नष्ट होवै ॥ २ ॥

ग्रन्थिरोगनाशक अर्क।

स्वर्जिकामूलकक्षारजातः शङ्खस्य चूर्णयुक्।
कृतस्तेन प्रलेपश्चेद्ग्रन्थिं हन्ति न संशयः ॥ ३ ॥

अर्थः—सज्जी और मूलीके खारका अर्क शंखचूर्ण डालकर जो किसीने लेप किया तो उसकी गाँठका निस्सन्देह नाश करता है ॥ ३ ॥

मेदअर्बुदरोगनाशक अर्क।

हरिद्रालोध्रपतगगृहधूममनःशिलाः।

मधुप्रगाढश्चार्कस्तु मेदोऽर्बुदहरः परः ॥ ४ ॥
वटदुग्धप्रगाढे च सप्ताहं कुष्ठरोमके ।
तदर्कस्य प्रलेपेन हरेदस्यार्बुदं क्षणात् ॥ ५ ॥

अर्थः—हलदी, लोध, पतंग, धमासा और मैनसिल इनको शहदके साथ गाढ़ा सानै फिर अर्क निकालै सो मेद अर्बुद आमादि रोगविशेषको हरता है ॥ ४ ॥ बड़के दूधमें साने हुए कूट, रोमक (साँभर लवण) का अर्क सात दिन लेप करनेसे अर्बुदरोग शीघ्रही दूर होजाता है ॥ ५ ॥

श्लीपदरोगनाशक अर्क ।

धत्तूरैरण्डनिर्गुण्डीवर्षाभूशिग्रुमूलजैः ।
अर्कैः पिष्टास्सर्षपास्तु प्रलेपाच्छ्लीपदापहाः ॥ ६ ॥

अर्थः—धतूरा, एरंड, सँभालू, श्वेतसाठी व सहिंजना इनकी जड़से बना हुआ जो अर्क उससे पिसी सरसों लेपन करनेसे श्लीपद (पादरोग) को हरता है ॥ ६ ॥

विद्रधिरोगनाशक अर्क ।

यवगोधूममुद्गानां पिष्टं सम्यग्विलोडितम् ।
विषमुष्टिभवार्केण विलेपाद्विद्रधिप्रणुत् ॥ ७ ॥
क्षौद्रजातेन मद्येन क्षालयेत्पक्वविद्रधिम् ।
अहिफेनाक्षफेनाभ्यां पूरणाद्विद्रधिं हरेत् ॥ ८ ॥

अर्थः—कुचलेके अर्कके साथ बिलोई हुई यव, गेहूँ और मूँगकी पीठी लेप करनेसे विद्रधि (फोड़ाविशेष) का नाश करै ॥ ७ ॥ शहदसे उत्पन्न मद्यसे पके हुए विद्रधि (फोड़े) को धोवै फिर अफीम और आखुफेनके भरनेसे विद्रधिका नाश करै ॥ ८ ॥

शोथ (सूजन) रोगको दूर करनेवाला अर्क ।

वांतघ्नौषधिजातार्कैस्तन्मांसार्कैस्तथा घृतैः ।
उष्णैः संसेचयेच्छोथं काञ्जिकार्केण वातजम् ॥९॥

अर्थः—बादीको हरनेवाली औषधसे बना हुआ अर्क और पूर्वोक्त मांसार्क ये दोनों कुछ गरम करके सुजे हुए पर सेंकै और काँजीके अर्कसे वातसे उत्पन्न सूजे हुए पर सेंक देवै ॥ ९ ॥

पित्तरक्त और चोटसे उत्पन्न हुई सूजनपर अर्क ।

पित्तरक्ताभिघातोत्थं शोथं सिंचेच्च शीतलैः ।
क्षीराज्यमधुखण्डेक्षुजातार्कों मालतीभवैः ॥१०॥

अर्थः—पित्त, रक्त, और चोटसे उत्पन्न सूजनको ठंडे २ दूध, घी, शहत, शक्कर, ईख और चमेली इनके अर्कोंसे सेचन करै, तो सूजनको आराम होवै ॥ १० ॥

कफसे उत्पन्न हुई सूजनपर अर्क ।

कफघ्नौषधसञ्जातैरर्कैरुष्णैश्च सेचयेत् ।
तैलदुग्धाम्बुमूत्रैर्वा शोथं श्लेष्मसमुद्भवम् ॥११॥

अर्थः—कफके हरनेवाली औषधियोंके गरम २ अर्कसे वा तेल, दूध, जल, गोमूत्र इनसे कफविकारकी सूजनको सींचै तो आराम होवै ॥ ११ ॥

घावसे उत्पन्न हुई सूजनपर अर्क ।

विषोपविषसञ्जातैरर्कैः कोष्णैस्तु सेचयेत् ।

वारुण्या वा खाखसाकैर्व्रणशोथः क्षयं व्रजेत् ॥१२॥

अर्थः—विष और उपविषोंके गरम २ अर्कसे, वा वारुणी-मदिरा, वा खसखसके अर्कसे सेचन करै तो फोड़ा, सूजन नाश होजावै ॥ १२ ॥

सूजनपर अन्य उपाय ।

न प्रशाम्यति यः शोथः प्रलेपादिविधानतः ।
द्रव्याणि पाचनीयानि दद्यात्तत्रोपनाहके ॥१३॥

अर्थः—जो सूजन लेप आदि करनेसे दूर न हो तो वहाँ पाचन औषधोंका बंधन उसमें देवै ॥ १३ ॥

व्रणपाचन अर्क ।

शणमूलकशिग्रूणां मूलानि तिलसर्षपाः ।
अतसीसक्तवः किञ्चिदुष्णं देयं च पाचनम् ।१४।

अर्थः—सन, मूली, सहिंजना इनकी जड़ और तिल, सरसों, अलसी व सत्तू इनका अर्क कुछ गरम कर धोनेसे सूजन जल्दी पक जाती है ॥ १४ ॥

शस्त्रविना व्रणभेदनके उपाय ।

अन्तःपूयेषु वक्रेषु तथैवोत्संगवत्स्वति ।
गतिमत्स्वपि रोगेषु भेदनं सम्प्रयुज्यते ॥ १५ ॥
बद्धमूलातिपङ्केन तुवरीछिद्रकानलैः ।
व्रणसंयोगिनीशङ्खद्रावैः पूर्यात्तु यामकम् ॥ १६ ॥
तुवरीसदृशच्छिद्रं यामेनैकेन जायते ।
विना शस्त्रं शस्त्रकर्मकरमेतदपीडनम् ॥ १७ ॥

अर्थः—जिनके भीतरकी राध चुवने लगी है वा जो टेढ़े हों वा ऊँचाई लिये हों वा बालोंमें हों उनका भेदन करना, अर्थात् चीरना अच्छा होता है ॥ १५ ॥ जिसकी जड़में मिट्टी लपेटी हो, अरहरके बराबर छिद्र हो. फोड़ाके बराबर संयुक्त भई ऐसा छिद्र उसको प्रहरभरतक शंखद्रावसे भरी फोड़ेपर रखना ॥ १६ ॥ ऐसे एक प्रहर रखनेसे अरहरके बराबर छिद्र होजाता है. यह विनाही हथियारके औजार, कारीगरी और नहीं पीडा देनेवाली हथियारका काम भली प्रकारसे कर लेती है ॥ १७ ॥

व्रणशुद्धिके लिये अर्क ।

अविशुद्धव्रणस्य स्यादर्कः शुचिकरः परः ।
पटोलनिम्बपत्रोत्थः सर्वत्रैव प्रयुज्यते ॥ १८ ॥

अर्थः—विना शुधे फोड़ेका शोधन करनेवाला परवल और नींवके पत्तोंका अर्क सब फोड़ोंपर चुवाया जाता है ॥ १८ ॥

घावको भरनेवाला अर्क ।

अश्वगन्धाजहालोध्रकट्फलं मधुयष्टिका ।
समङ्गाधातकीपुष्पजातोऽर्को व्रणरोपणः ॥ १९ ॥

अर्थः—असगंध, कौंच, लोध, कायफल, मुलहठी, माई, धाई इनके फूलोंका अर्क फोड़ेके घावको शीघ्र भरदेता है ॥१९॥

शस्त्रसे हुए घावको भरनेवाला अर्क ।

खड्गादिच्छिन्नगात्रस्य मद्येनापूरितो व्रणः ।
तथा नागबलार्केण तीव्रां वा वेदनां हरेत् ॥ २० ॥

अर्थः—खड्ग (तलवार) आदिसे कटा हुआ घाव मदिरासे भरै, अथवा नागबेलके अर्कसे तो सम्पूर्ण पीडाको हरै ॥२०॥

सब तरहके घावोंको भरनेवाले अर्क।

जातीपटोलनिम्बानां नक्तमालस्य पल्लवाः ।
सिक्थं च मधुकं कुष्ठं द्वे निशे कटुरोहिणी ॥ २१ ॥
मञ्जिष्ठा पद्मकं पथ्या लोध्रकं नीलमुत्पलम् ।
नक्तमालफलं तुल्यमहिफेनं च सारिवा ॥ २२ ॥
एतानि समभागानि कल्कीकृत्य प्रयत्नतः ।
गोमूत्रेण तदर्कं तु दशांशादिकवासितम् ॥ २३ ॥
विलेपनाद्भक्षणाच्च हरेत्सर्वव्रणामयम् ।
विषव्रणं च विस्फोटं विसर्पं कीटदंशितम् ॥ २४ ॥
दत्तशस्त्रप्रहारं च दग्धं विद्धं व्रणं तथा ।
नखदन्तक्षतं हन्ति दुष्टमांसं च कर्षयेत् ॥ २५ ॥
कटुवल्ल्याः कुमार्या वा कोष्णेनार्केण सेचयेत् ।
अग्निदग्धव्रणं तस्मात्सर्वचर्मप्ररोहणम् ॥ २६ ॥

अर्थः—चमेली, परवल, नींब, कंजावृक्षके पत्तोंका अर्क वा शहद, कूट, दोनों हलदी, कड़वी रोहिणी, ॥ २१ ॥ मँजीठ, पदमाक, हड़, लोध, नीला कमल, करंज वृक्षका फल, नीला थोथा, अफीम और सारिवा ॥ २२ ॥ ये सब बराबर लेके यत्नसे इनकी खलीसी करके गोमूत्रसे अर्क निकाल उसको दशांश आदिसे धूप देवै ॥ २३ ॥ सो उसे लेपन करनेसे, खानेसे सब प्रकारके व्रण (फोड़ा फुंसी) रोगोंका नाश करै. तथा विषवाले फोड़ेको, विस्फोटको, विसर्प (फफोला) कीड़ेसे डसा हुआ ऐसे घावोंको हरै ॥ २४ ॥ और लगे हुए हथियारकी मारको, जले हुए वा बींधे व्रणको, तथा नख वा

दाँतके काटे घावको दूर करता व दुष्टमांसको खैंचता है ॥२५॥ गजपीपरिका वा घीग्वारके पाठेका अर्क कुछ गरम करके अग्निसे जले हुए घावपर सेचन करै तो सब खाल भर आवै ॥ २६ ॥

सन्धिभग्नके लिये अर्क ।

अस्थिसंहारकं लाक्षागोधूमार्जुनसाधितम् ।
पिबेदर्कं सन्धिभग्ने सघृतं वा यथोचितम् ॥२७॥

अर्थः—हरसिंहार, लाख, गेहूं और अर्जुनवृक्षके पत्ते इनसे साधा हुआ अर्क घी मिलाय यथारुचि सन्धिभग्न (हड़-फूटन) में पीवै ॥ २७ ॥

बिगड़े हुए रक्तपर अर्क (मद्य).

हरिद्राक्षौद्रतुवरीरक्तचन्दनदार्विकाः ।
गुडेन साधितं मद्यं मृतरक्तं व्यपोहति ॥ २८ ॥

अर्थः—हलदी, शहद, अरहर, लाल चन्दन और दारुहल्दी इनका गुड़के साथमें साधा हुआ मद्य मरे खून रोगको खोता है २८

कुष्ठहर अर्क ।

कुक्कुटं कृष्णवर्णं तु जलेऽष्टगुणिते पचेत् ।
सरसं तं विपक्षं च दद्यात्कोष्ठप्रशान्तये ॥ २९ ॥

अर्थः—काले रंगका मुर्गा आठगुणे जलमें पकावै उसे रस-सहित पंख छोड़ अर्क निकाल कर कोठाकी शुद्धिके अर्थ देवै२९

नारीव्रण (नहसूर) के लिये अर्क ।

स्नुह्यर्कदुग्धदार्वीभिर्मद्यं क्षौद्रेण साधयेत् ।

वारंवारं भावितं च वर्तिनाडीव्रणान्तकृत् ॥ ३० ॥

अर्थः—थूहर और आकका दूध, दारुहलदी करके शहदके साथ मद्य निकालै, उसमें वारवार भिगोई बत्ती नाडीव्रण (नहसूर) का नाश करता है ॥ ३० ॥

भगन्दर रोगको हरनेवाला अर्क।

शुण्ठी च वटपत्राणि जातीपत्रामृते तथा।
सैंधवं तक्रनिक्षिप्तं तदर्कस्तु भगन्दरे ॥ ३१ ॥

अर्थः—सोंठ, बड़के पत्ते, जावित्री, गिलोय और सेंधा-लवण, मट्ठेमें भिगोय इनका अर्क निकाले वह भगन्दररोगका नाश करता है ॥ ३१ ॥

उपदंशको दूर करनेवाला अर्क।

लोध्रजम्बूवटशिवार्जुनरात्रिसमुद्भवः।
अर्कः पानादितो हन्यादुपदंशं नरस्त्रियोः ॥३२॥

अर्थः—लोध, जामुन, बड़की जटा, हड़, अर्जुनवृक्ष और हल्दी इनका अर्क पीने और लगानेसे पुरुष और स्त्री दोनोंके उपदंश (गर्मी) रोगका नाश करता है ॥ ३२ ॥

शूकरोगहर अर्क।

अश्वगन्धावरीकुष्ठमिसिसिंहीबलान्वितम्।
संशोध्य दुग्धेन तदा ह्यर्कः शूकगदापहः ॥३३॥

अर्थः—असगंध, वरियारी, कूट, सौंफ, कटेली और खरैंटी मिलाय दूधमें शोधन करके अर्क निकालै. वह अर्क शूकरोगका नाश करता है ॥ ३३ ॥

विसर्परोगहारी अर्क ।

यष्टीशिरीषतगरमांस्येलाचन्दनं शिला ।
आज्यं च वालकं कुष्ठमर्कः सेकाद्विसर्पजित् ॥३४॥

अर्थः—मुलहठी, सिरस, तगर, जटामाँसी, इलायची, चन्दन, मैनशिल, घी, नेत्रवाला, और कूट इनका अर्क सेचन करनेसे विसर्प (फोड़ा फुंसी) रोगका नाश करै ॥३४॥

स्नायुरोगनाशक अर्क ।

निर्गुण्ड्यर्को गव्यहव्ययुक्तो वा सुषवीभवः ।
शतिलार्को हरेच्छीघ्रं स्नायुरोगं न संशयः ॥ ३५ ॥

अर्थः—संभालूके अर्कमें, गौका घी, वा शहद मिलाकर पीवै, अथवा निसोथ वा थूहरका अर्क शीघ्र नसोंके रोगको हरै इसमें संशय नहीं ॥ ३५ ॥

शीतलारोगको दूरकरनेवाला अर्क ।

सप्तघस्रं तण्डुलाम्बुक्लिन्नार्दैन्द्रयवाप्लुतः ।
विस्फोटकान्निहन्त्येव तदर्को लेपसेवितः ॥ ३६ ॥

अर्थः—सात दिनतक चावलोंके जलमें भिगोये हुए इन्द्र-यवोंका अर्क पीने तथा लेप करनेसे विस्फोट (शीतला) रोगको हरता है ॥ ३६ ॥

दाहयुक्त विस्फोटरोगशमन अर्क ।

उत्पलं चन्दनं लोध्रमुशीरं सारिवाद्वयम् ।
एतदर्को धावनेन स्फोटदाहार्तिनाशनः ॥ ३७ ॥

अर्थः—कमल, चंदन, लोध और खस दोनों सारिवा

इनके अर्कसे धोनेसेही विस्फोटककी दाह और पीडाका नाश होता है ॥ ३७ ॥

फिरङ्ग रोगको दूर करनेवाला अर्क ।

शङ्खद्रावार्कके क्षिप्तः पारदो भस्मतां व्रजेत् ।
वल्लं गुडगतं खादेत्फिरङ्गविनिवृत्तये ॥ ३८ ॥
अपक्वं पारदं भुक्त्वा द्रोणपुष्प्यर्कसेवनात् ।
लेपनात्स प्रयात्येव फिरङ्गो नात्र संशयः ॥ ३९ ॥
पलाशपत्रवृन्तानां सप्ताहं तस्य सेवनात् ।
फिरङ्गो याति त्वरितं साध्यासाध्यो न संशयः॥४०॥

अर्थः—शंखद्राव नाम अर्कमें छोड़ा हुआ पारा भस्म होजाता है; इसको ३ रत्ती ले गुड़के साथ फिरंगवायुके नाश करनेके अर्थ खावै ॥ ३८ ॥ विना शोध हुआ कच्चा पारा खाके गुम्माके फूलका अर्क पीनेसे और लेपनसे फिरंगवायु जाता रहता है; इसमें सन्देह नहीं ॥ ३९ ॥ ढाकके पत्तोंके नाकुवोंसे निकसे हुए अर्कको सात दिनतक पीनेसे फिरंगरोग साध्य हो वा असाध्य हो निस्सन्देह तुरंतही जाता है ॥ ४० ॥

मसूरि[1]कारोगके ऊपर अर्क ।

स्नुहिमोहिलमोचीकार्कःसमसूरिकः कौतुकेनसम्पीतः । सकलं मसूरिकोपं गाढं जातं विनाशयेत्क्षिप्रम्॥ निम्बः पर्पटकः पाठा पटोलः कटुरोहिणी ।

---

१ मसूरिका रोगको कोई माता, कोई शीतला और लोग देवी कहते हैं. जो शरीरपर छोटी २ फुनसियां उठती हैं उनको गौर कहते हैं.

चन्दने द्वे ह्युशीरे च धात्री वासा दुरालभा ॥४२॥
एतदर्कः सितायुक्तो मसूरीमात्रनाशनः ।
मुखे कण्ठे व्रणे जाते गण्डूषार्थं प्रयुज्यते ॥४३॥

अर्थः—थूहर और हुलहुलका अर्क मसूर अन्नसहित निकाल ठंढा करके पीवै. वह सारे मसूरिका रोगोंका कोप भारी होनेपर भी शीघ्र नाश करै ॥ ४१ ॥ नींव, पित्तपापड़ा, पाठा, परवल, कड़वी रोहिणी, दोनों चंदन, दोनों खस, आँवला, वाँसा और जवासा ॥ ४२ ॥ इनका अर्क मिश्रीयुक्त लेनेसे मसूरी अर्थात् सब देहमें फुंसीरोगमात्रको हरै और मुख वा कंठमें फोड़ा होनेपर भी कुल्लोंके निमित्त यही दिया जाता है ॥ ४३ ॥

गौर रोगनाशक अर्क ।

गोमयार्कस्य लेपेन पानेन विलयं व्रजेत् ।
गोक्षुरं वाथ तत्पूर्वं ज्वरेऽद्याद्दधिसर्पिषा ॥ ४४ ॥

अर्थः—गोबरके अर्कके लेपसे वा पीनेहीसे विलय (नाश) हो जावै. गोखरूका अर्क ज्वर आनेके पहिले ज्वरवाला मनुष्य दही और घीके साथ पीवै ॥ ४४ ॥

शिवजी और ब्रह्माजीका संवाद-कथन ।

रावण उवाच ।

आदौ कृतयुगे ब्रह्मा महेशं वाक्यमब्रवीत् ।
तवाज्ञया मया देव सृष्टा नानाविधाः प्रजाः ॥४५॥
समस्ता भूस्तु तैर्व्याप्ता भवन्त्यन्येऽपि तद्विधाः ।
कामेन यान्ति भार्यासु पुनः सृष्टिः प्रवर्तते॥४६॥

गजैरश्वैर्मनुष्याद्यैर्व्याप्तेयं तु धराऽखिला ।
शीघ्रं यास्यति पाताले तत्र यत्नो विधीयताम् ४७

अर्थः—रावण बोला-हे प्रिये मंदोदरि! सुनो. प्रथम सत्य-युगमें ब्रह्माजीने श्रीमहादेवजीसे यह वाक्य कहा, कि-हे देव! तुम्हारी आज्ञासे हमने अनेक प्रकारकी प्रजा रची ॥ ४५ ॥ सम्पूर्ण पृथ्वीमंडल उस प्रजासे भरगया; फिर और भी वैसेही हुए जाते हैं. और वे स्त्रियोंमें कामसे रमते हैं फिर जन्मतेही बढ़ जाते हैं अर्थात् जिनके होनेका काम व विवाहादिकका कोई नियम नहीं, इस कारण हे शिवजी! बड़ी हानि है ॥४६॥ हाथी, घोड़ा, और मनुष्योंसे यह सम्पूर्ण पृथिवी भरगई. अब बोझसे शीघ्र वह पातालमें जायगी. इसका कोई यत्न करना चाहिये ॥ ४७ ॥

महाभयंकर कालपुरुषकी उत्पत्ति ।

एवं ब्रह्मवचः श्रुत्वा शूलमैक्षन्महेश्वरः ।
ततो जज्ञे पुमानेको भीमो घोरपराक्रमः ॥४८॥
रक्तान्तलोचनः क्रोधी वडवाग्नियुतो नरः ।
ऊर्ध्वकेशो ललज्जिह्वः कृताक्रोशोऽजितेन्द्रियः ।४९।

अर्थः—इस प्रकार ब्रह्माका वचन सुनकर महादेवजीने अपने त्रिशूलको देखा, तो देखतेही उसमेंसे एक भयानक घोर पराक्रमवाला पुरुष उत्पन्न हुआ ॥ ४८ ॥ वह कैसा कि, यमकेसे रक्तनेत्रवाला, क्रोधी, मानो अग्नि साथ लिये, ऊँचे केशवाला, जीभ निकाले, कामी, एकवारभी चिल्लाता भया ॥ ४९ ॥

भवितव्यताकी उत्पत्ति।

तद्दृष्ट्वा तु महादेवः पार्वतीं वाक्यमब्रवीत्।
जात एव महाक्रूरः सर्वसंहारकारकः॥ ५०॥
तस्य मोहनार्थाय देहि भार्यां यथोचिताम्।
एवं शिववचः श्रुत्वा स्वकं पृष्ठं ददर्श ह॥ ५१॥
ततो देवी समुत्पन्ना योच्यते भवितव्यता।
रूपलावण्यसंपन्ना पीनोन्नतपयोधरा॥ ५२॥
मारणास्त्रं मोहनास्त्रं कराभ्यां दधती शुभा।
श्वेतवस्त्रपरीधाना लज्जाप्रावृतलोचना॥ ५३॥
सा प्रणम्य तदा देवीं शिवयोरग्रतः स्थिता।
शस्त्रभारभरक्रान्तकालचित्तविमोहिनी॥ ५४॥

अर्थः—उसको देखकर शिवजी पार्वतीसे यह वचन बोले कि, हे पार्वती! यह तो होतेही बड़ा क्रूर सबका संहार करनेवाला है॥ ५०॥ अब इसके मोहनेके अर्थ एक यथोचित स्त्री तुम देवो. ऐसा सुनके गौरीजीने अपनी पीठकी ओर देखा॥ ५१॥ तो उसमेंसे एक देवी उत्पन्न हुई, जिसको भवितव्यता कहते हैं. वह रूप और सौंदर्य तथा चतुराईसे सम्पन्न थी; जिसके भारी और उठेहुए स्तन थे॥ ५२॥ मारण अस्त्र और मोहन अस्त्र अपने हाथोंमें धारण किये; श्वेतवस्त्र पहिरे; लज्जासे नीचे नेत्र किये॥ ५३॥ वह देवी प्रणाम कर शिवपार्वतीके आगे खड़ी हुई. शस्त्रोंके बोझसे आक्रांत और कालके चित्तको मोहनेवाली थी॥ ५४॥

काल और भविष्यताका विवाह ।

दृष्ट्वा तां पार्वती प्राह ममाज्ञां क्रियतामिति।
कालस्य भव पत्नी त्वं तस्य चित्तं विमोहय ॥ ५५ ॥
याचयस्व करं श्रेष्ठं कुरु कार्यं प्रजापतेः ।
ततः प्रीता तु सा प्राह देव्यग्रे प्रणता स्थिता ॥ ५६ ॥
ममाधीनमिदं सर्वं ब्रह्मविष्णुशिवात्मकम् ।
कालश्चायं ममाधीनः कोऽपि मां न च वेत्स्यति ।५७।
आब्रह्मस्तम्बपर्यन्तं विष्णौ देव्यां च शूलिनि ।
दृष्टिर्मम समैवास्ति मत्स्वरूपाविदस्त्विमे ॥ ५८ ॥
एवमुक्त्वा भवानीं सा पाणिग्रहमचीकरत् ।
कृतकृत्योऽभवत्काल उद्वाह्य भवितव्यताम् ॥ ५९ ॥

अर्थ—ऐसी उस स्त्रीको देखकर पार्वतीजीने कहा कि हमारी आज्ञाको कर. तू इस कालकी स्त्री होकर इसके चित्तको हरण कर ॥ ५५ ॥ जब वह प्रसन्न हो तब वर (पति) होनेके लिये याचना करके अपना विवाह करले; क्योंकि यह ब्रह्माजीका कार्य कर. तब तो वह देवी प्रसन्न मनसे पार्वतीके आगे नम्रतापूर्वक स्थित होकर बोली ॥ ५६ ॥ कि हे देवि ? यह ब्रह्माविष्णुशिवात्मक जगत् सब मेरेही आधीन है और यह काल भी मेरे आधीन है. औरोंकी बातही क्या ! मुझको कोई भी नहीं जानता है ॥ ५७ ॥ ब्रह्मासे लेकर स्तंब (तृण) घासपर्यन्त विष्णु, देवी, और शिवजीको मैं समान दृष्टिसे देखती हूं. और वे मेरे स्वरूपको नहीं जानते हैं ॥ ५८ ॥ यह पार्वतीसे कहकर उस भवितव्यताने कालके साथ विवाह किया और भवितव्यताको व्याहकर काल भी कृतार्थ होता हुआ ॥ ५९ ॥

रोगोंकी उत्पत्ति ।

कृतोद्वाहं तु तं ज्ञात्वा विधाता वाक्यमब्रवीत् ।
शीघ्रमागम्यतां स्वामिन् सृष्टिं संहार्यतामिति ॥६०॥
ततस्तु भृत्याः कालेन रचिताः स्वस्य तेजसा ।
भवितव्यतया सार्द्धं ततः स्वस्वामितेजसा ॥ ६१ ॥
शोषो ज्वरः पाण्डुसारश्वासपानात्ययादिकाः ।
अभ्यन्तरा गिरिचराः शतशस्तेन निर्मिताः ॥ ६२ ॥
सर्पा व्याघ्रवृकाः सिंहवृश्चिका राक्षसा गजाः ।
भूतप्रेतपिशाचाश्च बाह्यस्थाः परिचारकाः ॥ ६३ ॥
तस्याभ्यन्तरशक्त्या च कामिनी मोहिनी तृषा ।
लिप्साऽहंकृतिबुद्धिनिद्रास्सेर्ष्याभयादिकाः ॥६४॥
ग्रहणीकामलासूचीछर्दिमूर्च्छाऽश्मरीतृषाः ।
डाकिनी शाकिनी घोरा इत्येता बाह्यहेतुकाः॥६५॥

अर्थः—उसका विवाह होगया जानकर ब्रह्माजीने कहा कि–हे स्वामिन्! हे काल! शीघ्र आवो और अपनी सृष्टिका संहार करो ॥ ६० ॥ यह सुनकर कालने अपनेही तेजसे ऐसे २ बहुतसे सेवक रचे, फिर अपनी स्त्री भवितव्यताके साथ अपने स्वामी (महादेवजी) के तेजसे ॥ ६१ ॥ शोष, ज्वर, पांडु, अतिसार, श्वास, पानात्यय आदि भीतर बाहर विचरनेवाले सैंकड़ों रोग (सेवक) निर्माण किये ॥ ६२ ॥ सांप, व्याघ्र, भेड़िया, सिंह, बीछी, राक्षस, हाथी, भूत, प्रेत, पिशाच, बाहर रहनेवाले सेवक ॥ ६३ ॥ और उसके भीतरकी शक्तिसे

कामिनी, मोहिनी, तृषा, अहंकृति, बुद्धि, ऋद्धिनिद्रा, ईर्षा, भयआदिक ॥ ६४ ॥ संग्रहणी, कामला, सूची (विषूचिका), छर्दि, मूर्च्छा, अश्मरी, तृषा और डाकिनी, शाकिनी, घोरा व हत्या, यह बाहरकी शक्तिसे भई ॥ ६५ ॥

कालको गर्व होना ।

एवं परिवृतं दृष्ट्वा स्वसैन्यमविचारयत् ।
मत्तः कस्त्वधिको लोके न जाने भवितव्यताम् ॥६६॥
ब्रह्माविष्णुमहेशाद्याः हननीया मयाऽऽदितः ।
एवं विचार्य मनसि महेशं हन्तुमुद्यतः ॥ ६७ ॥

अर्थः—इस प्रकार अपने दलको सजाय इकट्ठे देखकर विचार करने लगा कि–संसारमें मुझसे अधिक कौन है ? मैं भवितव्यताको कुछ नहीं जानता ॥ ६६ ॥ अब प्रथम ब्रह्मा, विष्णु, महादेव आदि मारने चाहिये. ऐसा मनमें विचार करके महादेवजीको मारने उद्यत हुआ ॥ ६७ ॥

शीतला देवीकी उत्पत्ति तथा कालके गर्वका खण्डन ।

तं दृष्ट्वा तु महेशेन शक्तिरेका प्रदर्शिता ।
अतिघोरा विरूपाक्षी सङ्कीर्णजघनोदरा ॥ ६८ ॥
दन्दह्यमाना कोपेन ज्वलयन्ती दिशो दश ।
तस्यास्तु दृष्टिपातेन कालः सर्वाङ्गपीडितः ॥ ६९ ॥
तामेव विविशुः सर्वे कः प्रभुः कश्च सेवकः ।
बलिनः सर्व एव स्युः सेवका निर्बलस्य न ॥७०॥

नानास्फोटैः परिवृतो दह्यमानो रुषाग्निना ।
तस्येदृशीमवस्थां तु दृष्ट्वा दाहादयो गदाः ॥७१॥
भग्नाहङ्कारकं दृष्ट्वा तं कालं भवितव्यता ।
ईषद्विहस्य तं प्राह न ते साधुरहंकृतिः ॥ ७२ ॥
मदधीनं जगत्सर्वं मदाज्ञा क्रियतां त्वया ।
त्वया स्वतंत्रतारम्भः कृतस्तेनेदृशी गतिः ॥ ७३ ॥
एषा मदंशसम्भूता शीतला तां प्रसादय ।
अवश्यं तव साहाय्यं करिष्यति त्वयादृता ॥ ७४ ॥

अर्थः—उसको देखकर शिवजीने एक महाघोर, भयंकर नेत्रवाली, जाँघ और पेट फैला जिसका ऐसी शक्ति दिखलाई ॥६८॥ वह बहुत जलती हुई और अपने कोपसे दशोंदिशाओंको जलातीहुईसी थी. उसकी दृष्टि पड़तेही काल सब अंगोंसे पीड़ित भया ॥ ६९ ॥ और उसमें उसके सब साथी (रोग) बेवश होगये (समागये). वहाँ कौन स्वामी और कौन सेवक; देखो–बलवान्के सब सेवक होते हैं निर्बलके नहीं ॥ ७० ॥ फिर वह काल क्रोधाग्निसे जलकर अनेक फोड़ा फुन्सियोंसे युक्त हुआ. उसकी ऐसी अवस्था देख, दाह आदि सबरोग उसीको लगगये ॥ ७१ ॥ भवितव्यता उस अहंकारके पात्र कालको भ्रष्टाभिमान देखकर कुछ हँसकर बोली कि, आपका यह अहंकार अच्छा नहीं है ॥ ७२ ॥ हमारे आधीन यह सब जगत् है; इसकारण आपको हमारी आज्ञा करना चाहिये तुमने अपने वश हो यह क्रोध किया, इससे आपकी यह दशा हुई ॥ ७३ ॥ यह शीतला देवी हमारे अंशसे उत्पन्न हुई है उसको तुम प्रसन्न करो. तुम इसका आदर करनेसे निश्चय यह तुम्हारी सहायता करैगी ॥ ७४ ॥

शीतलादेवीकी स्तुति ।

काल उवाच ।

वंदेऽहं शीतलां देवीं रासभस्थां दिगम्बराम् ।
मार्जनीकलशोपेतां शूर्पालंकृतमस्तकाम् ॥ ७५ ॥
वंदेहं शीतलां देवीं सर्वरोगभयापहाम् ।
निवर्तंते यामासाद्य विस्फोटकभयं महत् ॥ ७६ ॥
शीतले शीतले चेति यो ब्रूयाद्दाहपीडितः ।
विस्फोटकभयं घोरं गृहे तस्य न जायते ॥ ७७ ॥
शीतले ज्वरदग्धस्य पूतिगन्धगतस्य च ।
प्रणष्टचक्षुषः पुंसस्त्वामाहुर्जीवनौषधम् ॥ ७८ ॥
शीतले तनुजान् रोगान् नृणां हरसि दुस्तरान् ।
विस्फोटकविशीर्णानां त्वमेकाऽमृतवर्षिणी ॥ ७९ ॥
गलगण्डग्रहा रोगा ये चान्ये दारुणा नृणाम् ।
त्वदनुध्यानमात्रेण शीतले यांति संक्षयम् ॥ ८० ॥
न मंत्रं नौषधं तत्र पापरोगस्य विद्यते ।
त्वमेका शीतले धात्रि नान्यां पश्यामि देवताम् ॥८१॥
मृणालतंतुसदृशीं नाभिहृन्मध्यसंस्थिताम् ।
यस्त्वां सञ्चिन्तयेद्देवि तस्य मृत्युर्न जायते ॥ ८२ ॥

अर्थः—काल भवितव्यता करके बताई हुई शीतलामाताको स्तुतिसे प्रसन्न करता है. काल बोला—श्रीशीतलादेवीको मैं प्रणाम करता हूं. कैसी देवी है? कि—गर्दभपर

सवार, दिशाओंके ही वस्त्र धारे, बुहारी और कलश लिये और सूपसें सजा हुआ है मस्तक जिसका ऐसी शीतला-देवीको मैं प्रणाम करता हूं ॥ ७५ ॥ सब रोग और भयकी हटानेवाली शीतला देवीकी मैं वन्दना करता हूं. जिसको प्राप्त होकर महाभयदायक विस्फोटक रोग छूट जावै ॥ ७६ ॥ जो दाहसे पीड़ित हुआ मनुष्य शीतला २ यह नाम कहै, उसके घरमें घोर विस्फोटकरोगका भय नहीं होता है ॥ ७७ ॥ हे शीतले ! ज्वरसे दग्ध हुए दुर्गन्धिवाले और अंधे इन प्राणियोंकी जिलानेवाली औषध तुम्हींको कहते हैं ॥ ७८ ॥ हे शीतले ! तुम मनुष्योंके शरीरमें उत्पन्न कठिन रोगोंको हरती हो और विस्फोटक रोगसे ग्रसित रोगियोंको तुम्हीं एक अमृत वर्षावनेवाली हो ॥ ७९ ॥ हे शीतले ! और जो मनुष्योंके गलगण्ड ग्रहादिक रोग हैं वे सब रोग तुम्हारे अनुस्मरणमात्रहीसे नाश होजाते हैं ॥ ८० ॥ इस पापरो-गका न कोई मन्त्र है, न औषध. हे शीतले ! तूही एक पालन पोषण करनेवाली है और किसी देवताको नहीं देखता हूं. जो इस रोगको कोई हरै ॥ ८१ ॥ कमलनालीके सदृश नाभि और हृदयके वीचमें विराजमान ऐसी तुझको जो कोई मनुष्य चिन्तवन करै, हे देवी ! उसकी मृत्यु नहीं होती है ॥ ८२ ॥

एवं स्तुतां तदा देवी शीतला प्रीतमानसा ।
उवाच वाक्यं कालाय वरं वरय सत्वरम् ॥ ८३ ॥

काल उवाच ।

अहो चाद्भुतमाहात्म्यं तव दृष्टं मयाऽधुना ।
पीडामपनय क्षिप्रं प्रहर्षं कुरु मे सदा ॥ ८४ ॥

अर्थः—ऐसी स्तुति कीगई शीतला देवी प्रसन्न मन हो कालसें बोली कि-शीघ्र वर मांग ॥ ८३ ॥ तब काल बोला—हे माता! अहो इस समय तुम्हारा मैंने अद्भुत माहात्म्य देखा, हमारी प्रीडाको नाश करके शीघ्र हर्ष (प्रसन्न मन) करौ ॥ ८४ ॥

भवितव्यताकी बड़ाईवर्णन ।

शीतलोवाच ।

एषा तव जगत्कर्त्री भार्येयं भवितव्यता ।
अस्याज्ञां संप्रवर्तन्ते ब्रह्मविष्णुमहेश्वराः ॥ ८५ ॥
अहं त्वं च महेशाद्यास्ततो धन्यास्तु ते मताः ।
बुद्ध्या धीर्जायते सा या यादृशी भवितव्यता॥८६॥
सहायं ते करिष्यामि हरिष्यामि इमाः प्रजाः ।

अर्थः—शीतलाजी बोली कि-यह जगत्की करनेवाली तुम्हारी भार्या भवितव्यता है, और इसीकी आज्ञामें ब्रह्मा, विष्णु, महादेव रहते हैं ॥ ८५ ॥ मैं और तुम और महेशादिक भी इसीमें मन दिये धन्य होरहे हैं. बुद्धिसे जैसी मति होती है; सो यह भवितव्यताही है ॥ ८६ ॥ मैं तुम्हारी सहायता करूंगी और इस प्रजाको हरूंगी—

गर्भनाशनकथन ।

उपोदकी तु या खादेदादावुष्णं ततः परम् ।
तं गर्भं भक्षयिष्यामि सापि चेद्दुष्टभुग्भवेत् ॥८७॥

अर्थः—कोई रजस्वला स्त्री प्रथम गरम खावै और दुष्ट भोजन करै तो फिर मैं उसके गर्भको भक्षण कर जाऊंगी ॥८७॥

गर्भरक्षाकथन ।

सन्तुष्टा शीतलेनाहं सदा तत्सेवकस्य च ।
प्रत्यहं या समश्नाति मालत्यर्कमुपोदकी ॥ ८८ ॥
तस्या गर्भं न स्पृशामि यावज्जीवं न संशयः ।

अर्थः—मैं शीतलसे बहुत प्रसन्न हूं और उस शीतल वस्तुके सेवन करनेवालेसे सर्वदा प्रसन्न रहती हूं. जो गर्भिणी मालतीका अर्क पान करै ॥ ८८ ॥ उसके गर्भको नहीं छूती हूं जबतक जीवै; इसमें सन्देह नहीं.

दाहशांतिकथन ।

मम कोपेन सञ्जातदाहो यस्तु नरोत्तमः ॥ ८९ ॥
दधिभक्तं ब्राह्मणेभ्यो जलमेभ्यः प्रदाय च ।
स्वयमश्नाति सप्ताहं तस्य पीडां हराम्यहम् ॥९०॥

अर्थः—मेरे कोपसे उठी दाहवाला जो मनुष्य ॥ ८९ ॥ दही और शीतलजल भात ब्राह्मणको देकर आप खाता है, उसकी सात दिवसमें सब पीडा हरती हूं ॥ ९० ॥

शीतलाष्टकमाहात्म्यकथन ।

अष्टकं च ममैतद्धि यः पठेन्मानवः सदा ।
विस्फोटकभयं घोरं कुले तस्य न जायते ॥ ९१ ॥
श्रोतव्यं पठितव्यं च नरैर्भक्तिसमन्वितैः ।
उपसर्गभयं तस्य कदापि नहि जायते ॥ ९२ ॥
अष्टकं च ममैतद्धि पठितं भक्तितः सदा ।
सर्वरोगविनाशाय परं स्वस्त्ययनं महत् ॥ ९३ ॥

शीतलाष्टकमेतद्धि न देयं यस्य कस्यचित् ।
दातव्यं सर्वदा तस्मै भक्तिश्रद्धान्वितो हि यः ॥९४॥

अर्थः—जो कोई मनुष्य यह मेरा अष्टक नित्य प्रति पढ़ता है उसके कुलभरमें घोर विस्फोटकका भय नहीं होता ॥ ९१ ॥ यह मनुष्योंको भक्तियुक्त सुनना व पढना चाहिये. इससे यह लपेटका भय उसको कभी नहीं होता है ॥ ९२ ॥ सर्वदा भक्तिपूर्वक हमारे इस अष्टकको पढ़ना. सब रोगोंके नाशके लिये यह अष्टक महाकल्याणका स्थान है ॥ ९३ ॥ यह शीतलाष्टक जिसको तिसको नहीं देना. उसको देना चाहिये जो भक्ति श्रद्धायुक्त होवै ॥ ९४ ॥

रावण उवाच ।

एवमुक्त्वा ययुः सर्वे तथैव भवितव्यता ।
तथा लोकान् जिघांसंती कालस्य वशमागता ।९५।

अर्थः—रावण बोला—हे प्रिये ! इस प्रकार कहकर सब चलेगये. वैसेही भवितव्यता भी चलीगई. वैसेही यह पूर्वोक्त सब रोग कालके वशमें आय लोगोंके मारनेकी इच्छा करते रहते हैं ॥ ९५ ॥

शीतलारिष्टनिवारणार्थ अर्क ।

अथ वक्ष्ये शीतलादिचिकित्सार्कं प्रभावतः ।
जात्यर्कं वा कदल्यर्कं शतपत्रार्कमेव च ।
यो भुञ्ज्याद्दधिभक्ताभ्यां शीतला तं न मारयेत् ९६

अर्थः—मैं शीतलाकी चिकित्साके अर्थ अर्क कहता हूं. चमेलीका अर्क, केलेका अर्क और कमलका अर्क, जो दही व भातके साथ खाय तो उसको शीतल नहीं मारता है ॥ ९६ ॥

शीतलाज्वरनाशक अर्क ।

चन्दनं वासको मुस्तं गुडूची द्राक्षया सह ।
एषामर्कः शीतलस्तु शीतलाज्वरनाशनः ॥ ९७ ॥

अर्थः—श्वेतचंदन, वासा, मोथा व गिलोय, इनका अर्क दाखके साथ खिँचा हुआ शीतल पीवै तो वह शीतलाके ज्वरका नाश करता है ॥ ९७ ॥

शीतलाव्रणनाशार्थ मंत्र व अर्क ।

तारो माया शीतलेति चतुर्थ्यन्तं हृदन्तकम् ।
मन्त्रमुच्चार्य यो दद्याद्दधीनि शतसंख्यया ॥ ९८ ॥
सचन्दनेन शीतेन शतपत्रार्ककेण च ।
अवश्यमेव सप्ताहप्रयोगाद्व्रणनाशनः ॥ ९९ ॥

इति श्रीलङ्कानाथकृतार्कप्रकाशे चिकित्साविस्फोटकनामनिवारणं नाम शतकं षष्ठम् ॥६००॥

अर्थः—मंत्रोद्धार यह है कि–"तारो माया शीतला" यह अंतमें चतुर्थी विभक्तिवाला मंत्र (तारो मायाशीतलायै नमः) पढ़कर सौवार जो चन्दन व ठण्ढे कमलके अर्कके साथ दही देवै ॥ ९८ ॥ तो अवश्य सात दिनके करनेसे व्रण (शीतलाके दाग) नाश होजावैं. यह शीतलारोग नाशनोपाय वर्णन किया ॥ ९९ ॥

इति श्रीमत्पण्डित–नारायणप्रसादमुकुन्दरामकृतभाषाऽर्कप्रकाशे व्रणादिविस्फोटकनिवारणंषष्ठं शतकम् ॥ ६००॥

अथ सप्तमं शतकम् ७।

बाल काले करनेवाला अर्क।

त्रिफली नीलिकापत्रं भृङ्गराज अयोमलः ।
अविमूत्रार्कसंपिष्टं लेपात्कृष्णीकरं परम् ॥ १ ॥

अर्थः—रावण बोला कि–हे प्रिये ! भेड़के मूत्रसे पीसे त्रिफला, कृष्णपुष्पीके पत्ते, भँगरा और लोहकिट्ट इनके अर्कका लेप करनेसे अत्यन्त श्यामवर्ण केश होते हैं ॥ १ ॥

इन्द्रलुप्त रोगको दूर करनेवाला अर्क।

मसी तु गजदन्तश्च छागीक्षीरं रसाञ्जनम् ।
वटप्ररोहकं पिष्टमिन्द्रलुप्तघ्नमौषधम् ॥ २ ॥

अर्थः—मसी, हाथीदांत, छाग (बकरी) का दूध, रसौंत; और वड़की जटा इनको पीस अर्क खींचै सो अर्क इन्द्रलुप्त कहिये केश (बालकोंका गिरना आदि) रोगोंके नाशनार्थ यह औषध है ॥ २ ॥

दारुणरोग नाशक अर्क।

आम्रबीजं च पथ्या च दुग्धनिर्वापितं त्र्यहम् ।
तदर्को हंति लेपेन त्र्यहाद्दारुणदारुणम् ॥ ३ ॥

अर्थः—आमकी गुठली व हड़, इनको तीन दिन दूधमें भिगोय रक्खै इनका अर्क तीन दिन लेपनेसे दारुण (गंध) रोगको नाश करता है ॥ ३ ॥

रूखापन दूर करनेवाला अर्क।

नीलोत्पलस्य किञ्जल्कमामलं मधुयष्टिका।
क्लिन्नं गोमूत्रके चैव तदर्कोऽरूक्षं नाशयेत्॥ ४॥

अर्थः—काले कमलकी केसर, आंवले मुलहठी, व इनको गोमूत्रमें भिगोय अर्क खींचै सो अर्क रूखापनका नाश करता है॥ ४॥

मुँहासेको हरनेवाला अर्क।

केवलं पयसां लिह्यात्तीक्ष्णाः शाल्मलिकंटकाः।
तदर्कस्य त्र्यहं लेपान्मुखदूषीर्विनश्यति॥ ५॥

अर्थः—केवल जलहीके साथ कठोर शाल्मली वृक्षके कांटोंके तीन दिन लेपसे मुखपर फुन्सीवाले मुँहासेको हरता॥ ५॥

मुखव्यंगरोगनाशक अर्क।

वटाङ्कुरं मसूराश्च मञ्जिष्ठा क्षौद्रमेव च।
जलक्लिन्नं तदर्कस्तु मुखव्यंगविनाशनम्॥ ६॥

अर्थः—बड़की जटा, मसूर, मँजीठ व शहद इनको जलमें भिगोय अर्क खींचै वह अर्क शहदके साथ लगानेसे मुखके व्यंगका नाश करता है॥ ६॥

अंगुलाष्टकरोगनाशक अर्क।

काश्मर्यर्केण कोष्णेन सिंचेदङ्गुलवेष्टकम्।
कोमलैः सप्तभिस्तस्य पत्रैर्बद्धं हरेद्गदम्॥ ७॥

अर्थः—कुम्हेरणके कुछ गरम अर्कसे सींचके उसीके कोमल २ सात पत्तोंसे लपेट तीन अंगुलका बंध देवै तो बंधरोगका नाश करता है॥ ७॥

कपिकच्छू और कंडूनाशक अर्क।

सर्वसैन्धवसिद्धार्थसिताकुष्ठार्कधावनात्।
कपिकच्छूः शमं गच्छेल्लिङ्गोत्थो नात्र संशयः।८।

अर्थः—राल, सेंधालवण, सरसों, मिश्री व कूट, इनके अर्कसे धोनेसे लिंगोत्थ कपिकच्छू (करछा) निस्सन्देह शमताको प्राप्त होता है ॥ ८ ॥

गुदाकी खाजके ऊपर अर्क।

शङ्खसौवीरयष्ट्यार्के प्रत्यहं क्षालयेद्गुदम्।
गुदकण्डूर्बालकस्य योगो हन्ति न संशयः ॥ ९ ॥

अर्थः—शंख, कांजी व मुलहठीके अर्कसे गुदाको नित्य धोवै तो यह प्रयोग बालककी गुदाकी खाजको निस्सन्देह नष्ट करता है ॥ ९ ॥

गुदनिस्सारणरोगके ऊपर अर्क।

पद्मिनीमृदुपत्राणामर्कं यः सितया सह।
गुदनिस्सारणं तस्य नश्येन्मासान्न संशयः ॥ १० ॥

अर्थः—पद्मिनीके कोमल २ पत्तोंका अर्क जो मिश्रीके साथ पीवै तो एक महीनामें निस्सन्देह कांच निकलना बन्द होवै ॥ १० ॥

आधाशीशीको दूर करनेवाला अर्क।

भृंगराजरसार्को यः क्षीरतुल्योऽर्कतापितः।
सूर्यावर्तं निहन्त्याशु नस्येनैव प्रयोगराट् ॥११॥

अर्थः—भाँगरेका अर्क बराबर दुग्धके साथ तपाय

(नाकसे पीवै) तो सूर्यावर्त (आधाशीशी) को हरता है. यह नास सब प्रयोगोंका राजा है ॥ ११ ॥

अन्य आधाशीशीपर अर्क ।

विडङ्गतिलकृष्णानि समं पिष्ट्वा प्रलेपयेत् ।
एतदर्कस्य नस्येन चार्द्धभेदं व्यपोहति ॥ १२ ॥

अर्थः—वायविडंग, तिल, अलसी बराबर ले पीसकर पीठी बनावै. इसके अर्कके सूंघनेसे आधासीसीका नाश होता है ॥ १२ ॥

शिरके दर्दपर अर्क ।

पथ्याक्षधात्रीरजनी–गुडभूनिम्बनिम्बकैः ।
गुडूच्यर्को हरेत्पीडां सर्वामपि शिरोद्भवाम् ॥ १३ ॥

अर्थः—हड़, भिलावां, आंवला, हलदी, गुड़, चिरायता, नींव व गिलोय, इनका अर्क सम्पूर्ण शिरपीडाका नाश करता है ॥ १३ ॥

कनपटीके दर्दपर अर्क ।

दार्वी हरिद्रा मञ्जिष्ठा सनिम्बोशीरपद्मकम् ।
मर्दनं चैतदर्कस्य शङ्खपीडाप्रशान्तिकृत् ॥ १४ ॥

अर्थः—दारुहलदी, मँजीठ, नींब, खस, और पद्माक् इनके अर्कके मालिश शंखपीडा (कनपटीदर्द) का नाश करता है ॥ १४ ॥

पावोंके खरुवे दूर करनेवाला अर्क ।

आरनालार्केण पादौ लिप्त्वा लेपोऽलसे हितः ।
पटोलकुनटीनिम्बरोचनामलकैस्तिलैः ॥ १५ ॥
केवलं भृङ्गराजार्कं उष्णो दार्वी सुपेषिता ।
पादे बध्वानयोः कल्कं दिनैकेन क्षयो भवेत् ॥ १६ ॥

अर्थः—काँजीके अर्कसे पैरोंको धो कर परवल, मैनशिल, नींव, गोरोचन, आँवले और तिल इनका लेप जिसके चरणोंमें छारुये होजावें उसको हितकारक है ॥ १५ ॥ केवल भाँगरेका गर्म अर्क, पिसी हुई दारुहलदीके साथ चरणमें बांधनेसे एकही दिनमें खारुवा रोगका नाश होजाता है ॥ १६ ॥

चर्मकीलं जन्तुमणिर्मशकस्तिलकालकः ।
उत्कृत्य शङ्खद्रावेण दग्धो नोत्पद्यते पुनः ॥१७॥

अर्थः—चर्मकील, लहसन, मस्सा और तिल इनमेंसे जिसको नष्ट करना हो उसको उखाड़ कर शंखद्रावसे जला दिया जाय तो फिर वह न उठै ॥ १७ ॥

नेत्राभिष्यन्दपर अर्क ।

अहिफेनार्कमध्ये हि त्रिफलाचूर्णपोटली ।
प्रतिसायं हिता नेत्रे सर्वाभिष्यन्दशान्तये ॥१८॥

अर्थः—अफीमके अर्कमें पीसे त्रिफलाकी पोटली सायंकाल आँखोंपर रखना. यह औषध नेत्र रोगकी शांतिके अर्थ हितकारक है ॥ १८ ॥

नेत्ररोगनाशक अर्क ।

वातातपरजोहीनवेश्मन्युत्तानशायिनः ।
आधारौ माषचूर्णेन क्लिन्नेन परिमण्डलौ ॥ १९ ॥
समं दृढौ समं बद्धौ कर्तव्यौ नेत्रकोशयोः ।
पूरयेन्नयने तेन तत उन्मीलयेच्छनैः ॥ २० ॥

अर्थः—नेत्ररोगनाशक प्रकार कहते हैं. पवन, धूप, गर्द-रहित स्थानमें चित लेटै और गीले उड़दोंकी दो टिकिया

आंखके बराबर बनावै. बराबर पुष्टतासे रखकर बराबर बाँध देवै, फिर नेत्रके पलकोंपर लगाय धीरे २ नेत्र खोल देवै ॥ १९ ॥ २० ॥

नेत्रोंकी तर्पणविधि ।

भिषग्वरैः सुकथितः पुराणैस्तर्पणो विधिः ।
यद्रूक्षं परिशुष्कं च नेत्रं कुटिलमाविलम् ॥ २१ ॥
शीर्णपक्ष्मशिरोत्पातकृच्छ्रोन्मीलनसंयुतम् ।
तिमिरार्जुनशुक्राद्यैरभिष्यन्दाधिमन्थकैः ॥ २२ ॥
शुष्काक्षिपाकशोथाभ्यां युक्तं वातविपर्ययैः ।
तन्नेत्रं तर्पणे योज्यं नेत्रकर्मविशारदैः ॥ २३ ॥

अर्थः—प्राचीन श्रेष्ठ वैद्योंकरके कहा हुआ जो तर्पणयोग (नेत्रोंको प्रसन्न करनेवाला) दवा चुवाना सो कहते हैं कि जो नेत्र रूखे, चारों ओरसे सूखे, टेढ़े व मैले होवैं ॥ २१ ॥ टूटी भौंहैं, ऊपरके पलक रोगयुक्त होनेसे कठिनतासे खुलनेवाले, तिमिर, फुल्ली, माड़ा, अभिष्यन्द, अधिमन्थ ॥ २२ ॥ नेत्र सूखना, पकना, सूजन और वातसम्बन्धी नेत्ररोग इतने प्रकारके रोगोंसे युक्त नेत्र तर्पण चिकित्सा करै ऐसा नेत्रक्रियामें चतुर वैद्योंने कहा है ॥ २३ ॥

नेत्र और पलकरोगमें औषध धारण काल ।

धारयेद्वर्त्मरोगेषु वाङ्मात्राणां शतं बुधः ।
स्वस्थे कफे संधिरोगे वाचाम्पञ्चशतानि च॥२४॥
कफे षट्शतं कृष्णरोगे सप्तशतं मतम् ।

दृष्टिरोगे शतान्यष्टावधिमंथे सहस्रकम् ॥ २५ ॥
सहस्रं वातरोगेषु धार्यमेवं हि तर्पणम् ।

अर्थः—वर्त्म (पलक) रोगमें सौ १०० मात्रा बोली जावैं; तबतक नेत्रोंमें औषध भरी रक्खै; व कफकृत नेत्ररोगमें सन्धि-रोगमें पांचसौ मात्रातक औषध धरे रक्खै ॥ २४ ॥ सेतेके रोगमें छः सौतक; काले डैयेके रोगमें सातसौतक; पुतलीके रोगमें आठसौतक; अधिमंथ (वातरोग) नामक नेत्ररोगमें एक हजार मात्रातक ॥ २५ ॥ विशेषवातरोगमें तर्पण एक सहस्र (१०००) मात्रातक धारण करै—

नेत्र और पलकरोग नष्ट करने० अर्क।

पुनर्नवा च तुवरी कुमारी त्रिफला निशा ॥२६॥
यष्टीगैरिकसिन्धूत्थदार्व्यञ्जनयुगैः कृतः ।
अर्कस्तत्पूरणेनाशु नेत्ररोगाः शमं ययुः ॥ २७ ॥

अर्थः—साँठी, अरहर, ग्वारका पाठा, त्रिफला (आँवला हड़, बेहड़ा) हलदी, ॥ २६ ॥ मुलहठी, गेंरू, सेंधा लवण, दारुहलदी और रसौंत दोनों इनसे निकाला अर्क नेत्रोंमें पूर देनेसे शीघ्र नेत्ररोगशांति होजावै ॥ २७ ॥

रातौंधेको दूर करनेवाला अर्क।

रसाञ्जनं हरिद्रे द्वे मालतीनवपल्लवाः ।
गोमयार्कस्तु रात्र्यन्धं पूरितो हंत्यसंशयम् ॥२८॥

अर्थः—रसांजन, दोनों हलदी, चमेलीके कोमल २ पत्ते, और गोबर इनका अर्क नेत्रोंमें पूरित करनेसे रतौंधीको निस्संदेह नाश करता है ॥ २८ ॥

चोभ; फूली, अर्बुद, माड़ा, तिमिर, मांसवृद्धि और वार्षिक पुष्प इनके ऊपर अर्क ।

शङ्खनाभिर्बिभीतस्य मज्जा पथ्या मनःशिला ।
पिप्पली मरिचं कुष्ठमजादुग्धेन पेषितम् ॥ २९ ॥
तदर्कः पूरणाद्धन्यात्काचं पटलमर्बुदम् ।
तिमिरं मांसवृद्धिं च वार्षिकं पुष्पमेव च ॥ ३० ॥

अर्थः—शंखाहूली, बहेड़ेकी छाल, हड़, मैनशिल, पीपरि, मिर्च व कूट, बकरीके दूधसे भिगोय पीसकर ॥ २९ ॥ इसका अर्क आँखमें भरनेसे कोई चोभ, फूली, अर्बुद, माड़ा, तिमिर, मांसवृद्धि और वर्षदिवसकी फुल्ली इन सब रोगोंको नाश करता है ॥ ३० ॥

कर्णरोगनाशक अर्क ।

शृङ्गवेरं क्षौद्रसिन्धुस्तैलार्केण च पूरणम् ।
कर्णशूले कर्णनादे बाधिर्ये क्ष्वेड एव च ॥ ३१ ॥

अर्थः—अदरख, शहद व सेंधालवण इनका तेलसे निकाला अर्क कानमें पूरनेसे कानके दरदमें, कानके शब्द (भाँय भाँय) होनेमें, बहिरापनमें और कानफोड़में डालनेसे आराम होवै ॥ ३१ ॥

तीव्रशूलतुदे कर्णे सशब्दे क्लेदवाहिनि ।
देयश्छागलमूत्रार्कः कोष्णसैंधवसंयुतः ॥ ३२ ॥
आम्रजम्बूप्रवालानि मधूकस्य वटस्य च ।
एतदर्कपूरणेन पूतिकर्णं मदं हरेत् ॥ ३३ ॥

अर्थः—कानमें कठिन शूल हो, वा शब्द बहुत होता हो, राध बहती हो, तो उसमें बकरीके मूत्रका अर्क गरम २ सेंधालवण मिलाय चुआय देवै ॥ ३२ ॥ आम, जामुन, महुवा व बड़ इनके पत्तोंका अर्क कानमें पूर देनेसे कानका बहना दूर होजाता है ३३

गोमूत्रं हरितालं च तथा माहिषगुग्गुलम् ।
सप्ताहं वा दशाहं वा शतशः परिभावितम् ॥३४॥
करंजबीजं तद्वर्तिर्दृष्टेः पुष्पं विनाशयेत् ।

अर्थः—गोमूत्र, हरताल, भैसहिया गूगल, सातदिन वा दशदिन बराबर भिगो २ कर सौवार भावना देवै ॥ ३४ ॥ उनके साथ फिर करंजाके बीजकी बत्ती करै, वह बत्ती पुतलीकी फुल्लीका नाश करती है—

पलकोंके बाल जमानेवाला और खुजली दूर करनेवाला अर्क ।

रसाञ्जनं सर्जरसो जातीपुष्पं मनःशिला ॥ ३५ ॥
समुद्रफेनलवणं गैरिकं मरिचं तथा ।
मधुक्लिन्नैस्तदर्कस्तु पूरणात्क्लिन्नवर्त्मनि ॥ ३६ ॥
पक्ष्माणि रोहयेत्कण्डूं हन्यादर्कस्य पूरणात् ।

अर्थः—रसांजन, रसौंत, चमेलीके फूल, मैनशिल, ॥ ३५ ॥ समुद्रफेन, लवण, गेरू, और स्याह मिर्च इनको शहदमें भिगोय अर्क ले, पलकोंमें पूरनेसे ॥ ३६ ॥ पलकोंके बाल जमा देवै और नेत्रोंकी खुजलीका नाश करै.—

नेत्रस्रावके ऊपर अर्क ।

बब्बूलार्कः क्षौद्रयुक्ते नेत्रस्रावं हरेत्क्षणात् ॥ ३७ ॥

अर्थः—बबूलका अर्क शहदके साथ लगावै तो उसीसमय आँखसे पानी झरना बंद होवै ॥ ३७ ॥

नेत्रस्राव आदि नेत्ररोगोंपरं अर्क ।

पुनर्नवायाः श्वेताया अर्को हन्याद्दृगामयान् ।
दुग्धेन कण्डूं क्षौद्रेण नेत्रस्रावं च सर्पिषा ॥३८॥
पुष्पं तैलेन तिमिरं काञ्जिकेन निशान्धताम् ।

अर्थः—श्वेत सांठीका दूधके साथ निकासा हुआ अर्क सम्पूर्ण दृष्टिरोगोंको नाशै. शहदसे निकाला हुआ अर्क नेत्रोंकी खाजको, घृतसे खींचा अर्क नेत्र बहनेको वंद करता है ॥३८॥ और यही अर्क तेलसे निकाला हुआ फुल्लीको, काँजीसे तिमिरको और रातौंधीको हरता है.—

पीनसादी रोगोंपर अर्क ।

कट्फलं पौष्करं शृङ्गीत्र्योषं यासश्च कारवी ॥३९॥
एतदर्कः शृङ्गवेररसयुक्तो गदान् हरेत् ।
पीनसं स्वरभेदं च तमकं सहलीमकम् ॥ ४० ॥
सन्निपातं कफं वातं श्वासं कासं विनाशयेत् ।

अर्थः—कायफल, पुष्करमूल, ककरासींगी, त्रिकुटा, जवासा, करेला तथा सौंफ ॥ ३९ ॥ इनका अर्क अदरखके रसके साथ पीनसरोग, स्वरभेद, तमक, श्वासभेद ॥ ४० ॥ और सन्निपात, कफ, बादी, श्वास व खाँसी इन रोगोंका नाश करता है.—

पूतिनासारोगपर अर्क ।

व्याघ्री दंती वचा सिन्धुः सुरसाव्योषसैन्धवैः॥४१॥
सिद्धोऽर्कस्तु नसि क्षिप्तः पूतिनासागदापहः ।

अर्थः—भटकटैया, वज्रदंती, वच, सैंधव, रास्ना, त्रिकुटा व सेंधालवण ॥ ४१ ॥ इनसे सिद्ध अर्क नासिकामें लगानेसे नासिकाकी दुर्गन्धिको हरता हैं.—

क्षवथु (छींक) का हटानेवाला अर्क ।

शुण्ठीकुष्ठकणाबिल्वद्राक्षार्कः क्षवथुं हरेत् ॥ ४२ ॥

अर्थः—सोंठ, कूट, पीपरि, बेलगिरी और दाख इनका अर्क क्षवथु (छींक) रोगको हरता है ॥ ४२ ॥

कफनाशक अर्क ।

मर्दयेत् कट्फलार्कं तु श्लेष्मनाशाय मस्तके ।

अर्थः—कफविकार दूर होनेके लिये कायफलका अर्क मस्तकपर लगावै.—

नासारोग व मस्साको दूर करनेवाला अर्क

गृहधूम कणा दारुनक्ताह्वासैंधवैः समैः ॥ ४३ ॥
अपामार्गेण जातोऽर्को नासार्शोघ्नो दिनत्रयात् ।

अर्थः—धमासा, पीपरि, देवदारु, हलदी और सेंधालवण यह सब बराबर लेके ॥ ४३ ॥ ओंगाके साथ खींचा अर्क, नासारोग व मस्साका तीन दिनमें नाश करै.—

अति निद्राको मिटानेवाला अर्क ।

क्षौद्राश्वलालासंयुक्तमरिचार्कस्य चाञ्जनात् ॥ ४४ ॥
अतिनिद्रा शमं याति तमः सूर्योदये यथा ।

अर्थः—शहद, और असगंधसहित मिर्चका अर्क खींच नेत्रोंमें आँजनेसे ॥ ४४ ॥ बहुत निद्रा आनेका रोग–सूर्योदयमें अंधकारके समान–नष्ट हो जाता है.—

अनेक नेत्ररोगोंपर अर्क।

शिलायां रसकं पिष्ट्वा सम्यगालोड्य वारिणा ॥४५॥
गृह्णीयात्तज्जलं सर्वं त्यजेच्चूर्णमधोगतम्।
शुष्कं च तज्जलं सर्वं पर्पटीसन्निभं भवेत् ॥ ४६ ॥
विचूर्ण्य भावयेत्सम्यक् त्रिफलार्कैः पुनः पुनः।
कर्पूरस्य रजस्तत्र दशमांशेन निक्षिपेत् ॥ ४७ ॥
अञ्जयेन्नयने तेन नेत्राखिलगदच्छिदा।

अर्थः—मैनशिलको पारेके साथ पीसकर खूब जलसे रगड़ पतला कर लेवै ॥ ४५ ॥ वह जल सब दो सेर ले लेवै और नीचेके चूरेको छोड़ देवै. जब वह सूखकर पापरके सदृश होजाय ॥ ४६ ॥ तब पीसकर त्रिफलाके अर्कसे वारंवार धोवै. कपूरका चूर्ण उसमें दशमांश छोड़ देवै ॥ ४७ ॥ उस अंजनसे नेत्रोंको आँजै, तो सम्पूर्ण नेत्ररोगोंका नाश करै.—

दंतकृमि नष्ट होनेके लिये अर्क।

नील्यर्को वाततुंब्यर्कः काकजङ्घाभवोऽथवा ॥ ४८ ॥
गण्डूषकरणैर्हन्याद्दन्तानां कृमिजालकम्।

अर्थः—नीलके अर्कके वा तोंबीके अर्कके अथवा काकजंघाके अर्कसें ॥ ४८ ॥ कुल्ले करनेसे दांतके सम्पूर्ण कीटजालोंका नाश करता है.—

त्रिफला स्वर्णमाक्षीकं तारमाक्षिकसैन्धवम् ॥४९॥
खदिरो दग्धपूगं च लोहचूर्णं समांशकम्।
वज्रदन्तीभवे चार्के भावयेद्दिवसत्रयम् ॥ ५० ॥
लेप्यं सायं तेन दन्ताः सप्ताहाद्दृढवत्तराः।

अर्थः—त्रिफला, सोनामाखी, रूपामक्खी, सेंधालवण ॥ ४९ ॥ खैर, जली हुई सुपारी व लोहचूर्ण ये सब बराबर भाग लेके वज्रदंतीसे भये अर्कमें तीन दिन भिगोय भावना देवै ॥ ५० ॥ फिर उससे दांतोको सात दिन रगड़ै तो दाँत बहुत कड़े हो जावैं—

जिह्वारोगनाशक अर्क।

व्योषक्षाराभयावह्निचूर्णमूर्वार्कभावितम् ॥ ५१ ॥
उपजिह्वाप्रशान्त्यर्थं पीडयेदुपजिह्विकाम् ।

अर्थः—त्रिकुटा, खार, हर्र व चित्रक ये मूर्वाके अर्कमें भिगोवै ॥ ५१ ॥ सो अर्क उपजिह्वा (जिभाली) रोगकी शांतिके अर्थ जीभपर रगड़ै तो रोगशांति होवै—

जीभ और दांतके रोगोंपर अर्क।

कटुत्रयं शिवा धात्री यवानी जीरकद्वयम् ॥५२॥
चव्यमौषधवत्तुल्या भागयुग्मं च सैन्धवम् ।
सप्तवारानम्लवर्गे द्विगुणैश्चित्रकार्ककैः ॥ ५३ ॥
भावयित्वा वटी कार्या जिह्वादन्तरुजापहम् ।

अर्थः—और त्रिकुटा, हर्र, आँवला, अजवायन दोनों जीरे ॥ ५२ ॥ और चव्य ये औषध बराबर भाग ले और दो भाग सेंधालवण इनको सात बार खटाईमें भिगोकर दूने चित्रकके अर्कमें मिलाय गोली बाँधै ॥ ५३ ॥ तो वे गोली जिह्वा और दंतके रोगका नाश करती है—

तालुरोगहर अर्क।

वचा चातिविषा पाठा रास्ना कटुकरोहिणी ॥५४॥
पिचुमन्दार्ककवला तालुरोगविनाशनम् ।

अर्थः—बच, अतीस, पाठ, राई और कड़वी रोहिणी ॥ ५४ ॥ ये औषध पिचुमर्द (नींवविशेष) के अर्कमें मिलाय गोली बाँधै वा चूर्णसा रक्खै उसका नास लेवै तो तालुरोग नष्ट होवै—

कण्ठरोग नष्ट करनेवाला अर्क।

गोमूत्राऽतिविषादारुपाठाविषकलिङ्गका ॥ ५५ ॥
कटुकार्कस्य पानेन कण्ठरोगविनाशनम् ।

अर्थः—गोमूत्र, अतीस, देवदारु, पाढ़, विष (तेलिया मीठा), इंद्रजव ॥ ५५ ॥ और कुटकी इनका अर्क पीनेसे कंठरोग नष्ट हो जाता है—

मुखपाकरोगपर।

जातीपत्रामृताद्राक्षावासदार्वीफलत्रिकम् ॥ ५६ ॥
अर्कः शीतः क्षौद्रयुक्तो गण्डूषान्मुखपाकनुत् ।

अर्थः—जावित्री, गिलोय, दाख, जवासा, दारुहलदी और त्रिफला ॥ ५६ ॥ इनके शीतल अर्कमें शहद डाल कुल्ले करै तो मुख पकेको अच्छा करै.—

मुखके व्रण, क्लेद और दुर्गंधिको दूर करनेवाला अर्क।

कृष्णजीरककुष्ठेन्द्रजवजार्कस्य सेवनात् ॥ ५७ ॥
त्रिदिनेन व्रणक्लेददौर्गन्ध्यमपशाम्यति ।

अर्थः—जीरा स्याह, कूट और इन्द्रयव इनका अर्क सेवन करनेसे ॥ ५७ ॥ तीन दिनमें व्रण, मुखके छाले और मुखदुर्गन्धि शांत होवै.—

लाला (लार) स्रावपर अर्क।

नीलोत्पलदले क्लिन्नं त्रिदिनं मधुकं ततः ॥५८॥
अर्को गण्डूषतो हन्ति लालास्रावं न संशयः।

अर्थः—नीले कमलके पत्ते तीन दिन शहदके साथ मसलै फिर ॥ ५८ ॥ उसके अर्कसे कुल्ले करै तो लार बहना निस्संदेह बन्द होवै.—

स्थावर विषशांतिके लिये अर्क।

स्थावरेण विषेणार्तं मदनार्केण वामयेत् ॥ ५९ ॥
शतपत्र्यादिकार्कैस्तु रेचकं तु समाचरेत्।
दद्याच्च मधुसर्पिर्भ्यां मरिचार्कं तु साम्लकम्॥६०॥
हेमार्कसाधितैरर्कैर्मर्दयेच्च विरेचयेत्।
आदौ संस्नेहनं कृत्वा ततो लेपं समाचरेत् ॥ ६१ ॥
गोमूत्रपिष्टैः पञ्चाङ्गैः शिरीषस्य पुनःपुनः।
सूचीविषवमेश्चार्थमर्कं दद्याद्द्वयोरपि ॥ ६२ ॥

अर्थः—आगे विषोंकी शांतिके अर्थ अर्कचिकित्सा कहते हैं कि—स्थावरविषसे पीड़ित मनुष्यको मैनफलके अर्कसे वमन करावै ॥ ५९ ॥ और कमलिनी आदिके अर्कसे रेचक करावै. फिर शहद घी खटाईके साथमें मिर्चोंका अर्क देवै ॥ ६० ॥ पीली दूधके अर्कसे मालिश व दस्त करावे; प्रथम चिकनाई लगाके फिर लेप करै ॥ ६१ ॥ गोमूत्रमें पीसे सिरसके पंचांगका लेप सूचीविषकी वमन करानेके अर्थ दोनों पीपलियोंके अर्कके साथ देवै ॥ ६२ ॥

सर्पविषनाशक अर्क ।

पिप्पल्यो धान्यकं मांसी लोध्रमेला सुवर्चिला ।
स्थूलैला मरिचं चालं निर्विषी स्वर्णगैरिकम् ॥६३॥
मालत्यर्केण गुटिकां कर्षमात्रां तु भक्षयेत् ।
गरुड्यर्कस्य पानं तु सर्पाणां विषनाशनम् ॥ ६४ ॥

अर्थः—पीपल, धनियां जटामांसी, लोध, इलायची, हुरहुर, बड़ी इलायची, मिर्च, नेत्रबाला, निर्विषी, और पीला गेरू ॥ ६३ ॥ इनको चमेलीके अर्कसे गुटिका बनाकर चार माशेभर खावै तो सर्पोंका विष शांत होवै. पातालगारुडीके अर्कको पीवै तो सर्पोंका विष शांत होवै ॥ ६४ ॥

बिछुओंके विषपर अर्क ।

सूर्यावर्तार्कगन्धस्तु वृश्चिकस्य विषं हरेत् ।
अपामार्गजटार्को वा धत्तूरार्कः सदुग्धकः ॥ ६५ ॥

अर्थः—हुरहुरका अर्क और गन्धक बिच्छूके विषको हरै व ओंगाकी जड़समेत धतूरेका अर्क बिच्छूके विषको हरता है ॥६५॥

कुत्तेके विषपर अर्क ।

अङ्कोलार्कोऽथ वंशार्कः श्वविषघ्नः पृथक्पृथक् ।

अर्थः—अंकोलफलका अर्क वा वांसाका अर्क यह पृथक् २ विषको हरनेवाला हैं—

लूताविषनाशक अर्क ।

रजनीयुग्मपातङ्गं मञ्जिष्ठा नागकेशरम् ॥ ६६ ॥
गैरिकार्केण शीतेन लेपो लूताविनाशनः ।
बिडालमांस्यर्कलेपो मूषकानां विषापहः ॥ ६७ ॥

अर्थः—दोनों हलदी, पतंग, मँजीठ, नागकेशर ॥६६॥ और गेरू इनके शीतल अर्कसे लेप करै तो मकरीका विष शांत होवै. बिलावमांसीके अर्कका लेप चूहोंके विषको नष्ट करता है ॥ ६७ ॥

कनखजूरेके विषपर अर्क।

तिक्ताजाजीनागरयोरर्केण सहपेषितम् ।
शतपद्या हरेत्सद्यो द्विषमुष्टिभवं विषम् ॥ ६८ ॥

अर्थः—कुटकी, स्याह, जीरा और सोंठके अर्कसे पीसा हुआ शतावरी और कुचलेका लेप कनखजूरके विषको शीघ्रही दूर करता है ॥ ६८ ॥

चींटी आदिके विषपर अर्क।

पिपिल्यादिविषं हन्याच्छुण्ठ्यर्कस्तत्र मर्दितः ।

अर्थः—सोंठका अर्क मर्दन किया हुआ चींटीआदिके विषको हरता है.—

प्रदर रोगको दूर करनेवाला अर्क।

सितादुग्धेन संयुक्तं माषार्कस्य पलद्वयम् ॥ ६९ ॥
घृतदुग्धाशिनी नारी प्रदरात्परिमुच्यते ।
अशोकवल्कलार्कश्च घृतं दुग्धं च शीतलम् ॥७०॥
यथावत्प्रपिबेत्प्रातारक्तप्रदरनाशनम् ।
दार्वी रसाञ्जनं वासा किरातश्चार्कपुष्पकम् ॥ ७१ ॥
रक्तचन्दनबिल्वार्कः सक्षौद्रोऽसृग्दरं हरेत् ।

अर्थः—दूध मिश्रीके साथ दो पल उडदोंके अर्कको ॥ ६९ ॥ घी दूधके साथ खानेवाली स्त्री प्रदररोगसे छूट जाती है. अशोककी छालका अर्क घी दूध शीतल

॥ ७० ॥ जो स्त्री विधिपूर्वक प्रातःकाल पिया करै तो रक्तप्रदर व योनिरोग नष्ट होवै, और दारुहलदी, रसोंत, वांसा, चिरायता, आकके फूल ॥ ७१ ॥ लाल चन्दन और बेल, इनका अर्क शहदके साथ खानेसे रक्तप्रदर नाम योनिरोग मिटजावै—

सोमरोगनाशक अर्क ।

कदलीनां फलं पक्कं धात्रीफलरसं मधु ॥ ७२ ॥
शर्कराभिः कृतं मद्यं सोमरोगविनाशनम् ।

अर्थः—पक्के केलाके फलको लेके आँवलोंका रस, शहद ॥ ७२ ॥ और शक्कर इनसे बनाया हुआ मद्य सोमरोगका नाश करता है—

बहुत मूत्रस्राव रोगपर अर्क ।

चक्रमर्दकमूलं तु सम्पिष्टं तण्डुलाम्बुना ॥ ७३ ॥
प्रभातसमये पीतस्तदर्को बहुमूत्रजित् ।

अर्थः—पवाँरकी जड़ चाँवलोंके जलसे पीसकर ॥ ७३ ॥ प्रातःकाल उसका अर्क पीनेसे बहुमूत्ररोगको जीतै—

स्त्रियोंके ऋतुप्राप्तिपर अर्क ।

ज्योतिष्मतीघनाराजीवचाशनभवोऽर्ककः ॥ ७४ ॥
शीतलः पयसा पीतो नारीणां पुष्पकारकः ।

अर्थः—मालकाँगनी, नागरमोथा, राइ, बच और नींब इनसे बना हुआ अर्क ॥ ७४ ॥ शीतल जलके साथ पिया हुआ स्त्रियोंके पुष्प (रज) उत्पन्न करता है—

गर्भधारण करनेवाला अर्क ।

अश्वगन्धाभवार्केण सिद्धं दुग्धं घृतान्वितम् ।

ऋतुस्नातांगना प्रातः पीत्वा गर्भं दधाति हि ॥७५॥

अर्थः—असगन्धके अर्कसे सिद्ध हुआ दूध घी मिलाय ऋतुस्नान किये स्त्री प्रातःसमय पीनेसे गर्भको धारण करती है ॥ ७५ ॥

गर्भधारण न करानेवाला अर्क ।

आरनालपरिपेषिता त्र्यहं माजया कुसुमती च पुष्पिणी । या पुराणगुडमिष्टसेविनी सा दधाति नहि गर्भमङ्गना ॥ ७६ ॥

अर्थः—काँजीमें भिगोय अगेथूके फूलोंका अर्क तीन दिन स्त्री सेवन करै तो पुष्पिणी होवै अर्थात् फूलको धारण करै और जो पुराना गुड़ मीठी वस्तुओंके साथ लोभसे खाये जाय तो गर्भ धारण नहीं कर सकती है ॥ ७६ ॥

योनिसंकोचपर अर्क ।

नववार्ताकिनीकुष्ठसैन्धवामरदारुभिः ।
साधितोऽर्कः पिचुं योनौ विप्लुतायां तु धारयेत् ।७७।

अर्थः—नवीन कटेली कूट, सैंधव लवण, देवदारु इनके अर्कसे साधे हुये बकायन फलको स्त्री अपनी योनिमें धारण करै ॥ ७७ ॥

वातलां कर्कशां तप्तां मत्तस्पर्शां तथैव च ।
कुम्भैरुष्णैरुपचरेदन्तर्वेश्मनि संवृते ॥ ७८ ॥

अर्थः—वादीवाली, कठोर, दुरवारी और मतवाली इन चारोंका कुंभोंकेसे भीतरके घरमें हो इलाज करै ॥ ७८ ॥

स्कंदापस्मार रोगनाशक अर्क।

बिल्वं शिरीषस्तुलसीयुग्मंपाठे च राजिका ॥ ७९ ॥
श्वेतदूर्वामरुबको भार्ङ्गी कह्लारभूस्तृणम् ।
श्वेतवर्वरिकाकृष्णवर्वरीकासमर्दकः ॥ ८० ॥
महानिम्बः कट्फलं च निर्गुण्ड्यश्वारिशल्लकी ।
उदुम्बरीभारवाहो विडङ्गं काकमाचिका ॥ ८१ ॥
बला एलामांसास्तु दद्यान्मूत्राष्टकत्र्यहम् ।
गोजाविमहिषोष्ट्राणां खराश्वकरिणां तथा ॥ ८२ ॥
निष्कासयेत्ततश्चार्कं शाम्भवं कवचं जपन् ।
परिवेषप्रयोक्तव्यं स्कन्दापस्मारशान्तये ॥ ८३ ॥

अर्थः—बेल, सिरस, दोनों तुलसी, पाठ, राई, ॥ ७९ ॥ सपेद दूब, मूर्वा, भारंगी, कमल, भूतृण, श्वेतबबूल, स्याहबबूल, कसौंदी, ॥ ८० ॥ बकायन, कायफल, सँभालू, सलाईभेद, गूलर, मोथा, बायबिड़ंग, काकमाची, ॥ ८१ ॥ खरैंटी, इलायची और जटामांसी इन सबको तीन दिन मूत्राष्टकमें भिगोवै; गौ, बकरी, भेड़, भैंस, ऊँटिनी, गदही, कुत्ती और हथिनी, इन आठोंका मूत्र ले ॥ ८२ ॥ अनन्तर शिवजीका कवच पढ़ताहुआ इनका अर्क निकालै. इसको स्कन्दापस्मार नाम बालकोंके रोगकी शांतिके अर्थ देवै ॥ ८३ ॥

उक्त अर्कके लेनेका प्रमाण।

जातमात्रस्य बालस्य वल्लमर्कं प्रदापयेत् ।
तज्जनन्याः पलं देयमजादेर्विगुणादिकम् ॥ ८४ ॥

अर्थः—यही अर्क जन्मतेही बालकको तीन रत्तीभर देवै, उसकी माताको पलभर देवै, और बकरीआदि पशुओंको दूनी मात्रा देवै ॥ ८४ ॥

बालकोंके अतीसारआदि रोगोंपर अर्क।

घनकृष्णारुणाशृंगीजातोऽर्कः क्षौद्रसंयुतः ।
शिशोर्वरातिसारघ्नः कासश्वासमवीन् हरेत् ॥ ८५ ॥
विडंगान्यजमोदा च पिप्पली तंडुलानि च ।
एषामर्कः सुखोष्णस्तु बालस्यामातिसारजित् ।८६।

अर्थः—नागरमोथा, पीपरि, मँजीठ और ककड़ासिंगी इनका अर्क शहदसे देनेमें बालकके अतीसाररोगको बंद करै; और खाँसी, श्वास व वमनको हरै ॥ ८५ ॥ बायविड़ंग, अजमोद, पीपरि व चाँवल, इनका अर्क कुछ २ गरम बालकके अतीसार (दस्तोंके) रोगको जीतता है ॥ ८६ ॥

बालकोंके सब रोगोंपर अर्क ।

रजनी सरलो दारु बृहती गजपिप्पली ।
पृष्ठपर्णी शताह्वा च जातोऽर्को मधुसर्पिषा ॥ ८७ ॥
ग्राही संदीपनो हन्ति महार्तिं च सकामलाम् ।
ज्वरातीसारपाण्डुघ्नो बालानां सर्वरोगनुत् ॥ ८८ ॥

अर्थः—हलदी, सरल, देवदारु, भटकटैया, गजपीपरि, पृष्ठपर्णी और शतावरी इनके अर्कको शहद और घीके साथ खानेसे ॥ ८७ ॥ अग्निदीपन करै, मलको बाँधै, सब प्रकारकी पीडा, कामला, ज्वर, अतीसार और पांडु इन बालकोंके सब रोगोंको हरता है ॥ ८८ ॥

बालकोंका मूत्र रुक जानेपर अर्क।

कणोषणसिताक्षौद्रसूक्ष्मैलासैन्धवैः कृतः ।
मूत्रग्रहे प्रयोक्तव्यः शिशूनामर्कउत्तमः ॥ ८९ ॥

अर्थः—पीपरि, मिर्च, मिश्री, शहद, छोटी इलायची और सेंधालवण इनका अर्क बालकोंका मूत्र रुक जानेमें हितकारी है इसलिये अवश्य पिलावै ॥ ८९ ॥

वाजीकरण प्रयोग ।

स्वर्णमाक्षिकलोहे च पारदश्च शिलाजतु ।
पथ्या विडङ्गधत्तूरैर्विजया जातिपत्रिका ॥ ९० ॥
अश्वगन्धा गोक्षुराणामर्कैर्भाव्यं पृथक् पृथक् ।
सप्तघस्त्रं तु वल्लैकं मध्वाज्याभ्यां लिहेत्ततः ॥ ९१ ॥

अर्थः—सोनामाखी, लोह, पारा, न्यारे २ शिलाजीत, हर्र, बायविडंग, धतूरा, भांग और जावित्री ॥९०॥ इनको न्यारे २ असगन्ध और गोखरूके अर्कसे सातदिनपर्यन्त भिगोय और शहद व घीके साथ चटावै. यह वाजीकरणविधि है ॥ ९१॥

वाजीकरणपर अन्य उपाय ।

गवा विरूढवत्सानां सिद्धं पयसि पायसम् ।
गोधूमचूर्ण च सिता शीतं मधुघृतान्वितम् ॥ ९२ ॥
भुक्त्वा हृष्यति जीर्णोऽपि दश दारान् व्रजत्यपि ।
ब्रह्मचर्यं प्रकर्तव्यमेकविंशदिनावधि ॥ ९३ ॥

अर्थः—बहुत दिनकी ब्याई हुई उत्तम बछड़ावाली गौके दूधमें सिद्ध की हुई गेहूँकी खीर मिश्री मिलाय शीतल करके

शहद और घीके साथ ॥ ९२ ॥ खा करके वृद्ध होनेपर भी प्रसन्नतापूर्वक दस स्त्रियोंको भोग करै; परन्तु इकीस दिनपर्यन्त ब्रह्मचर्यकी नाईं जितेंद्रिय रहै ॥ ९३ ॥

वीर्यस्तम्भन ।

अपर्णाबीजसंयुक्तं उग्रबीजं प्रकल्पयेत् ।
तुल्यमुन्मत्तबीजं च तदर्केणैव भावितम् ॥ ९४ ॥
सतैलं भावितं पश्चादस्य वल्लयुगं नरः ।
संमितं भक्षयन् कामाद्रमणीं रमयते ध्रुवम् ॥ ९५ ॥

अर्थः—अपर्णावृक्षके बीजसहित बचाके बीज लेवै और उतनेही धतूरेके बीज लेवै. फिर इन्हीं वृक्षोंके रससे उन बीजोंको भिगोके अर्क निकालै ॥ ९४ ॥ वह अर्क इन्हींके तेलसहित ४ रत्तीभर मिश्रीके साथ नित्य भक्षण करै तो सब आलस्य व मन्दताको त्याग कर कामवश होके वह मनुष्य निश्चय नित्य रमणीसे रमण करै ॥ ९५ ॥

वीर्यस्तम्भ और लिंग व योनिका दृढीकरण अर्क ।

स्वच्छवल्कं बबूलस्य शिम्बीरसविभावितम् ।
सायं वेदांगुलं दुग्धे क्षाल्यं दुग्धे पिबेत्ततः ॥ ९६ ॥
वीर्यस्तम्भो भवेल्लेपाद्योनिर्गाढा प्रजायते ।
बबूल्यर्कं सलवणं पीत्वा तद्वेगरोधनात् ॥ ९७ ॥

अर्थः—शुद्ध चिकने बबूलके बक्कलको नींबूके रसमें भिगोकर उसमें चार अंगुलका वस्त्र रँगलेवै. उस धुवाँ वर्णवाले रसीले वस्त्रखंडको अपने पीने योग्य दूधमें धोके पी लेवै ॥ ९६ ॥

नित्य पीनेसे पुरुषका वीर्य स्तम्भन होजाय अर्थात् पतले वीर्यको गाढ़ा करके यह औषध रुकावट करदेवै और लेप करै तो लिंग स्थूल हो. स्त्री अपनी योनिमें रक्खै तो योनि कड़ी होजाय. बबूलका अर्क लवणके साथ पीकर उसके वेगको रोकै तो भी वीयस्तम्भन होवै ॥ ९७ ॥

केतक्यर्केण बहुशो गन्धपाषाणधूपितो दशधा ।
तद्युक्तलिङ्गभोगाद्योन्यां लिङ्गे सुगन्धिः स्यात् ९८
इति लङ्कानाथकृतार्कप्रकाशे चिकित्साक्षुद्ररोगा-
दिनिवारणं नाम शतकं सप्तमम् ॥ ७ ॥

अर्थः—केतकीके अर्कसे बुझाया और पूर्व कहे दश धूप उससे सुवासित किया गन्धक लिंगमें लगाकर भोग करनेसे योनि तथा लिंग सुगन्धिवाले हो जाते हैं ॥ ९८ ॥

इति श्रीमत्पण्डितनारायणप्रसादमुकुंदरामकृतभाषाऽर्कप्रकाशे
क्षुद्ररोगनिवारणं नाम सप्तमं शतकम् ॥ ७ ॥

अथाष्टमं शतकम् ८ ।

उन्मत्तरस और वशीकरण ।

रावण उवाच ।

हंसहेली जटा रंगो रोचनां टङ्कणं तथा ।
स्वार्कक्लिन्नैस्तदर्कैस्तु नार्या वै सारिवा तथा ॥१॥

अर्थः—रावण बोला कि—हे प्रिये ! शंखाहूलीकी जड़, रक्त-चंदन, गोरोचन, इनको एक २ टंक लेके इन्हींके रसमें भिगोय अर्क निकालै वह और सारिवायह स्त्रीको ॥ १ ॥

भोज्ये पाने प्रदातव्यं उन्माद्यो भूतगंधया ।
भोज्ये पाने येन नीतः प्रेष्ठजीवितवश्यकृत् ॥ २ ॥

अर्थः—खाने और पीनेमें देना चाहिये और यह उन्मत्त करनेवाला अर्क गन्ध बिलाई जिसने खाने पीनेमें लिया वह प्रियतमके मनको वश करती है ॥ २ ॥

जगद्वशीकरण ।

खवल्लिफलदलजर्कः सप्ताहं वासितः स्त्रियै देयः ।
एवं विधिना रतया पुंसो दत्तो जगद्वशकृत् ॥ ३ ॥
सार्द्धमरण्यरजन्या त्रिखादितः स्वान्तसाधितस्नेहः ।
सकलमहीभुग्ललनावशीकरो नागतुल्ये मे ॥ ४ ॥

अर्थः—उपरोक्त अर्क आकाशवेलके पत्ते और फूलोंके अर्कके साथ भिगोकर स्त्रीको देवै. इसीप्रकारसे स्त्रीपुरुषको देवै तो जगत्में अवश्य वशीकरण हो ॥ ३ ॥ वनहलदीके साथ प्रेमपूर्वक एकांतमें तीन दिनतक बनाया हुआ उन्माद्यार्क खवावै तो यह अर्क हे नागतुल्ये (गजगामिनि) ! सम्पूर्ण राजा रानियोंको भी वश करनेवाला अर्क मैंने कहा है ॥ ४ ॥

प्रस्थापिता पितृस्थाने एतमर्कं पिबेत्तु या ।
स सेवितो नखाहेन वशीकरणसिद्धिदः ॥ ५ ॥

अर्थः—अपने पिताके घर भेजी हुई स्त्री इस उन्माद्यार्कको बीस दिन पीवै तो इसके सेवनसे वशीकरण सिद्धि होवै अर्थात् यह अर्क उसका वशीकरण सिद्धि कर देवै ॥ ५ ॥

वामिनो मिथुनं ग्राह्यं वियोगं तस्य कारयेत् ।
स्मरनेत्राग्निदाह्यत्वमापीडाद्दृढबन्धनम् ॥ ६ ॥

एवं स्वनिकटे स्थाप्य ततो नार्यै तमर्पयेत् ।
ब्रह्मासनं गतो वाऽपि तत्त्यक्त्वा स्वप्रियो भवेत् ।७।

अर्थः—वामी अर्थात् मदिरा पीनेवाले स्त्रीपुरुषोंका जोड़ा देख उनका आपसमें वियोग करवा ले. फिर एकसे एकको सामने रक्खै ऐसे कि, जिससे उनकी दृष्टि कामभरी उनको जलाया करै. जबतक उनको कामाग्नि देखै और पीड़ा अधिक हुए जाय तबतक गाढा बाँधे रहै ॥ ६ ॥ फिर उस पुरुषको स्त्रीकी गोदमें लिटा देवै तो यह प्रयोग होनेसे कोई ब्रह्माजीके आसनपर भी बैठा हो वह छोड़के आकर अपना ही प्यारा होवै ॥ ७ ॥

आधेयोऽर्कस्तु साध्योऽसावाधारार्कश्च साधकः ।
पीत्वा कर्षयते शीघ्रं चतुर्धा चतुरां स्त्रियम् ॥ ८ ॥
"ओंताराय कृष्णाय त्रिनेत्राय ईक्षिताय ।
आर्याय नमष्टःठःस्वाहा" इति मंत्रः ॥ ९ ॥
मंत्रो ह्ययं पुरश्चार्यो जपसंख्याक्रमेण वै ।
पंचसंख्याप्रजापेन समाकर्षयति ध्रुवम् ॥ १० ॥

अर्थः—जो अर्क साध्य है सो तो आधेय है और जो साधक अर्क है सो आधार है इन अर्कोंको चार दिन पीकर शीघ्र चार स्त्रियोंको खींच लेवै ॥ ८ ॥ "ॐताराय कृष्णाय त्रिनेत्राय ईक्षिताय आर्याय नमष्टःठःस्वाहा" इति मंत्रः ॥ ९ ॥ इस मंत्रका प्रथम पुरश्चरण एक लक्ष करै. फिर समयपर पाँचही वार मंत्र पढ़नेसे आकर्षण निश्चय होवै ॥ १० ॥ यह आकर्षण कहा ॥

विद्वेषणकी विधि।

अहो रात्र्यन्धपंगूनां केशास्तद्वाहनस्य वा ।
निखनेन्निर्गमद्वारि तदर्कं दिक्षु विन्यसेत् ॥ ११ ॥
वक्ष्यमाणं महामंत्रं जपेत्पूर्वविधानतः ।
विद्वेषस्तु प्रजायेत त्रिदिनान्नात्र संशयः ॥ १२ ॥
हयारिहययोरक्तघृतेनाभ्यज्य कज्जलम् ।
कृत्वा दत्त्वा नयनयोर्यं पश्येद्वेषणं भवेत् ॥ १३ ॥
"तारोहॐडामरेति ईश्वरायामुकेन च ।
सह द्वेषं कुरुकुरु स्वाहाठष्ठः" अयं मनुः ॥ १४ ॥

अर्थः—विद्वेषण कहते हैं कि-दिनमें अंधा (उल्लू) रात्रिमें अंधा (रतौंधीवाला) और पंगुला, इनके केश और उसका वाहन घोड़ाआदिके बाल, निकलनेके द्वारमें गाड़ देवै और पहिले कहा उन्माद्य अर्क इनके चारों ओर छिड़क देवै ॥ ११ ॥ और आगे कहे मंत्रको पूर्वोक्त विधानसे तीन दिन जपे तो विद्वेष (लड़ाई) होवै इसमें सन्देह नहीं ॥ १२ ॥ भैंसा और घोड़ाके रक्तमें घी मिलाय काजल उतारै उसको नेत्रोंमें आंजके जिसे देखै सोई विद्वेषी हो अर्थात् कुछ न कुछ वहांपर विगाड़ होवै ॥ १३ ॥ मंत्रोद्धार यह है कि "ॐ नमो डामराय चेश्वरायामुकेन सह विद्वेषं कुरु कुरु ठःठः स्वाहा" यह मंत्र है १४

मंत्रसिद्धिके नियम।

आभ्यन्तरम्बहिःशुद्धिर्ब्रह्मचर्यं यथोदितम् ।
अल्पाहारश्चाल्पनिद्रा नियमः सर्वसिद्धिषु ॥ १५ ॥

अर्थः—योगमार्गकी कही रीतिसे भीतर बाहरकी शुद्धि,

धर्मशास्त्रमें कही रीतिसे ब्रह्मचर्यधर्म और लघुभोजन, व थोड़ी नींद इस नियमसे रहकर गुरुमार्गसे सीखा हुआ मंत्र यथा-विधि जपाजाय तो ईश्वरकी इच्छासे कार्यसिद्धि होवै ॥ १५ ॥

महादेवाभरणकं तत्सुतांश्च लघीयसः ।
क्षिस्वा चाहिवरच्छिद्रे मासमात्रं समुद्धरेत् ॥१६॥
साध्यस्य निखनेद्वारि किंचिच्चैवं तथा पुनः ।
अग्निकोणाद्वायुकोणे क्षिपेदेतत्समुच्चरेत् ॥ १७ ॥
बलिं गृह्णन्त्विमे भूताः स्थानस्थाः सर्व एव हि ।
उच्चाटयन्तु सर्वेऽपि रिपुमेनमहत्रिकात् ॥ १८ ॥
" तारो नमो भगवते डामरेश्वरमूर्तये ।
उच्चाटये " ति मंत्रेण कार्यसिद्धिरुदाहृता ॥१९॥

अर्थः—महादेवका आभरण (सर्प) और उसके बच्चे शत्रु-निमित्त मारकर सांपहीके बिलमें गाड़ देवै, फिर एकमासमें निकालै ॥ १६ ॥ उसमेंसे कुछ तो साध्य निकलनेके द्वारमें गाड़ देवै और कुछ लेकर अग्निकोणसे वायव्यकोणकी तरफ छोड़ै और यह कहता जाय कि—॥ १७ ॥ "इस स्थानवासी हे सम्पूर्ण भूतो ! तुम यह सब बलि ग्रहण करो और इसको तीनही दिनमें उचटाओ " ॥१८॥ मंत्र यह है—"ॐ नमो भग-वते डामरेश्वरमूर्तये अमुकम् उच्चाटयोच्चाटय " इस मंत्रसे यहां कार्यसिद्धि कही है ॥ १९ ॥

उच्चाटनके नियम ।

ब्रह्मचर्यादिनियमान् धारयेद्विधिपूर्वकम् ।
जपेत गुरुमार्गेण दीक्षितो मंत्रसिद्धिदम् ॥ २० ॥

अर्थः—ब्रह्मचर्य आदि नियमोंको विधिपूर्वक धारण करै. गुरुमार्गकी रीतिसे मंत्रको सीखकर जपै तब दैव अनुकूल होनेसे सिद्धि होती है ॥ २० ॥ यह उच्चाटन कहा ॥

बुद्धिस्तम्भन ।

अन्तिमपाण्डववल्ली शिखरी सिद्धार्थमार्कवं चैव ।
श्वेतावचैषामर्कमादौ पीत्वा तद्घर्षयेल्लोहम् ॥ २१ ॥
पात्रे तच्चन्दनसमं द्विदिनान्ते समुद्धरेत् ।
तिलके सर्वशत्रूणां बुद्धिस्तम्भकरं परम् ॥ २२ ॥
" तारो नमो भगवते विश्वामित्राय वै मनः । "
चतुर्दशाक्षरो मंत्रः सिद्धेऽस्मिन्कर्मणि स्मृतः ॥२३॥

अर्थः—अब स्तंभन कहते हैं-पुराने अर्जुनवृक्षकी बेल, ओंगा, सरसौं, भांगरा और श्वेत बच इनका अर्क प्रथम पीकर इन्हींके अर्कसे लोहा घिसै ॥ २१ ॥ जब घिसते २ पात्रमें चन्दनसमान होवै तब दो दिनतक उसे उतारके पात्रमें रख छोड़ै उसके तिलकसे सब शत्रुओंकी बुद्धि स्तम्भन होजावै ॥ २२ ॥ ॐनमो भगवते विश्वामित्राय नमः " यह चौदह अक्षरका मंत्र इस कर्ममें कहा है ॥ २३ ॥

शत्रुपराजयकरण ।

यवनार्कस्तु सांघ्रिश्च हरितालेन वेष्टयेत् ।
ताम्रपात्रे पुनर्वेष्ट्य मुखस्थं सर्वशत्रुहृत् ॥ २४ ॥
पीत्वाऽऽदौ कृकलासार्कं "ॐचामुण्डेभवेति" च ।
मंत्रो भवेद्दारुणोऽसौ मनुरेकादशाक्षरः ॥ २५ ॥

अर्थः—जड़सहित प्याज वा लहसनका अर्क हरतालके साथ

तांबेके पात्रमें घिसकर उसको मुखमें रक्खै तो सम्पूर्ण शत्रुओंको जीतै ॥२४॥ परंतु प्रथम किरकैंटका अर्क पीकर, फिर "ॐनमश्चामुंडायै नमोनमः" या "भवाय च" ऐसे ग्यारह अक्षरोंका वारुण नाम मंत्र होता है ॥ २५ ॥ यह शत्रुपराजय कहा ॥

कौतुककरण ।

लिखेच्चित्रं तदर्केण रक्ताश्वारिप्रसूनकम् ।
सम्मार्ज्य दर्पणं पश्येत्खराश्याद्यं स्वरूपकम् ॥२६॥
ज्वालामुख्यम्लवेतं च रक्ताश्वारिप्रसूनकम् ।
सम्मार्ज्य दर्पणं पश्येन्नृखराश्वोष्ट्ररूपकम् ॥ २७ ॥
गोदुग्ध्यर्केऽञ्जनम्पुष्पे सेन्द्रजालिककज्जलैः ।
दर्पणे दृश्यते रूपं पूर्वजन्मसमुद्भवम् ॥ २८ ॥
नार्या जरायुधूपेन चित्रं वह्नौ प्ररोहति ।
पुनर्माहिषधूपेन योगात्स्वस्थम्भवेद्ध्रुवम् ॥ २९ ॥
नस्येऽञ्जनं तदा तेन कृतभ्रान्तिनिवारणम् ।
तत्तुल्या गर्भशय्या या धूपाद्भिन्ना न दृश्यते ॥३०॥
प्रकटत्व समायाति स्वर्णमाहिषधूपतः ।

अर्थः—भैंसेके रक्तके अर्कसे फूलके आकारका चित्र लिखै, और इसीके अर्कसे दर्पणको मांजकर देखै तो अपना स्वरूप भैंसेकासा दीखै ॥२६॥ ज्वलामुखी अम्लबेतका अर्क और लाल घोड़े भैंसेका अर्क इससे भी दर्पण माँज देखैं तो मनुष्यका गधे घोड़े, ऊंटकासा रूप देखै ॥२७॥ दुद्धीके अर्कमें फूल रंग, इससे इन्द्रजालरूपी कजलीसे दर्पणको मांज कर देखै तो पूर्वजन्मका स्वरूप जैसाका वैसाही दीखनेमें आवै ॥ २८ ॥ नारीकी जेरका धूप देनेसे पूर्वोक्त चित्रपुष्पादिका प्ररोहण हो अर्थात् हँसने

खिलने लग जावै और भैंसेकी धूपसे स्वस्थ होवै ॥ २९ ॥ वही सूँघा आंजा गया किये करायेकी भ्रान्तिको मेटै, उसीका सेजके पास धूप देवै तो दोनों परस्पर मिली दीखैं ॥ ३० ॥ फिर माहीषधूपसे प्रकट होवै ॥ यह कौतुकवर्णन किया ॥

मारणविधि ।

हालाहलं वत्सनाभं लाङ्गली चित्रमूलकम् ।
स्वादजां चोर्णनाभिं च श्वेता च गृहगोधिका ।३१।
एतदर्केण वस्त्राणि लिप्त्वा यः परिधारयेत् ।
विमुक्तर्णतयैवैवं जायतेऽसौ यमेऽतिथिः ॥ ३२ ॥
गोपालादस्योरसस्तु यत्नादर्कं समुद्धरेत् ।
पुनर्हालाहलार्केण भावितं तच्च मेलयेत् ॥ ३३ ॥
महारसेन देयोऽसौ चम्बेल्यर्कानुपानतः ।
वारमेकं स रमते रमणीभिर्भुनक्ति च ॥ ३४ ॥
स्तुतिं कुर्वन्ति वैद्यस्य को वा धन्वन्तरिस्त्वयम् ।
सोऽथ कुर्वीत वमनं रेचनं च म्रियेत च ।
रुधिरच्छर्दिरित्यादि दुष्टदुःखैर्विदूषितः ॥ ३५ ॥

अर्थः—हालाहल, वत्सनाभ, जलपीपली, चित्रक, मूलीखारी और मकड़ी और श्वेत छिपकली ॥३१॥ इनके अर्कको किसीके वस्त्रोंमें लगाकर पहिरावै तो वह दिये ऋणकी तरह निश्चित हुआ यमका अतिथि हो—अर्थात् यमपुरी जानेवाला हो ॥ ३२ ॥ बघेराके रसका अर्क यत्नसे निकाल फिर उसे हालाहल (विष) के अर्कमें मिलावै ॥ ३३ ॥ ऐसे महारसको चमेलीके साथमें देवै तो वह लेनेवाला पुरुष एकबेरही रमणीसे रमण

करने पाता और भोजन करने पाता, फिर नहीं ॥ ३४ ॥ उस वैद्यकी सब स्तुति करते हैं कि, क्या यह धन्वन्तरिजीही हैं ? क्या और वह साध्य लोही, छाद्‌णी, दस्त, वमनसे दुःखी होता हुआ मर जाता है ॥ ३५ ॥ यह मारण कहा ॥

अदृश्यकरण ।

विडालकंटकः क्षौद्रो हलमीनवकेशरैः ।
योगिन्यर्कोऽञ्जनं चैतदन्धकारे तु मेलयेत् ॥ ३६ ॥
तदीयां गुटिकां कृत्वा क्षिपेत्रेधा तु सम्पुटे ।
मुखमध्ये स्थिता यस्य सोऽस्य दृश्यः प्रजायते ।३७।
शिवालये तु कन्यार्कः शिलायां शिलया सह ।
ललाटे तिलकं कृत्वाऽदृश्यो भवति तत्क्षणात् ॥३८॥
श्रोतोञ्जनं सप्तवारं तेन कार्योऽर्कभावना ।
शरावं तत्तु तत्कुक्षौ दत्त्वा पाकगृहे पचेत् ॥ ३९ ॥
पुटपाकविधानेन पचेदेवं महानसे ।
तदञ्जनाददृश्यः स्यात्पुनस्तत्स्रंसनात्स्फुटम् ॥
"तारानमोडामरायादृश्यसिद्धिंकरोतुचेति" ॥४०॥

अर्थः—गोखरू, शहद, कलिहारी, नवीन केशर, जटामांसीके अर्कमें मिलाय अँधेरेमें अंजन बनावै अर्थात् अर्कमें इनको घोटै ॥ ३६ ॥ गाढ़ा होनेपर गोली वनाय तीन सम्पुट अर्थात् पर्तमें लपेट मुँहमें राखै तो अदृश्य होवे–अर्थात् किसीके देखनेमें न आवै ॥ ३७ ॥ शिवजीके मठमें घीग्वारके पाठेका अर्क खरलमें मैनशिलके साथ घिस ललाटमें तिलक लगातेही क्षणमात्रमें अदृश्य हो जावै ॥ ३८ ॥ श्रोतोंजनको घीग्वारके पाठेके अर्कमें

सातवार भिगोवै उसको सकोरेमें रखकर रसोईके स्थानमें पकावै ॥ ३९ ॥ पुटपाककी रीतिसे पकाकर अंजन बनाय अंजनसे अदृश्य हो. फिर उसको मिटाडालै तो फिर प्रकट होजाय. मंत्र यह है कि–" ओं तारो नमो डामराय मेऽदृश्यसिद्धिं कुरु-कुरु स्वाहा " ॥ ४० ॥ यह अदृश्य कहा ॥

मोहनकरण ।

कालोन्मत्तस्य पञ्चाङ्गं कृष्णसर्पैर्विनिःसृतम् ।
शम्भोरस्त्राद्भावितस्य धूपो यस्मै प्रदीयते ॥
सम्मोहनमवाप्नोति नरो वा नरवाहनः ॥ ४१ ॥

अर्थः—काला धतूरा जडसमेत काले साँपके साथ अर्क निकालके शिवजीके इस शस्त्रका धुवां जिसको दिया जाता है, वह मनुष्य हो वा तद्वाहन पशु हो तो तुरंत मोहा जाता है ॥४१॥

मोहनके अन्य उपाय ।

रुद्रप्रियस्य बीजानामर्केणैव विभावितम् ।
दशधा तालकं भाव्यं भक्षणात्सर्वमोहकृत् ॥ ४२ ॥
गुरुहेली कामफली काकोदुम्बरिभूफली ।
कन्यापुरुषमूत्राभ्यां सप्तवारेण भावयेत् ॥ ४३ ॥
शोषयित्वा ततः पेष्यं धत्तूरार्केण गोलिका ।
विधानतिलकेनैव मोहयेद्भुवनत्रयम् ॥ ४४ ॥

अर्थः—धतूरके बीजोंके अर्कमें हरतालको दशवार भिगोय सुखावै सो खानेमें देनेसे सबको मोहता है ॥ ४२ ॥ गुरुहेली, कामफली, काकोदुम्बरी और आँवला इनको कन्या और बालकके मूत्रमें सातवार भावना देवै ॥ ४३ ॥ फिर सुखाय पीसकर धतूरके अर्कमें गोली बनाय तिलक दे तीनों लोकोंको मोहित करता है ॥ ४४ ॥ यह मोहन कहा ॥

अग्निस्तम्भकरण ।

रक्तयाभेकशशिजपाटलार्को जलस्थले ।
कृत्वाऽथ पाचयेत्तैलं यथोक्तविधिना ततः ॥४५॥
एतेषामेव यो लेपं कारयेत्करपादयोः ।
अङ्गाराणामुपरितो नरो भ्रमति भूमिवत् ॥४६॥
सह्व्येक्षुभवं पीत्वा चर्वयेत्तगरं वचाम् ।
तप्तलोहं लिहेत्पश्चात्कृतदोषो विशुद्ध्यति ॥४७॥
उच्चटाया रसेनैव सर्वांगे लेपमाचरेत् ।
अङ्गाराद्यग्निकामध्ये भ्राम्यमाणो न दृश्यते ॥४८॥
तारश्च वज्रकिरणे अमृतं कुरु युग्मकम् ।
स्वाहान्तस्तिथिवर्णोऽयमग्निस्तंभो नियोजयेत् ।४९।

अर्थः—रक्तशोष, मेंडक, पाटल और कमोदिनी इनके अर्कसे नीचे जलका पात्र रखकर इनका तेल यंत्रविधिसे निकालै ॥ ४५ ॥ इसी तेलका लेप हाथ और पैरोंमें लगानेसे अंगारोंपर भी मनुष्य पृथिवीकी तरह बिना पीडाके डोलै ॥ ४६ ॥ अथवा घीके साथ ईखका अर्क पीके तगर बचको चाब लेवै. फिर तपे लोहेको निगले किये दोषसे छूट बेदाग होता है ॥ ४७ ॥ उटंगणके अर्कको सम्पूर्ण शरीरमें लेपै तो अंगारोंमें भ्रमताहुआ भी न मालूम पड़ै ॥ ४८ ॥ उसमें मंत्र यह है कि ॥ "ॐ तारकेश्वर वज्रस्यामृतं कुरुकुरु स्वाहा ॥" यह १५ अक्षरोंका मंत्र इस अग्निस्तंभकर्ममें नियोग करै ॥ ४९ ॥ यह अग्निस्तम्भ है ॥

जलस्तम्भनकरण।

सर्पाक्ष्यास्यस्य रक्तं तु कृत्वा चन्द्रार्कवह्निषु।
सुखेन जलमध्येऽसौ पर्यटेन्निजगेहवत् ॥ ५० ॥

अर्थः—सर्पके मुख और नेत्रका रुधिर लेवै और धूप तथा चांदनीमें रक्खै, फिर उसको अपने पास रखकर चाहै जहां जलमें निजघरकी तरह तैरा करै ॥ ५० ॥

जलस्तम्भका अन्य उपाय।

श्वेताजटारक्तिकायाः कुसुम्भपरिपोषितः।
तेनैव रञ्जयेद्वस्त्रं तद्वस्त्रेणाङ्गवेष्टितम् । ॥ ५१ ॥
गम्भीरजलमध्येऽपि यावदिच्छेत्स तिष्ठतु।
जलस्तम्भस्य सिद्धिस्तु भवेत्त्वस्यार्कभक्षणात्॥५२॥

अर्थः—सपेद चिरमिटीकी जड कुसुमके रसमें पीसकर उसीसे वस्त्रको रंगकर अपने शरीरमें लपेटै ॥ ५१ ॥ तो गंभीर भारी अथाह भी जलमें यथेच्छ विचरै; और जलके थमनेकी सिद्धि तो मच्छ (मछली) के अर्क खानेसे भी होवै ५२

तीसरा उपाय।

भैरवीयकपालस्य चूर्णं श्लेष्मान्तकं फलम्।
पिष्ट्वा तेनाजिनं लिप्त्वा घनं ह्यङ्गुलमानतः॥५३॥
तच्छुष्कं निक्षिपेत्तोये तडागे वा नदीतटे।
तस्योपरिस्थितो योऽसौ न कदाचिन्निमज्जति।५४।

अर्थः—भैरवीय कपाल (मनुष्यकी खोपड़ी) का चूर्ण और लसोड़ेका फल इनको पीस आसनको दो अंगुल पुट लपेटै॥५३॥

उस आसनको सुखकर तालाब या नदीतीर जलमें छोड़ देवै उस पर जो बैठे कदाचित् डूबे नहीं ॥५४॥ यह जलस्तंभ कहा॥

उन्मत्तकरण ।

ऊर्णनाभिश्च षड्बिन्दुः समांसा कृष्णकण्टकी ।
भावयेदेतदर्केण ततो गात्रे विनिक्षिपेत् ॥ ५५ ॥
स्फोटा भवंति सप्ताहान्म्रियते च तया रुजा ।
इन्दीवरशिखण्डीनां पिच्छलेपात्सुखी भवेत् ॥५६॥
याम्यभौमे मृतो यस्तु तद्भस्मादाय रक्षयेत् ।
वैरिवर्चे समायुक्तं शरावे संपुटो भवेत् ॥ ५७ ॥
मृतकेशैस्तदावेष्ट्य शून्यागारे परित्यजेत् ।
यावच्छुष्यति सा विष्ठा तावच्छत्रुर्मृतो भवेत् ।५८।
"तारो नमो भगवते ओं डामरेश्वराय च ।
अमुकम्मारय २ ठठः" एनं मन्त्रमुदीरयेत् ॥५९॥

अर्थः—ऊर्णनाभ, छबिन्द, यह बराबर भाग लेके काली कटेलीके अर्कमें भावना देवै फिर उसको शत्रुके शरीरपर छिड़का देवै ॥ ५५ ॥ तो सात दिनमें उसके फोड़े निकलै, और वह उसी रोगसे मर जावै, और नीलकमल व मोरपंखके लेपसे सुखी होवै ॥ ५६ ॥ जो मनुष्य मंगलवारके दिन भरणी नक्षत्रमें मरै उसकी भस्म लेके यत्नसे रख छोड़े फिर उसमें शत्रुकी विष्ठा मिलावै और सकोरोंसे मूँदकर ॥ ५७ ॥ मुरदाके बालोंसे बांधै और शून्यघरमें उसे छोड़ देवै तो जितने विलंबमें वह विष्ठा सूखै तबतक उन्मत्त होकर शत्रु मर-जावै ॥ ५८ ॥ "ॐ नमोभगवते ॐ डामरेश्वराय अमुकं मारय २ ठः ठः" इस मंत्रका यथोचित विधिसे जप करै ॥ ५९ ॥

उन्मत्तकरणका अन्य प्रयोग ।

भावयेद्धूर्तजार्केण भक्ष्ये पाने प्रदीयते ।
उन्मत्तो जायते स्वस्थः सितागोदुग्धपानतः ।६०।
लवमुखीरुद्रहारः कण्टकीः कण्टकैः समम् ।
लाङ्गूलवद्विषो विष्ठां गृहीत्वा दक्षिणांशजाम् ६१
विसृजेच्छयने यस्य सद्यः शत्रुर्यमं स्मरेत् ।
पयसा मुंडितं मंडं शय्यां त्याग उपक्रमः ॥ ६२ ॥

अर्थः—पूर्वोक्त भस्मको धतूरेके अर्कमें भिगोके खानपानमें देवै तो शत्रु उन्मत्त हो जाय फिर दूध मिश्रीके पीनेसे सुखी हो ॥ ६० ॥ लोमुखी, नागदमनी और काटोंसहित कटेली, इनको जमालगोटेके अर्कमें भावना देवै फिर उसमें हरताल डालकर सुखावे उसकी धूपसे शत्रु उन्मत्त हो जाय, फिर कालीजीरीके धुवांसे सुखी होवै और भेड़ियाकी विष्ठाको लेकर ॥६१॥ जिसके शयनस्थानमें छोड़ देवै वह शत्रु यमका स्मरण करै अर्थात् सुधि बुधि भूल जाय, और दूधसे रगड़ीहुई खोपड़ीको सेजपर गेर देनेसे भी ऐसाही हो ॥ ६२ ॥ यह उन्मत्तकरण कहा ॥

दूरदेशगमनसाधन ।

शरपुंखा कोकिलाक्षः काकजङ्घा च भृङ्गकः ।
एते श्वेताश्च ह्रींबीजं पुष्येऽर्के ज्येष्ठयोद्धरेत् ।।६३।।
पीत्वा तदर्कमेतेषां मूलैस्तु कटिबन्धनम् ।
वायुवद्भ्रमते पृथ्वीं प्रयासायासवर्जितः ॥ ६४ ॥
श्वेतकाकस्य जङ्घाच तथा कामफलानि च ।
कृष्णायाः सुरभेर्दुग्धं पत्रवृक्षस्य वल्कलम् ॥ ६५ ॥

एतेषां पादलेपेन योजनानां शतं व्रजेत् ।
श्वेतार्कस्य हि मूलाङ्गं शुक्लवंशस्य रोचना ॥६६॥
अजाया नवनीतेन पुष्यनक्षत्रपाचितैः ।
लेपेन पादतलयोर्व्रजेत्कामिकमार्गकम् ॥ ६७ ॥

अर्थः—शरफोंका, कोकिलाक्ष, काकजंघा और भाँगरा इनका अर्क चित्रकके साथ पुष्यनक्षत्रका जव सूर्य होवै वा ज्येष्ठानक्षत्रमें निकासै ॥ ६३ ॥ उस अर्कको पीकर और इन्हींकी जड़ें कमरमें बांधै तो पृथ्वीपर पवनकी तरह तैरता विना प्रयास सुखपूर्वक फिरता रहै ॥ ६४ ॥ श्वेतकाकजंघा, कामफली, काली गौका दुग्ध और पत्रजाके वृक्षकी छाल ॥ ६५ ॥ इनको पैरमें लपेटनेसे सौ योजनतक चला जावै, और श्वेत आँक, व श्वेत बांसकी जड़ और गोरोचन ॥ ६६ ॥ इनको बकरीके मक्खनसे पुष्यनक्षत्रमें पकावै और चरणोंके तलुवोंपर लेपै तो जितना चाहै मार्गमें चलकर अपना काम करै ॥ ६७ ॥ यह दूरदेशान्तरगमन कहा ॥

बुद्धिभ्रंशकरण ।

भ्रामर्यर्कं तु पीत्वादौ पश्चात्तद्घ्राणमाचरेत् ।
प्रेतास्यगं पुरं कृष्णधूपितं च चिताग्निना ॥ ६८ ॥
प्रेताहितस्य धूपेन जगदावेशितं भवेत् ।
कृष्णागुरुं तालकं च कनकस्य फलानि च ॥ ६९ ॥
उग्रगन्धा कुक्कुटाण्डः सकलानां प्रधूपनात् ।
धूपेन वेशयेत्सर्वं यावद्देहं न संशयः ॥ ७० ॥
मृडप्रियप्रसूनस्य पञ्चाङ्गानि च भावयेत् ।
यमवाहनरक्तेन यावत्प्रकृतिसंख्यकम् ॥ ७१ ॥

तदत्यष्टिलवं देयं वत्सनाभं च धूपनम् ।
चेष्टां हरति सर्वेषां पुरुषो निशिताकृतिः ॥ ७२ ॥

अर्थः—भौंरीके अर्कको प्रथम पींकर वा सूँघकर फिर माद-कर्मका नाम लेवै और मुरदेके मुखमें रक्खे हुए गूगलसे काला, चिताकी अग्निसे धूनी देवै ॥ ६८ ॥ फिर रालकी धूनी देनेसे सम्पूर्ण जगत् बावलासा हो जाय. या कृष्णागुरु, हर-ताल, धतूरेके फल ॥ ६९ ॥ बच, अजवायन और मुरगीका अंडा इन सबोंकी धूपसे सम्पूर्ण देहधारियोंको आवेश अर्थात् बावलापन हो जाता है इसमें सन्देह नहीं जानना ॥ ७० ॥ धतू-रेके फूल, और पंचाग अर्थात् धतूरेके बक्कल, मूल, पत्र, काष्ठ व फूल लेके कूटकर भैंसेके रक्तमें २१ बार भावना देवै ॥७१॥ फिर उसके आठवें भागको वत्सनाभसे धूनी देवै. वह धुवां सबोंकी चेष्टाको हरता है. उससे मनुष्य लोहकी मूर्ति समान हो जाता है ॥ ७२ ॥ यह बुद्धिभ्रंशन कहा ॥

स्त्री–पुरुषोंका संभोगसन्धीकरण ।

सद्यो मृतस्य ग्रीवाकंक्लिन्नवस्त्रं करीरके ।
दृढीकृतं तु कीलेन सुप्ते नारि निधारयेत् ॥ ७३ ॥
सकृद्युक्तौ प्रजायेतां तदा नारीनरौ भृशम् ।
मोक्षो वस्त्रस्य वंशाच्चेन्मुक्तिर्भूयात्तदा तयोः ॥७४॥
समुद्रगाया नद्यास्तु सुतीरगतमृत्तिकाम् ।
सुभैरवस्य वाहस्य रतौ रेतस्तयोस्तु यत् ॥ ७५ ॥
इमां तु वटिकां योऽसौ कोलयुक्तां करोति च ।
सर्वासनानां बन्धं तु मोक्षोऽस्यार्कस्य पानतः ।७६।

अर्थः—तुरतके मरेहुए मुरदाकी ग्रीवा (कंठ) का अर्क (रक्त) लेकर उससे भिगोया वस्त्र बांसमें कीलसे ठोककर रमनेवालेकी शय्याके पास छोड़ देवै ॥ ७३ ॥ तो उससे वें दोनों स्त्री–पुरुष् जुड़े रहजाते हैं. और अब उसकी कील निकाल वस्त्र उस बांससे दूर हो तब उनकी छुट्टी होती है. यह देखनेवालोंको आश्चर्य्य होवै ॥ ७४ ॥ समुद्रमें मिलनेवाली जो बड़ी नदी है उसके तटकी मिट्टी लेके कुत्तेके बाल, उसी कुत्तेके वालोंके उसीके किये विषयसे टपके वीर्य मूत्र रजमें रंगकर ॥ ७५ ॥ उसकी गोली बेरकी बराबर बनाये जिस किसीको देवै तो सम्पूर्ण आसनोका बन्धन हो अर्थात् कोई भी आसन न खुलै फिर इसीका अर्क पीनेसे छुट्टी हो ॥ ७६ ॥

क्षुधावृद्धि ।

अग्न्यर्कं तु समाकृष्य पिबेत्पश्चाद्भुजिं चरेत् ।
वन्दार्केणार्कवृक्षस्य पीठेकृत्वा निषेचनम् ॥ ७७ ॥
योऽसौ भुंक्ते घृतैः सार्द्धं वह्निना भीमसेनवत् ।

अर्थः—जो चित्रकके अर्कको निकालकर पीलेवै फिर भोजन करै; अथवा आकके फूलोंके भीतरके गुन्दोंके अर्कको पीकर कुछ आसनके नीचे छिड़क देवै ॥ ७७ ॥ तो घृतके सहित बना हुआ भोजन भीमसेन समान बहुतसा करै–

क्षुधावृद्धिका दूसरा प्रयोग ।

गृहीत्वा मंत्रितान्मंत्री बिभीततरुपल्लवान् ॥ ७८ ॥
आक्रम्य दक्षजङ्घायां विंशत्याहारभुग्भवेत् ।

अर्थः—संध्यासमय विधिपूर्वक बहेड़ेको न्यौता देकर पत्ता लाय अर्क निकास करके ॥ ७८ ॥ उस अर्कको दक्षिण जंघामें लगावै तो बीस आहारके समान भोजन करनेवाला होवै–

तीसरा प्रयोग ।

अक्षमामंत्र्य सन्ध्यायां शतपुष्पस्य मालिका ॥ ७९ ॥
शिरो बद्धा कृपणतां त्यक्त्वा पाण्डुवदत्त्यसौ ।

अर्थः—सन्ध्यासमय आकके वृक्षको न्यौत कर प्रातःकाल. उसके सौ फूलोंकी मालाको शिरमें बांधकर ॥ ७९ ॥ कृपणाताको त्याग करके भोजन करै तो वह मनुष्य भीमसेनके समान भोजन करै, " ॐनमस्ताराय सर्वभूताधिपतये मम ग्रासं शोषय २ स्वाहा " इस मंत्रको नियमपूर्वक जपै तो कार्यसिद्धी होवै; इति आहारः ॥

क्षुधानिवारण ।

गणेशप्रियमूलानि रथाङ्गारभ्य मूलकम् ॥ ८० ॥
नीलोत्पलस्य मूलानि कसेरुं चापि पाचयेत् ।
तत्पायसं च सघृतं भुक्तं मांसं क्षुधापहम् ॥ ८१ ॥

अर्थः—मूषाकर्णी, असगन्धमूली ॥ ८० ॥ नील कमलकी जड़ और कसेरू इनको खूब पकावै. इसकी खीर बनाय घीके साथ भोजन करनेसे महीनातककी क्षुधा दूर होजाती है ॥८१॥

क्षुधानिवारण प्रयोग दूसरा ।

उदुम्बरशमीजम्बूबीजं मूलशिरीषजम् ।
बीजं भुक्तं तु तच्चूर्णं मासार्द्धं क्षुत्तृषापहम् ॥८२॥

अर्थः—गूलर, शमी, जामुन, मूली, सिरस और बीज,— इनका चूर घीके साथ खावै तो पंद्रह दिनकी भूख प्यासका नाश करता है ॥ ८२ ॥

क्षुधानिवारण तीसरा प्रयोग ।

कोकिलाक्षस्य बीजानि महिषीदुग्धक्षौद्रयुक् ।
द्वादशाहं क्षुधा हन्यात्सर्वत्रार्कः समुद्भवः ॥८३॥

अर्थः—कोकिलवृक्षके बीज और भैंसका दूध, शहदके साथ इनका अर्क सबको बारह दिनकी क्षुधाका नाश करता है ॥ ८३ ॥

चोर आदिकोंका भयनिवारण ।

टङ्कलोहात्परंभेदजातार्केण निषेधयेत् ।
सहस्रधा तु तत्पृष्ठमनुमेकं लिखेन्नरः ॥ ८४ ॥
पिशाचिनीगणो शांतिं चोरिणीति पदं तथा ।
नखाक्षरो मनुस्यमिति कुष्ठयाम्रभेदकम् ॥ ८५ ॥
एतत्प्रभावतः कोऽपि मेघशब्दं शृणोति न ।
योगनिद्रे विष्णुमाये सर्वान्निद्रय निद्रय ॥ ८६ ॥
इमं मंत्रं तु जपता विंशद्वर्णमनुत्तमम् ।
गुडपिप्पलिकामध्ये बलेर्निर्दयते जगत् ॥ ८७ ॥
आदौ पीत्वा द्विधाऽर्कं तु धत्तूरजलभावितम् ।
मांसं स्रोतोंजनं तेन जिताक्षो निशि पश्यति ॥८८॥
तारो नमो ब्रह्मवेषरिरक्ष द्विठठं मनुः ।
मन्वक्षरोपसंसिद्धिः पंचांगविधिना ततः ॥ ८९ ॥
गृहीत्वा सप्त पाषाणान् कट्यां बद्ध्वा परौ ततः ।
मुष्टौ गृहीत्वा गृहणीं पादयोर्लिप्य साधकः ॥९०॥

धत्तूरार्कं पिबेच्छीघ्रं विशेषो जायते क्षणात् ।
कुर्वन्ति स्वेषु कलहं चौराणां स्तंभने गतिः ॥९१॥
आद्रिचौरे कठिल्लस्य ब्रह्मलब्धवरस्य च ।
तेषां चौरभयं नास्ति ये स्मरंति कठिल्लकम् ॥९२॥

इति श्रीलङ्केश्वररावणकृतार्कप्रकाशे चिकित्साकर्म नानाप्रकाररोगनिवारणं नाम शतकं अष्टमम् ॥ ८०० ॥

अर्थः—लोहचूरा १ टंक, और पाषाणभेद १ टंक इनका अर्क शुद्ध आसनपर बैठकर एक हजार बार सींचै. फिर इस मंत्रको इन कही औषधोंके अर्कसे रँगे पत्रपर १०० मंत्र लिखै ॥८४॥ " ॐतारक नमस्ते चोरिणि पिशाचिनि तारां शमय २ स्वाहा " यह वीस अक्षरोंका मंत्र सिद्ध है ॥ ८५ ॥ इसके प्रभावसे कोइ मेघका शब्द भी सुनै तो न चेतै अथवा गुड़ पीपलकी बलि देनेसे भी सारा जगत् आलस्यमें शिलासमान पड़ा रहे " ॐनमो योगनिद्रे विष्णुमाये सर्वान्निद्रय निद्रय स्वाहा " ॥ ८६ ॥ इस २० अक्षरोंके मंत्रको जपते हुए सिद्धि होवै ॥ ८७ ॥ प्रथम वृद्धदारु नाम औषधका अर्क पीकर धतूरेके अर्कमें भावना देवै उसको नेत्रोंमें आंजे जावै तो एकमासमें रात्रिको अच्छे प्रकार सब कुछ दीखने लगे ॥ ८८ ॥ " ॐनमो ब्रह्मवेषं रक्ष रक्ष ठः ठः स्वाहा " इस १४ अक्षरोंके मंत्रको पंचांगविधि अर्थात् ब्रह्मचर्यादि विधिसे पूजन करके जपै तो सिद्धि होवै ॥ ८९ ॥ पत्थरकी सात कंकरी बराबर २ की लेलेके कमरमें बांधकर मुट्ठीमें भटकटैया लेकर चलाजाय उसीका अर्क चरणोंमें लगाकर चले तो धन मिलै ॥ ९० ॥ जो धतूरेके अर्कको पीकर

जाय तो उसी क्षणमें उनके चित्तमें विक्षेप हो जाय, और वे परस्पर कलह करने लगजायँ इस प्रयोगकी चोरोंके रोकनेमें सामर्थ्य है ॥ ९१ ॥ चोर आदिकोंके भयमें ब्रह्माजीसे वर प्राप्त भये कारदेल उसका जो अर्क सो जो घरमें छिड़कते वा रखते हैं उनको प्रायः चौरोंसे भय नहीं होता है ॥९२॥ ॥८००॥

इति अर्कप्रकाशे श्रीमत्पण्डितनारायणप्रसादमुकुंदरामकृतभाषायां नानाप्रकाररोगनिवारणं नाम अष्टमं शतकम् ॥ ८०० ॥

अथ नवमं शतकम् ।

रावण उवाच ।

कर्णगण ।

तिलपर्णी समुद्रोत्थफलं च नवधा तथा ।
समुद्रस्थितिरेवास्य शिराकर्णगणोऽप्ययम् ॥ १ ॥

अर्थः—तिलपर्णी (रक्तचंदन), समुद्रफल, और जलवेंत यह नाडियों और कर्णोंका 'पोषण करनेवाला' गण है ॥ १ ॥

वामनगण ।

ज्योतिष्मती च हेमाह्वा तलिता नागिनीफलम् ।
माक्षिका देवदाली च गणोऽयं वामनः स्मृतः ॥२॥

अर्थः—मालकांगनी, चूक, धतूरा, नागपुष्पी, नागदमनीका फल, सोनामक्खी और देवदारु यह गण वामन अर्थात् वमन करानेवाला है ॥ २ ॥

रञ्जनगण।

चतुर्विधा हरिद्रा स्यात्पतङ्गो रक्तचन्दनम्।
नीली कुसुम्भमञ्जिष्ठा लाक्षा मेहंदिकिंशुकः ॥३॥
जलं पुष्पं चांजनं च विमला पारिजातकः।
पांडोः फलं बीजसारो गणोऽयं रंजनो स्मृतः ॥४॥

अर्थः—दारुहलदी, वनदारुहलदी, पतंग, लालचन्दन, नील कुसुम, मँजीठ, लाख, मेहँदी, ढांकके केसू ॥ ३ ॥ जंगाल, नील, सपेदा, पारिजात, पांडूका फल और विजयसार यह रंजक गण कहा है ॥ ४ ॥

नेत्र्यगण।

रसाञ्जनं द्विधा प्रोक्तं त्रिफला लोध्रकद्वयम्।
कुमारिका च विवला गणोऽयं नेत्र्यसंज्ञिकः ॥ ५ ॥

अर्थः—दोनों प्रकारका रसोंत, त्रिफला दोनों लोध, घीग्वारका पाठा और थूहर यह नेत्र्यगण नेत्रपीडामें हितकारी है ॥५॥

त्वच्यगण।

तैलं तु नवधा प्रोक्तं बाकुची चक्रमर्दकम्।
स्थौणेयं पर्पटी मृक्का त्वच्योऽयं गण उच्यते ॥६॥

अर्थः—तिल्ली, सरसौं, अंडी, आदि नव प्रकारका तेल होता है सो और बाकुची, पवांर, थुनेर, पापड़ी और सिरका यह गण त्वचाको हितकारक है ॥ ६ ॥

उपविषगण।

भल्लातकं चातिविषं चतुर्भङ्गा च खाखसम्।
करवीरं द्विधा प्रोक्तमहिफेनं द्विधा मतम् ॥ ७ ॥

धत्तूरस्तु चतुर्द्धा स्याद्द्विधा गुञ्जाविनिर्विषी ।
विषमुष्टिर्लांगली च गणश्चोपविषाह्वयः ॥ ८॥

अर्थः—भिलावां अतीस, चारोंप्रकारके खसखस दाने, दोनों कनेर, दोनों प्रकारकी अफीम ॥ ७ ॥ चार प्रकारका धतूरा, दोनों चिरमिटी, निर्विशी, कुचिला और जलपीपरि, यह उपविष (विषवालोंसे पृथक् गणनामें विषगण है ॥ ८ ॥

जलपुष्पगण ।

अष्टधा कमलानि स्युर्जलसी च चतुर्विधा ।
जलजीवी च कुम्भीका जलपुष्पगणस्त्वयम् ॥९॥

अर्थः—आठों प्रकारके कमल, चार प्रकारकी जलैठी, जलजीवी और कुंभीक यह जलपुष्पगण है ॥ ९ ॥

कन्दगण ।

आलूकमष्टधा प्रोक्तं मूलकं त्वष्टधा तथा ।
अष्टधा कदलीकन्दो गृञ्जनं द्विविधं मतम् ॥१०॥
हस्तकन्दश्च लशुनं पलाण्डुर्द्विविधो मतः ।
अष्टधा पद्मिनीकन्दो वाराहीकन्दलक्षणः ॥ ११ ॥
क्रमुकं मुशलीकन्दो विदारी च कसेरुकः ।
शतावरी चाश्वगन्धा बृहत्पाण्डुः सुदर्शनः ॥१२॥
आर्द्रकं शक्रकन्दश्च कोलकन्दो नगोद्भवः ।
मौलिकन्दो सूरणं च ज्ञेयः कन्दगणस्त्वयम् ॥१३॥

अर्थः—आठ प्रकारका आलू, आठ प्रकारकी मूली, आठ प्रकारकी कहेलीकी गांठ, दोप्रकारका गाजरकंद ॥१०॥ शलगम,

लहसन, प्याज दो प्रकारका, आठ प्रकारका कमलिनीकंद, वाराही कंदलक्षणकी ॥ ११ ॥ वनकोहलाकंद, मूशलीकंद, विदारीकंद, कसेरूकंद, शतावरकंद, असगंधाकन्द, बृहत्कंद, पांडुकंद, सुदर्शनकन्द, ॥ १२ ॥ अदरखकंद, शकरकन्दी, बेरकंद, दोनों पर्वतीकन्द, मौलिकन्द, सूरणकन्द और जिमीकन्द, यह कंदगण जानना ॥ १३ ॥

लवणगण ।

शाकम्भरी च सामुद्रं चोद्भिदं विट् सुवर्चलम् ।
सैन्धवं नीलकण्ठं च पंगुं लवणमष्टधा ॥ १४ ॥

अर्थः—साँवरलवण, समुद्रलवण, उद्भिज्जलवण, बिडलवण, सोंचरलवण, सेंधालवण, नीलकंठलवण और पंगुलवण यह आठ प्रकारका लवण है ॥ १४ ॥

क्षारगण ।

सर्जिक्षारो यवक्षारः टंकणं च सुवर्चिका ।
पलाशगौर्या शिखरी क्षारसप्तकमीरितम् ॥ १५ ॥

अर्थः—सज्जीखार, जवाखार, सोहागाखार, शोराखार, ढाकखार और ओंगाखार यह सात प्रकारका खार कहा ॥ १५ ॥

अम्लगण ।

जम्बीरद्वितयं बीजपूरं मधुककर्कटी ।
निम्बूकमरिकं चिञ्चावृक्षाम्लं चाम्लवेतसम् ॥ १६ ॥
नैपालं चणकाम्लं च चमीरं तगरं तथा ।
धान्याम्लमम्लपत्री च चुक्रमम्लगणस्त्वयम् ॥ १७ ॥

अर्थः—दोनों जँभीरी, बिजौरानींबू, मधुककड़ी, कागदी

नींबू, कमरख, इमली, वृक्षाम्ल, अम्लवेत-॥१६॥नैपाली, चणेका बघर, चमीर, तगर, धान्यामल (कांजी) अम्लपत्री (अश्मन्तकवृक्ष) और चूक यह अम्ल (खटाई) गण है ॥ १७ ॥

फलगण।

आम्रं तु त्रिविधं प्रोक्तं द्विधाऽऽम्रातकमुच्यते ।
राजाम्रं चैव कोशाम्रं पनसस्त्रिविधो मतः ॥१८॥
कदलं त्वष्टधा प्रोक्तं लकुचं चिर्भिटं द्विधा ।
त्रिधा तु नारिकेरं स्यात्कलिन्दं द्विविधं मतम् १९
द्विविधं खर्जूरकं स्यात्पंचधा कर्कटी भवेत् ।
पूगीफलं चतुर्धा स्याद्द्विधा तालफलं भवेत् ॥२०॥
बिल्वं कपित्थनारङ्गे तिंदुकं स्याच्चतुर्विधम् ।
राजामलं च जंबू च बदरं चक्रमर्दकः ॥ २१ ॥
द्विधा चैतानि चत्वारि विंशकं तु पियालकम् ।
क्षीरिणी पद्मबीजं च मक्षा शृङ्गटका वरा ॥ २२ ॥
परूषकं मधूकश्च दाडिमं स्याच्चतुर्विधम् ।
द्विधा गौरीफलं कोलं शृङ्गारी मिष्टबीजकम् ॥२३॥
बहुवारश्च कतकं सुनेपाली बदामकम् ।
द्राक्षा खजूरिका द्वेधा बादामाक्षोटपीलुकम् ॥२४॥
मिष्टनिम्बूफलं सेवं शिलीन्ध्रं कट्फलानि च ।
आंतकोतामृतफलं प्रोक्तः फलगणस्त्वयम् ॥२५॥

अर्थः—आम तीन प्रकारका, दो प्रकारके अमरा, राजाम्र और कोशाम्र, कटहर तीन प्रकारके ॥१८॥ आठ प्रकारके केले,

बड़हर, गुरुभिहूं, तीन प्रकारके नारियल, दोप्रकारके तरबूज; ॥ १९ ॥ दो तरहकी खजूर, पांच प्रकारकी ककड़ी, चार प्रकारकी सुपारी, दो प्रकारके ताड़फल, ॥ २० ॥ बेल, कैथा, नारंगी, चारप्रकारका तेंदुआ और चार २ प्रकारका राजाम्र लामड़ा भेद और राजपुत्रक, जामन, बेर, पवांर ॥ २१ ॥ ये चारों दो २ प्रकारके, और वीस प्रकारकी चिरौंजी, खिरनी, कमलगट्टे, मरवाने, सिंघाड़े बहुत अच्छे ॥ २२ ॥ फालसे, महुवा, चार प्रकारके अनार, दोनों गौरीफल, (अन्यदेशप्रसिद्ध) दोनों कोल (बेर) सिंघाड़ी मीठा, बीज, (अन्यदेशप्रसिद्ध) ॥ २३ ॥ शेलुभी, निर्मली, वृक्षफल, सुलेमानी बादाम, दाख, खजूरी दोनौं, बादाम, अखरोट, शीतफल, ॥२४॥ मीठा नींबूफल, सेव, शिलींध्रवृक्षका फल, आंतकोत, अमरफल (नासपाती), यह फलगण (फलोंका समूह) कहा ॥ २५ ॥

शालिगण।

रक्तशालिः सकलिमं पाडुकं शंकुनाहताः ।
सुगन्धकः कर्दमको महाशालिश्च दूषकः ॥ २६ ॥
पुष्पाण्डकः पुण्डरीकस्तथा माहिषमस्तकः ।
दीर्घशूकं काञ्चनको हायनो लोध्रपुष्पकः ॥२७॥
षष्टिको नङ्गमालश्च पार्वतीयश्च झिंझणा ।
हाकुवा राजभोगश्च प्रोक्तः शालिगणस्त्वयम्॥२८॥

अर्थः—चावलोंका भेद कहते हैं—रक्तशालि, सकलिम, पांडुक, शंकुनाहत, सुगंधक, कर्दमक, महाशालि, दूषक ॥ २६ ॥ पुष्पांडक, पुण्डरीक तथा माहिषमस्तक, दीर्घशूक कांचनक, हायन, लोध्रपुष्पक, ॥२७॥ षष्टिक, अनङ्गमाल, पार्वतीय, झिंझना, हकुवा, और राजभोग यह शालिगण अर्थात् चावलोंका समूह कहा ॥२८॥

शिम्बीधान्यगण ।

त्रिधा यवश्च गोधूमो मुद्गः षड्विध ईरितः ।
त्रिविधः प्रोच्यते मांषो राजमाषस्त्रिधा मतः ॥२९॥
मकुष्ठस्तुम्बरी त्रेधा निष्पावश्च मसूरकः ।
त्रिधा चणकमुद्दिष्टं कलापश्च त्रिपुंड्रकः ॥ ३० ॥
सर्षपस्त्रिविधः प्रोक्तस्तिलः प्रोक्तश्चतुर्विधः ।
अतसी तुवरी राजी शिम्बीधान्यगणस्त्वयम् ॥३१॥

अर्थः—तीन प्रकारके जौ, गेहूं और मूँग छे २ प्रकारकी, उड़द, माष, चौंला यह तीन प्रकारका (उड़द, राजमाष महामाष चपल यह तीन प्रकारका राजमाष ॥ २९ ॥ मौठ, अरहर तीन २ प्रकारके, लोबिया, मसूर तीन २ प्रकारकी, तीन प्रकारके चना, तीन प्रकारका कलाप, और मटर ॥ ३० ॥ तीन प्रकारके सरसों, चार प्रकारका तिल, अलसी, राई यह धान्य (अन्न) का गण है ॥ ३१ ॥

क्षुद्रधान्यगण ।

कंगुश्चतुर्विधः प्रोक्तः श्यामाकश्चणकः कुदः ।
कोद्रवो द्विविधः प्रोक्तो वंशबीजं शरोद्भवम् ॥३२॥
कुसुम्भबीजं तीनीलं योनरी च गवेधुकः ।
द्विजोंधला बाजरी च क्षुद्रधान्यगणस्त्वयम् ॥३३॥

अर्थः—मालकांगनी चार प्रकारकी, शामा, महुवा, कोदौं, वंशवीज, शरवीज ॥३२॥ कुसुमवीज, तीनील, पुनैरा, गरहेड़वा, ज्वार, बाजार, यह क्षुद्रनाम छोटे नाजोंका गण है ॥ ३३ ॥

पत्रशाकगण ।

द्विर्वास्तुकं पोतकी द्विस्त्रिर्मार्षस्तण्डुलीयकम् ।
द्विधा पालक्यपि त्रेधा द्विधा चाकालशाककम्॥३४॥
करवीलोणिकाघाणीचिञ्चुचाङ्गेरिचुक्रिकाः ।
सुनिष्णकश्च गोजिह्वा द्रोणपुष्पी पटोलकम् ॥ ३५ ॥
शतपुष्पा मेथिका च कुञ्जरस्तीक्ष्णकण्टकाः
धान्यकं चक्रवर्ती च जीवंती काकमाचिकाः॥ ३६ ॥
पर्पटः कासमर्दश्च द्विधा राजगिरीकितः ।
लिङ्गदण्डो द्विधा कोष्ठो पत्रशाकगणस्त्वयम् ॥३७॥

अर्थः—दोनों बथुवा, दोनों पोईका शाक, तीन प्रकारका मरुसा, चौलाई, दोनों पलाकशाक, तीनप्रकारका नारीशाक, दोनों काल शाक ॥ ३४ ॥ कडरी, लोनीशाक, घाणी, चिंचु, चांगेरी, चूक, नित्रासी, गोभी, गोमा, परवल, ॥ ३५ ॥ सौंफ, मेथी, कुहैंदरा, तीखे कांटोंवाला शाक, अन्यदेशीय, धनियां, चकवड़, अजवायन, कसौंदी ॥ ३६ ॥ पपड़ीशाक, गँठैली दोनों राई, कीडांकल, लिंगदण्डी, और दोनों कोठशाक यह पत्रशाकगण है ॥ ३७ ॥

पुष्पशाकगण ।

काचनारिर्द्विधा रास्ना खदिरः शाल्मलिर्द्विधा ।
चतुःसौभांजनोऽगस्तिः पुष्पशाकगणस्त्वयम् ॥३८॥

अर्थः—दोनों कचनार, दोनों राई, खैर, दोनों शाल्मलि (सेमर) चार प्रकारका सहिंजना, और अगस्ति यह फूलोंका शाकगण है ॥ ३८ ॥

फलशाकगण ।

द्विः कूष्माण्डं त्रिधालाम्बुः करसी द्विश्च डिंडिशम् ।
द्विः कारवेल्लं वृन्ताकं चतुःकर्कोटकी द्विधा ॥ ३९ ॥
त्रिधा कोशातकी बिंबी द्विधा शिंबी त्रिधा भवेत् ।
दक्षिणं पञ्चधा दोडी कण्टकारिफलं द्विधा ॥ ४० ॥
पिण्डारकं च गोविंदं द्विधा चैलं तथैव च ।
श्लेष्मान्तकं काकतिन्दुफलं शाकगणस्त्वयम् ॥४१॥

अर्थः—दोनों कुम्हेड़े, तीन प्रकारके अलांबू, घीया, दोनों करसी, टींडसीं, करेला, ककोड़ा, दोनों बैंगन, चार प्रकारकी ककड़ी ॥ ३९ ॥ तीन प्रकारकी तोरई और कुंदुरू दोनों, सेवंती नो प्रकारके, दक्षिणी डोड़ी पांच प्रकारकी, दो प्रकारकी पैराके फल ॥ ४० पिंडारा, गोंदा, चेलवृक्ष, शेलटक और तिंदुशाक यह फलशाकगण कहा है ॥ ४१ ॥

जाङ्गल जीवगण ।

हरिणैणकुरङ्गाश्च पृषश्चंद्रश्च बिंदुकः ।
राजीवः कुकुटो मुण्डी शम्बरा जाङ्गलाः स्मृताः ।४२।

अर्थः—हिरण, तामणा, काला हिरण, चाँदविन्देवाला, बारहासिंहा और राहू बिनसींगके यह जांगल जीवगण है ॥ ४२ ॥

बिलेशय जीवगण ।

गोधाशशभुजङ्गाखुफूत्काराः शल्की शिवा ।
चुच्छुंदरी स्थूलमूषघूंसाद्यास्तु बिलेशयाः ॥४३॥

अर्थः—गोह, खर्गोश, साँप, बीछू, मूषक, दुमुही, शिवा, छछूंदरि, बड़ामूषक, और घूस, ये बिलमें रहनेवाले जीव हैं ॥४३॥

गुहाशय जीवगण।

सिंहव्याघ्रवृका ऋक्षहरिद्वांद्विपखड्गिनः ।
बभ्रुजम्बुकमार्जारा इत्याद्याः स्युर्गुहाशयाः ॥४४॥

अर्थः—सिंह, व्याघ्र, भेडिया, रीछ, बिलू, चीता, न्यौला, स्यार और बिडाल ये गढ़ेमें रहनेवाले जीव हैं ॥ ४४ ॥

पर्णपशुगण ।

लाङ्गली वानरी खारी वृक्षमार्जारलम्पटः ।
कुम्भेरीझिङ्गुनीलण्टश्चैते पर्णमृगा मताः ॥ ४५ ॥

अर्थः—लँगूरी, बँदरी, खारिका, वृक्षबिलाई, लिपटनेवाली, कुम्हेरी और झींगनलंटी ये पत्तेवाले (वृक्षोंमें रहनेवाले) जीव हैं ॥ ४५ ॥

विष्किरपक्षिगण ।

वर्तकालावगिरिकाः कपिञ्जलकतित्तिराः ।
पादायुधः कलिङ्गश्च चकोराद्यास्तु विष्किराः ॥४६॥

अर्थः—बटेर, बतक, तीतर, गोरातीतर, गवरैया, मुर्गा और चकोर ये विष्किर संज्ञक जीव हैं ॥ ४६ ॥

प्रतुदपक्षिगण ।

हरितो धवलः पाण्डुश्चित्रपुच्छो बृहच्छुकः ।
पारावतः खञ्जरीटः पिकाद्याः प्रतुदाः स्मृताः ॥४७॥

अर्थः—हरा, धोला, चित्रपंखी व पहाड़ी तोता, कबूतर, खंजन, कोयल आदि प्रतुदगण हैं ॥ ४७ ॥

प्रसहपक्षिगण ।

काककाकारिककुहीशशहागृध्रचिल्लकः ।
चाषो भासश्च कुरर इत्याद्याः प्रसहाः स्मृताः ॥४८॥

अर्थः—कौआ, शिकरा, उल्लू, बाज, गीध, चील, नीलकंठ, मोर और कुरर ये बलकरके खानेवाले जीव हैं ॥ ४८ ॥

ग्रामपशुगण ।

छागो मेषो वृषोऽश्वश्च लुलायो ग्रामशूकरः ।
वृषदंशः सारमेय एते ग्राममृगाः स्मृताः ॥ ४९ ॥

अर्थः—बकरा, मेढ़ा, बैल, भैंसा, घोड़ा, गांवका शूकर, बिलाव और कुत्ता ये ग्राममृग (पशु) हैं ॥ ४९ ॥

जलतीरजीवगण ।

सर्पश्च शृङ्गी खड्गश्च बलमाहिषशूकराः ।
चमरी गवयो लोझ इत्याद्यास्तीरसंस्थिताः ॥५०॥

अर्थः—सांप, बारहसिंगा, वराहवली, भैंसा, शूकर, चमरी गौ और रोहू ये जलके तीरपरके जीव हैं ॥ ५० ॥

प्लव (उड़नेवाला) जीवगण ।

हंससारसकाचाक्षाश्चक्रक्रौञ्चशराविकाः ।
नन्दीमुखीसकादम्बा बलाकाद्याः प्लवाः स्मृताः ।५१।

अर्थः—हंस, सारस, चाख, चकवा ढेंक, रदविन्दु, नांदीमुख, करवा, बगुला और लवा ये उछलके उड़नेवाले जीव हैं ॥ ५१ ॥

कोशजजीवगण ।

शङ्खः शङ्खनखः कोशी शुक्तिशम्बूककर्कटाः ।
भेकमेढकभूनागडिण्डिमाद्याश्च कोशगाः ॥ ५२ ॥

अर्थः—शंख, शंखाहुली, शंखकोशी, सुत्ती, घोंघा, केंकड़ा, मेंडक, झींगर आदि कोशज जीव हैं ॥ ५२ ॥

पादीनजीवगण ।

कुम्भीरकूर्मनक्राह्वा गोधामकरशङ्कवः ।
घण्टिका शिशुमारश्च ग्रहाद्याः पादिनः स्मृताः ॥५३॥

अर्थः—कांटेवाला मच्छ, कछुवा, नाका, गोह, मकर, सांकच, घड़ियाल, सूस, आदि यह पादीनसंज्ञक जीवगण हैं ॥ ५३ ॥

मत्स्यगण ।

रोहीतकश्च झङ्गूरः प्रोष्ठीविलिचमोरेलः ।
शृङ्गीमुण्डीरोमशोलिखल्याद्या मत्स्यजातयः ॥५४॥

अर्थः—रोहेड़ा, झींगुर, मछली, पंखदारमछली, मोरलिया, सींगवाला, मुण्डा, रोमवाला, सोल्ही, खल्ही इत्यादि मछलियोंकी जाती है ॥ ५४ ॥

विरेचनगण ।

आरग्वधश्च कम्पिल्लः कटुक्यं कोष्ठवारुणी ।
शिवलिङ्गी नागपुष्पी द्विधा दंती त्रिधा त्रिवृत् ।५५।
सन्नाहमाक्षिका द्वेधा रेवाचीनीन्द्रवारुणी ।
अजैपालं गन्धरेकी विरेचनगणस्त्वयम् ॥ ५६ ॥

अर्थः—अमलतास, कंपिला, कुटकी, कोटवारुणी, शिवलिंगी, नागपुष्पी, दोनों दंती, तीनों निसोत ॥ ५५ ॥ सनाय, सोनामाखी, रूपामाखी, रेवंतचीनी, इन्द्रवारुणी, अजैंपाल, (जमालगोटा) और गंधनाकुली यह विरेचन (दस्तावर) गण है ॥ ५६ ॥

पाचनगण ।

पाषाणभेदो मरिचं जवानी जलशीर्षके ।
शुण्ठी चव्यं गजगणः शृंग्यादिः पाचको गणः ॥५७॥

अर्थः—पाषाणभेद, मिर्च, अजवायन, जलशिरो, सोंठ, चव्य, गजपीपरि, और ककरासिंगी यह पाचक नाम (पचानेवाला) गण है ॥ ५७ ॥

उष्णगण ।

त्रिविधा पिप्पली तस्य मूलं तुम्बरकस्त्रिधा ।
तेजोह्वाकफलं भाण्डी पौष्करापिकमुष्णकम् ॥५८॥

अर्थः—पीपरि, जलपीपरि, गजपीपरि, पिपलामूल, तुंबुरु, सौरभ और वनतुंबुरु यह तीनों, तेजवलका फल भारंगी, पुहकरमूल आदि यह उष्णगण है ॥ ५८ ॥

दीपनगण ।

द्विविधश्चित्रगोधान्यमजमोदा च जीरकम् ।
चतुर्धा हवुषा द्वेधा गणोऽयं दीपनः स्मृतः ॥ ५९ ॥

अर्थः—चित्रक (चीता), दोनों धनियां, अजवायन, अजमोद, जीरा चार प्रकारका, हाऊबेर दो प्रकारका यह दीपनगण अर्थात् अग्निप्रबलता करके पचानेवाला है ॥ ५९ ॥

पुष्टिकारकगण ।

चतुर्धा तु तुगाक्षीरी चन्द्रसूरोऽष्टवर्गकः ।
द्वीपान्तरवचा चिल्हं त्वक्पत्रं नागकेशरम् ॥ ६० ॥
तालीशपत्रत्वक् क्षीरी त्वचा गोगुरुरोहिणी ।
कपिकच्छूतोयबद्धभूफलं पौष्टिको गणः ॥ ६१ ॥

अर्थः—चार प्रकारका वंशलोचन, हाल्यूं, अष्टवर्ग, दूसरे टापूकी बच, पत्रज, नागकेशर ॥ ६० ॥ तालीसपत्र, वंशलोचन, तज, गोरखमुंडी, गुरुरोहिणी, कौंच, तोयबंधा, और बहुफली यह पुष्टिकारक गण है ॥ ६१ ॥

वातहारकगण ।

महानिम्बश्च कार्पासी द्विधैरण्डो वचा द्विधा ।
निर्गुण्डी द्विविधा हिङ्गु गणोऽयं वातहारकः ॥६२॥

अर्थः—बकायन, कपास, अरण्ड लाल, काला, दोनों बच, निर्गुण्डी दो प्रकारकी और हींग, यह वातहारक गण है ॥६२॥

कृमिनाशकगण ।

विडङ्ग नागभिन्ना च खुरासानी जवानिका ।
द्विधा करञ्जटैकारी कौटजः कृमिहा गणः ॥ ६३ ॥

अर्थः—वायबिड़ंग, नागभेदी, खुरासानी, अजवायन, दोनों करंज, टैकारी और कुटज यह कृमिनाशक गण है ॥६३॥

तृण (घास) गण ।

त्रिधा वंशः कुशाः काशास्त्रिधा दूर्वा नलोचगाः ।
गुन्दो मुञ्जो दर्भमेथी चटकादिगणस्तृणम् ॥ ६४ ॥

अर्थः—तीन प्रकारका वांस, कुश, कास, तीनों दूव, गाडर, जसभँगरा, कूकरभँगरा, भांग, गांजा, वाछर, मूंज, डाभ और मोथिया, यह तृण (घासफूल) गण है ॥ ६४ ॥

प्रसरगण ।

प्रसारिणीद्वयं मुण्डी लज्जालुर्द्वे पुनर्नवाः ।
द्विःसारिवा भृङ्गराजः पञ्चधा छिक्कणी द्विधा ॥६५॥
ब्राह्मीद्वयमलम्बूषा शङ्खपुष्पीसुशातलाः ।
पातालगरुडी घोटा गणः प्रसरसंज्ञिकः ॥ ६६ ॥

अर्थः—प्रसारणी, गन्धप्रसारणी, दोनों गोरखमुंडी, लज्जालू, लज्जावन्ती, दोनों सांठी, सरवन, पिठवन, भँगरा पांच प्रकारका, दोनों नकछिकनी ॥ ६५ ॥ दोनों ब्राह्मी, तूंवी, शङ्खाहुली, शातल और पातालगारुडी छे प्रकारकी यह प्रसर अर्थात् भोजनादिको फैलानेवाला गण है ॥ ६६ ॥

वृक्षगण ।

कुम्भारी तिन्दुकं शाला सणबीजकशाल्मली ।
शिंशुपा ककुभो नन्दी रोहितः खदिरत्रयम् ॥६७॥
बन्धूलः पुत्रजीवश्च अरिष्टोङ्गुदजिङ्गिनी ।
तमालभूर्जमूल्यश्च धर्वैधन्वंगमोक्षकः ॥ ६८ ॥
भूमिसहः सप्तपर्णः शाखोटो वरुणः शमी ।
कटभीस्तिनिशो मालुर्जैत्रो वृक्षगणस्त्वयम् ॥ ६९ ॥

अर्थः—कुम्हेरण, सोना, पाठा, शाला, सणबीज, शाल्मली शिशुक, अर्जुनवृक्ष, वृक्षनंदी (पीपलभेद), रुहेड़ा, तीनों प्रकारका खैर ॥ ६७ ॥ वंधूलवृक्ष, पतिजिया, अरिष्ट (नींव),

गोंदी जींगन, तमाल, भोजपत्र, भूलयध, धामिनवृक्ष, मोंक्षक ॥ ६८ ॥ भूमिसह, सप्तपर्ण, शाखोट, वरुण, शमी, कटभी, तिनिस, मालु और जैत्र यह वृक्षगण है ॥ ६९ ॥

गुल्मगण ।

बलाचतुष्टयं पर्णीपञ्चकं चाग्निमन्थकः ।
पाठा जवासा वार्ताकी कोकिलाक्षाशनो द्विधा ।७०।
अपामार्गद्वयं मूर्वा त्राहि माञ्छरपुङ्खिका ।
काकनासा काकजङ्घा मेषशृङ्गी च वन्दकम् ॥ ७१ ॥
वन्ध्याकर्कोटिकी त्रेधा वर्वरी तुलसी द्विधा ।
वज्रदन्ती द्विधाऽजाजी भीमा गुल्मगणस्त्वयम् ।७२।

अर्थः—चारों बला (बला, अतिबला, नागवला, व महाबला) पांचों पर्णी (शालिपर्णी, पृष्ठपर्णी, मुद्गपर्णी माषपर्णी व मंडूकपर्णी,) पाठ, जवासा, छोटी कटेली कोकिलवृक्ष, पीतसार, विजयसार ॥ ७० ॥ दोनों ओंगा, मूर्वा, त्रायमाण, शरफोंका, काकनासा, काकजंघा, मेढासींगी, वन्दला डोढ़ा ॥ ७१ ॥ तीनों ककोड़ी (ककोड़ी, वांझककोड़ी, खखसा) वर्वरी, दोनों तुलसी, दोनों वज्रदन्ती, रुरु दोनों, काला जीरा, कलौंजी दोनों, यह भीमा (अच्छे गुच्छेदार) वृक्षोका गण है ७२

वल्लीगण ।

गुडूचिका नागवल्ली सोमवल्ल्यपराजिता ।
स्वर्णवल्ल्यस्थिसंहारी श्वदंत्याकाशवल्लिका ॥७३॥
वटपत्री हिङ्गुपत्री वंशपत्री बृहन्नला ।
अर्कपुष्पी च सर्पाक्षी द्रोणमूषककर्णिका ॥ ७४ ॥

द्विपोटरा मयूरस्य शिखा बन्धनवल्लिका ।
कनकाह्वा च वासन्ती मनोज्ञेति लतागणः ॥७५॥

अर्थः—गिलोय, नागबेल, अमृतबेल, व अमरबेल ये दोनों शालपर्णी, विष्णुक्रांता यह दोनों, आकाशवेल ॥ ७३ ॥ वटपत्री, मोहनी, हिंगुपत्री, कबरी, वंशपत्री, वेणुपत्री, बृहन्नला, अर्कपुष्पी, सर्पाक्षी, सरहंटी, गूमा मूषाकर्णी, ॥ ७४ ॥ द्विकोटरा, मोरशिखा, बंधनबेल, कनकबेल माधवीबेल और मनोदा, यह बेलोंका गण है ॥ ७५ ॥

कुसुमगण ।

चतुर्धा स्थलपद्मानि सेवन्ती गुलदावती ।
नेपाली च गुलाबश्च गुलावासश्च दण्डिनी ॥७६॥
जाती यूथी राजवल्ली क्षुद्रयूथी त्रिधा मता ।
चम्पको नागचम्पश्च बकुलश्च कदम्बकः ॥७७॥
कुब्जश्च शिववल्ली च द्विकुन्दः केतकी द्विधा ।
किङ्किरातः कर्णिकारो ह्यशोको बाणपुष्पकम् ॥७८॥
कुरण्टकश्चतुर्धा स्यात्तिलको मुचुकुन्दकः ।
बन्धूकश्च चतुर्धा स्याज्जपा द्वेधा च सुन्दरी ॥ ७९ ॥
अगस्तिर्दमनी मारुः पेटारी बहुवर्णिकः ।
द्विपाटला सूर्यमुखी दासः पुष्पगणस्त्वयम् ॥ ८० ॥

अर्थः—चार प्रकारके कमल, सेवंती, गुलदाउदी, दीर्घपत्री, गुलाब, गुलावास, दंडिनी, ॥ ७६ ॥ जाती, जूही, लघुजूही, स्वर्णजूही, राजबेल, चंपा, नागचंपा, मौलश्री, कदम्ब ॥ ७७ ॥ कूजा, शिवबेल, कुंद, मोघरा, कुन्द, दोनों केतकी (केतकी

वर्णकेतकी), दोनों चिरायता, कर्णिकार (टेसू), अशोक, बाणपुष्प (गौडदेशप्रसिद्धवृक्ष) ॥७८॥ चार प्रकारका कुरंटक, (गुलाबांसा), तिलक, मुचकुंद, चार प्रकारका बंधूक (रक्तक, बंधु, बंधूक व बंधुजीव) दुपहरिया, दोनों सुंदरी फूल ॥७९॥ अगस्ति, दमनी, रवा, पेटारी, वर्वरीपुष्प, श्वेतरक्तवर्णपुष्प, सूर्यमुखी और प्रियकपुष्प यह फूलोंका गण है ॥ ८० ॥

दुग्धवृक्षगण ।

द्विधार्कः पञ्चधा वज्री शातला दुग्धिका द्विधा ।
वटस्त्रिः पिप्पलप्लक्षोदुम्बराश्च पयोगणः ॥ ८१ ॥

अर्थः—दोनों आक, (सपेद व लाल) और पांच प्रकारका थूहर, दोनों दुद्धी, तीन प्रकारका बड़, पीपल, पाकर और गूलर,–यह दुग्धवाले वृक्षोंका गण है ॥ ८१ ॥

धूपगण ।

द्विधाऽगुरुर्देवदारुर्गन्धपाषाणकस्त्रिधा ।
गुग्गुलूः पञ्चधा सर्जो निर्यासः सरलस्य च ॥ ८२ ॥
पद्मकाष्ठं मोचरसो निर्यासः शल्लकीभवः ।
रालो नैपालकं चेति गणोऽयं धूपसंज्ञिकः ॥८३॥

अर्थः—दोनों अगरु (अगरु व कृष्णागरु), देवदारु, गन्धपाषाणी तीनों, गूगल पांचों, निर्यास, सरल ॥ ८२ ॥ पद्माक, मोचरस, निर्यास, शल्लकी, राल, नहपाल और यह धूपगण है ॥ ८३ ॥

सुगंधिद्रव्यगण ।

द्विकर्पूरस्त्रिकस्तूरी लता कस्तूरिकाण्डजः ।
शिलारसो जातिफलं जातिपत्री लवङ्गकम् ॥ ८४ ॥

द्विधैला रोचनं द्वेधा पञ्चधा कुङ्कुमं प्रिये ।
गौडपत्री सुधासश्च सुगन्धाह्वगणस्त्वयम् ॥८५॥

अर्थः—दोनों कपूर (कपूर व चीनिया कपूर), तीनों कस्तूरी, लताकस्तूरी, कांडज, शिलारस, जायफल, जावित्री, लौंग ॥८४॥ दोनों इलायची, दोनों रोचन तथा पांच प्रकारका केशर, (काश्मीरदेशका लाल, दूसरा वाल्हीकदेशका पीला, तीसरा फारसी देशका कुछ पीला, कटुकेसर और तिक्तकेसर) गौडपत्री और सुधास हे प्रिये ! यह सुगन्धगण है ॥ ८५ ॥

दूसरा सुगंधगण ।

वालकं वीरणं मांसी द्विनखं चंदनं त्रिधा ।
शैलेयं त्रिविधं मुस्तं गन्धपालशिका मुरा ॥८६॥
द्विकर्चूरप्रियंगुश्च रेणुका गन्धमालती ।
ग्रन्थिपर्णी त्रिधा स्रका कङ्कोलाख्यं च तालिसम्॥
लामज्जकं तलीका च पद्मं बल्वेलबालकम् ।
द्विरोहिषं पौण्डरीकं चान्यधूपगणस्त्वयम् ॥ ८८ ॥

अर्थः—वालक (सुगंधबाला), वीरण (गांडर), जटामासी, दोनों नख (नख व नखी), तीनों चंदन (श्वेत, रक्त व पीत), शिलाजीत, मोथा, नागरमोथा, गन्धपलासी, मुरह ॥ ८६ ॥ दोनों कचूर (कचूर व द्राविड़ कचूर), दोनों प्रियंगु (प्रियंगु व गंधप्रियं), रेणुका, गन्धमालती, मिर्चसमान सुगन्धि-वाली, तीन प्रकारकी ग्रंथिपर्णी, सिरका, शीतलचीनी ताली सपत्र ॥ ८७ ॥ घासभेद, नलिका, सुगन्धवस्तु, पद्मावती, एलवालुक, दोनों रोहिष और सुगन्धबाला यह दूसरा धूपगण है ॥ ८८ ॥

दुग्धपशुगण और दुग्धादिगण ।

गावस्तु दशधा काली त्रिधाऽजाऽविस्त्रिधा मता ।
मृगी ह्येका त्रिधा मेषी त्रिधोष्ट्री दशधा हयी ।८९।
पञ्चधा करिणी नारी दशधा शूकरी द्विधा ।
व्याघ्री शुनी श्वदंष्ट्री च दासमी पञ्चधा पृथक् ९०
त्रिधा वृक्यष्टधा मत्स्यी गवयी खड्गिणी रुणी ।
दुग्धं घृतं च तक्रं च दधि ताभ्यः प्रजायते॥९१॥

अर्थः—दश प्रकारकी गऊ, तीन प्रकारकी भैंसे, तीन प्रकारकी बकरी, हिरणी एक प्रकारकी, तीन प्रकारकी मेढ़ी, तीन प्रकारकी ऊँटनी, दश प्रकारकी घोड़ी ॥ ८९ ॥ पांच प्रकारकी हथिनी, १० प्रकारकी स्त्री, २ प्रकारकी शूकरी, बघेरी, कुत्ती, बचकुत्ती और गधी (यह पांच २ प्रकारकी होती हैं) ॥ ९० ॥ भेड़ही तीन प्रकारकी, ८ प्रकारकी मछली, रोझणि, रांभड़, शूकरी और रोड़ी, इन्हीसे दूध, दही, घी और छाछ ये पैदा होते हैं ॥ ९१ ॥

धातुवर्ग ।

तिथिधा तु सुवर्णं स्यादष्टधा रजतं भवेत् ।
पञ्चप्रकारकं ताम्रं वङ्गं तु द्विविधं स्मृतम् ॥ ९२ ॥
जसदं त्रिविधं प्रोक्तं भवेन्नागस्तु षड्विधः ।
अष्टधा लोहउद्दिष्टमेते सप्तैव धातवः ॥ ९३ ॥

अर्थः—१५ प्रकारकी सुवर्ण (स्वर्ण, सुवर्ण, कनक, हिरण्य, हेमहाटक, तपनीय, गांगेय, कलधौत, कांचन, चामीकर, शातकौंभ, कार्तस्वर, जांबूनद, जातरूप, और महाराजत ये सोनेके पंद्रह भेद हैं), ८ प्रकारकी चांदी (रूप्य, रजत, तार,

चंद्रकांति, सितप्रभ, गुरुस्निग्ध, मृदुश्वेत, घनक्षम और वर्णाढ्य), तांबा ५ प्रकारका (रविप्रिय, म्लेच्छ, मुखमूर्य, पर्यायनामी और जपापुष्पसदृश), २ प्रकारका रांगा (रंग व वंग)॥९२॥ तीन प्रकारका जस्त, ६ प्रकारका नाग तथा आठ प्रकारका लोहा इस प्रकार ये सात धातु हैं ॥ ९३ ॥

उपधातुवर्ग ।

स्वर्णजं स्वर्णमाक्षीकं तारजं तारमाक्षिकम् ।
तुत्थं ताम्रभवं ज्ञेयं कंकुष्ठं वङ्गसंभवम् ॥ ९४ ॥
रसको जसदाज्जातो नागात्सिन्दूरसम्भवः ।
लोहजातं लोहकिट्टमेते सप्तोपधातवः ॥ ९५ ॥

अर्थः—सोनासे सोनामक्खी, चांदीसे रूपामक्खी, तांबेसे तुत्थ (नीला थोथा व तूतिया), वंगसे कंकुष्ठ ॥९४॥ जस्तसे रस (पारा), नागसे सिन्दूर और लोहसे लोहकिट्ट, ये सात धातुओंसे सात उपधातु उत्पन्न होते हैं ॥ ९५ ॥

उपरसवर्ग ।

सूतश्चतुर्गन्धकश्च तालकश्च द्विधा मतः ।
द्विधाञ्जनं च कासीसं गैरिकं च रसा इमे ॥९६॥
पारदाद्दरदो जातो टङ्कणं गन्धकात्तथा ।
स्फटिकाभ्रकतो जाता हरितालान्मनःशिला ।९७।
अञ्जनाच्छुक्तिशङ्खाद्याः कासीसाच्छङ्खमूर्वकः ।
गैरिकान्मृत्तिका जाता तस्मादुपरसा इमे ॥ ९८ ॥

अर्थः—पारा चार प्रकारका (लाल, पीला, सपेद व काला) गन्धक ४ प्रकारका (लाल, पीला, धौला व काला), हरताल

२ प्रकारका (पतरीका व पिंडेका), अंजन (सुरमा) २ प्रकारका (स्रोतोंजन, स्याह व सौवीरांजन धौला), और कसीस और गैरिक (गेरू) ये वैद्यकमें ६ रस है ॥९६॥ पारेसे दरद (शिंगरफ) उत्पन्न होता है, और टंकण (सोहागा) गन्धकसे, खड़िया अभ्रकसे बनी है, और हरतालसें मैनशिल बनी है ॥ ९७ ॥ सुरमासे सीपी या शंखादि व कसीससे मुर्वा शंखभेद और गेरूसे सादागेरू, इस कारण ये उपरस हैं ॥ ९८ ॥

रत्नवर्ग ।

वज्रं मुक्ता प्रवालानि गोमेदो नीलशिल्वकम् ।
पुष्पकं पिचु माणिक्यं रत्नान्येतान्यनुक्रमात् ॥९९॥

अर्थः—वज्र (हीरा), मुक्ता (मोती), प्रवाल (मूंगा), गोमेद, नीलम, पन्ना, उदवराज, इन्द्रनील और पद्मराग ये क्रमसे नव रत्न हैं ॥ ९९ ॥

क्षुद्ररत्नवर्ग ।

वैक्रान्तो मौक्तिकी शुक्ती रक्षो मरकतं लशुः ।
लाजा गारुडजन्मा च स्फटिका रत्नजातयः ।१००।

इति लङ्कानाथरावणकृतार्कप्रकाशे चिकित्सागणसंख्यावर्णनं नाम शतकं नवमम् ॥९००॥

अर्थः—वैक्रान्त, मौक्तिक, शुक्ति, रक्षस, मरकत, लशुनिया, लाजा, गारुडक, जन्ना, और स्फटिक यह रत्नोंकी ९ जाति हैं ॥ १०० ॥

इति अर्कप्रकाशे श्रीमत्पण्डितनारायणप्रसादमुकुंदरामकृतभाषायां चिकित्सागणसंख्यावर्णनं नाम नवमं शतकम् ॥९००॥

अथ दशमं शतकम् ।

सोनेके लक्षण ।

रावण उवाच ।

दाहे रक्तं सितं छेदे निषेके कुंकुमप्रभम् ।
तारशुल्वोज्झितं स्निग्धं कोमलं गुरु हेम यत् ॥ १ ॥

अर्थः—अब दशवां शतक लिखते हैं. रावण बोला कि–हे प्रिये ! सुवर्ण ऐसा हो कि तपानेमें लाल, छेदने कूटनेमें सपेदी लिये, बुझाय देनेमें केसरसमान पीला, राँगके मेलका शुल्व अर्थात् खोटापनसे रहित हो, और स्निग्ध (चिकना) हो, रोचक हो और भारी हो वह सुवर्ण उत्तम (१०० नंबर वाला) होता है ॥ १ ॥

धातुओंका मारण शोधन ।

पत्राणि सप्तधा कृत्वा वह्नौ तानि प्रतापयेत् ।
वेष्टनैस्तैः समावेष्ट्य तैलवर्गे विनिक्षिपेत् ॥ २ ॥
पृथक् पृथक् च दशधा तक्रवर्गे तथैव च ।
धान्यक्काथे मूत्रवर्गे मद्यवर्गे कटूद्भवे ॥ ३ ॥
अम्लवर्गे पुष्पवर्गे रक्तवर्गे फलोद्भवे ।
क्षीरवर्गे ह्यर्कवर्गे निर्व्वाप्यास्ते समन्ततः ॥ ४ ॥

अर्थः—अब शुद्ध करना लिखते हैं–धातुके सात पत्र करके अग्निमें तपावै, फिर अपने २ वेष्टनोंसे लपेटके तेलके पूर्णपात्रमें छोड़ दे; अर्थात् तपेको बुझावै ॥ २ ॥ फिर पृथक् २ प्रकारसे छाछमें, फिर अन्नकी कांजीमें, फिर गोमूत्रमें, मदिरामें, कड़ुकके रसमें ॥ ३ ॥ फिर खटाईके रसमें फूलोंके रसमें, लाल-

फूलोंके रसमें फलोंके रसमें, दुग्धमें, शुद्धजलमें, और अर्कवर्गमें दस २ वार बुझाय देना ॥ ४ ॥

कृत्रिमा धातुसम्मिश्रा ये च नो कार्यसाधकाः ।
जायन्ते दग्धदोषास्तु धातवो गाङ्गवारिवत् ॥ ५ ॥
गैरिकं स्वर्जिकक्षारो विडलोणं च भास्वरम् ।
नवसादरकः कन्या गुञ्जा स्वर्णादिवेष्टितम् ॥ ६ ॥

अर्थः—जो करतबी व मिश्रित (मिलीहुई) धातु हैं, वे कार्यसाधक नहीं हैं. इस बुझाने कर्मसे वे सब दोषोंवाले धातु गंगाजल सदृश होजाते हैं ॥ ५ ॥ गेरू, सज्जीखार, विड लवण, काचलक्षण, नोसादर, ग्वारपाठा, चिरमिटी ये सुवर्णादि सप्त-धातुआंके वेष्टन (लपेटने) के द्रव्य हैं ॥ ६ ॥

दद्यात्पत्राणि धान्याम्बून्यथ तानि समुद्धरेत् ।
गोमूत्रकेऽथवा तानि दत्त्वा वारं त्रिकं त्रिकम् ।
पात्रेषु सर्वधातूनां दत्त्वा तत्तुल्यकज्जलीम् ।
दत्त्वा नलान्तरे तानि वालुकायन्त्रके पचेत् ॥ ८ ॥
पृथक् पृथक् सूर्यदण्डैर्वह्निभिर्दीप्तकादिभिः ।
शुद्धीकृत्य पुनस्तांश्च यथेच्छं पुटतः पचेत् ॥ ९ ॥

अर्थः—यह कजली लगाकर उनको कांजीमें या गोमूत्रमें तीन २ वार बुझायके निकाल ले यह दूसरी रीति है ॥ ७ ॥ फिर सातों धातुओंके पत्रोंमें उन २ के तुल्य कजली लपेटके फिर उनको अग्निमें लगाकर वालुकायंत्र अर्थात् बड़ी हँड़ियामें छेद करके, उसके बीचमें धातु कजलीसे लिपटी रखकर नीचेके छेदकी राहसे अग्नि देके शुद्ध करै ॥ ८ ॥ वे सातों धातु न्यारे न्यारे बारह २ घड़ी प्रथम शतकमें कही दीप्ताग्निसे

पकाये इस विधिसे सम्पूर्ण सुवर्णादि धातु शुद्ध होजाते हैं फिर शुद्ध करके ग्रन्थान्तरोंकी रीतिसे यथेच्छ पुट लगाकर भस्म कर लेवै. इतना करनेसे बहुत गुणदायक व रोगनाशक हो जाते हैं ॥ ९ ॥ यह धातुशोधनमारणप्रकार कहा ॥

शुद्ध कियेहुए सुवर्णके द्रव्यसंयोगसे पृथक् २ गुण ।

योगेन मत्स्यपीतायाः स्वर्णं तत्कालदाहहृत् ।
भङ्गयोगाच्च तद्वृष्यं दुग्धयोगाद्बलप्रदम् ॥ १० ॥
पुनर्नवायुगे नेत्र्यं घृतयोगाद्रसायनम् ।
स्मृत्यादिकृद्वचायोगात्कान्तिकृत्कुङ्कुमेन च ॥११॥
पयसा राजयक्ष्माणं निर्विष्या च विषं हरेत् ।
शुण्ठीलवङ्गमरिचैस्त्रिदोषोन्मादहृत्परः ॥ १२ ॥
असम्यङ्मारितं स्वर्णं बलवीर्यं च नाशयेत् ।
करोति रोगान् मृत्युं च तस्मात्कुर्यात्प्रयत्नतः १३

अर्थः—शुद्ध सुवर्ण, मत्स्यपीता (केदारकुटकी) के योगसे रत्ती आध रत्ती यथाबल देख खानेसे तत्काल दाहको हरता है, भांगके योगसे खानेमें शरीरको पुष्टि करता है, और दुग्धके साथ खानेसे बल बढ़ाता है ॥ १० ॥ दोनों साठियोंके योगसे नेत्ररोगको हरता है, घीके योगसे रसायन समान वाजीकरण है, बचके साथ खानेसे स्मरणशक्ति (बुद्धि) को बढ़ाता है, केसरके साथ खानेसे कांतिको बढ़ाता है ॥ ११ ॥ दूधके योगसे राज्ययक्ष्मा नाम महारोगको हरता है, और निर्विषीके साथ खानेसे विषको हरता है. सोंठ, लौंग व मिर्चके योगसे वात पित्त कफात्मक तीनों दोष और उन्मादरोगको हरता है ॥१२॥ कुरीतिसे माराहुआ सुवर्ण बलवीर्यका नाश करता है, रोग

उत्पन्न करदेता है, और मृत्यु करता है, इस कारण यत्नसे सुवर्ण मारै ॥ १३ ॥

चांदीके गुण ।

गुरु स्निग्धं मृदु श्वेतं दाहे छेदे घने क्षमम् ।
वर्णाढ्यं चन्द्रवत्स्वच्छं तारं नवगुणं शुभम् ॥१४॥
सितया हन्ति दाहाद्यं वातपित्तं फलत्रिकात् ।
त्रिसुगन्धैः प्रमेहादि रजतं हन्त्यसंशयम् ॥ १५ ॥
विड्बंधनं च वीर्यं च वृष्यं सक्षयजित्परम् ।
कृशत्वं रोगसङ्घातं कुरुते तदशोधितम् ॥ १६ ॥

अर्थः—अब चांदीके गुणागुण कहते हैं. १ भारी, २ ३ कोमल, ४ सपेद, ५ जलाने, ६ छेदने, ७ घनमें योग्य, ८ रंगत लिये और ९ चंद्रसमान निर्मल, ये चांदीके नव गुण हैं ॥ १४ ॥ मिश्रीके साथ दाहादि हरती है, त्रिफलाके साथ वातपित्तको, त्रिसुगन्धसे धातुक्षीणादि रोगोंको, चांदीका रस निस्सन्देह हरता है ॥ १५ ॥ मलको, वीर्यको बांधता है, शरीरको पोषण करता, व क्षयीको अत्यन्त हरता है तथा विना शोधा हुआ दुर्बलता और रोगसमूहको करता है ॥ १६ ॥

तांबाके गुण ।

जपाकुसुमसङ्काशं स्निग्धं मृदु घनक्षमम् ।
लोहनागोज्झितं ताम्रं मारणाय प्रशस्यते ॥ १७ ॥
दुग्धसन्नाहखण्डैर्यस्ताम्रं रक्तिद्वयोन्मितम् ।
पिबेत्तस्य विरेकेन प्राशान्तां निर्ययुर्गदाः ॥ १८ ॥
कुष्ठकासश्वासपित्तहरश्लेष्मोदरामयान् ।
ज्वराम्लपित्तपाण्ड्वर्शःशूलशोथकृमीनपि ॥ १९ ॥

एवं दोषाः स्मृतास्ताम्रे त्वसम्यङ्मारिते सति ।
दाहः स्वेदो रुचिर्मूर्च्छोत्क्लेदो रेको वमिर्भ्रमः ॥२०॥

अर्थः—जो तांबा जपापुष्पके समान लाल होवै, चिकना, कोमल, घनके योग्य, लोहशीशेके मेलसे रहित होवै; वह तांबा मारनेके लिये अच्छा होता है ॥ १७ ॥ दुग्ध, सनाय व खांडसे जो मनुष्य २ रत्तीप्रमाण ताम्रभस्म सेवन करै तो उसका दस्तोंसे सम्पूर्ण रोग नाश होजावै ॥ १८ ॥ कोढ़, खांसी, श्वास व पित्त इनको हरै और श्लेष्मविकार व उदररोगोंको ज्वर, अम्लपित्तः पीलिया, बवासीर, शूल, सूजन और कृमि-रोग इन रोगोंको हरता है ॥ १९ ॥ और कुरीतिसे मारा भया तांब इतने दोषोंको करता है. दाह, पसीना, अरुचि, मूर्च्छा, उत्क्लेद, दस्त, वमन, भ्रम इन विकारोंको पैदा करता है ॥२०॥

वंग (रांगा) के गुण ।

शीघ्रद्रावि सशब्दं वा स्फुटनं चन्द्रसन्निभम् ।
चन्द्रिकामलहीनं यद्गालितं वङ्गमुत्तमम् ॥ २१ ॥
सर्वमेहान् सितादुग्धैः सतालं यच्च मारितम् ।
हन्त्यष्टादश कुष्ठानि रजनीक्वाथसंयुतम् ॥ २२ ॥
अशुद्धवङ्गं कुरुते शूलं गुल्म त्वचाङ्घ्रिजम् ।
वातशोथप्रमेहं च पाण्डुरोगं भगन्दरम् ॥ २३ ॥

अर्थः—और जो रांगा झट पतला व नरम हो, व शब्दके साथ टूटता हो, तथा जो गलानेपर चमकसहित व मलरहित हो, सो वंग (रांगा) उत्तम है ॥ २१ ॥ जो हरतालके साथ बना हो वह मिश्री और दूधके साथ पिया जावै तो सब २० प्रमेहोंको नाश करता है और हलदीके काढ़ेके साथ १८ कुष्ठोंको हरता

है ॥ २२ ॥ विना शोधा वंग, शूल, गुल्म, त्वचा, पैरमें बादीसे सूजन, प्रमेह, पीलिया और भगन्दर इन रोगोंको उत्पन्न करता है ॥ २३ ॥

जस्तके गुण।

जसदं दर्पणाभासं घनच्छायं सितप्रभम् ।
निषेके यद्रजतवद्दाहे छेदे च तालवत् ॥ २४ ॥
पुराणगोघृतैर्नेत्र्यं ताम्बूलेन प्रमेहजान् ।
अग्निमन्थेनाग्निकारी त्रिसुगन्धैस्त्रिदोषजित् ॥२५॥
अशुद्धजसदं कुर्याद्रक्तपित्तं च शीतलाम् ।
मन्दानलत्वमाधिक्यं धातुनाशं ज्वरादि च ॥२६॥

अर्थः—जस्त, दर्पणसमान स्वच्छ, गहरी परछाहींवाला, सपेद कांतिवाला, बुझानेमें चांदीकी तरह, और तपाने काटनेमें हरतालकी तरह हो; वह जस्त शुभ जानना ॥ २४ ॥ गौके पुराने घीके साथ नेत्रोंको हित है, पानके साथ सम्पूर्ण प्रमेहोंको नाश करता है, अरणीके साथ अग्निको प्रदीप्त करता है, त्रिसुगन्धके साथ तीनों दोषोंको जीतता है ॥ २५ ॥ अशुद्ध जस्त, रक्तपित्तरोग और शीतलारोग वा शीतलताको करता है, मन्दाग्नि, धातुक्षीण और ज्वर आदिको करता है ॥ २६ ॥

शीसेके गुण।

विकीर्णं दृश्यते श्वेतं गालितं गगनोपमम् ।
दृश्यते नागवत्तत्र सन्नागं शमिवत्कुषे ॥ २७ ॥
नागस्तु नागशततुल्यबलं ददाति
व्याधिं च नाशयति जीवनमातनोति ।

वह्निं प्रदीपयति कामबलं करोति
मृत्युं च नाशयति सन्ततसेवितः सः ॥ २८ ॥
मन्दाग्निमामशूलं च पिङ्गमेहादिरुग्व्रजम् ।
अशुद्धनागः कुरुते प्राणानपि निहंति च ॥ २९ ॥

अर्थः—जो शीशा उकेलनेमें सपेद दीखै, गलतेही आकाशसमान काला होजाय, देखनेमें वंगके सदृश रंग होजाय और कुष (हटाने) में शमीवृक्षसा होजाय, यह नाग (शीशा) श्रेष्ठ होता है ॥ २७ ॥ यह नाग सौ हाथियोंके समान बल देता है, और व्याधियों (रोगसमूहों) का नाश करता है और जीवन (आयु) को बढ़ाता है, अग्निको प्रदीप्त करता है, काम बलको बढ़ाता है, मृत्यु हरता है निरन्तर सेवन करनेसे वह इसप्रकार गुण करता है ॥ २८ ॥ विना शोधा हुआ नाग, मन्दाग्नि, आंव, शूल, फिरंग और प्रमेहआदि रोगोंको करता है तथा प्राणोंको भी हरता है ॥ २९ ॥

लोहसार मारण शोधन ।

दुग्धेऽग्नौ शिखराकाराण्यङ्गाराम्लेन लेपिते ।
लोहे स्युर्यत्र सूक्ष्माणि तत्सारमभिधीयते ॥ ३० ॥
शुद्धलोहभवं चूर्णं पातालगरुडीरसैः ।
त्रिपुटे च कुमार्याऽपि त्रिपट् वै माचिकारसैः ॥ ३१ ॥
सद्वादशांशं दरदं यंत्रे क्षिप्त्वा पुनः पुटेत् ।
त्रिपुटं त्रिफलाभिश्च दाडिमस्य त्वचैककम् ॥ ३२ ॥
उरूबुकनाग्निपत्रेण निर्गुण्डीतोयमुत्तरैः ।
एवं सप्तपुटैर्लोहं मृतं वारितरं भवेत् ॥ ३३ ॥

शुण्ठी वाते सिता पित्ते कफे कृष्णा त्रिजातकम् ।
सन्धिरोगे वरा पाण्डौ प्रोक्तं लोहानुपानकम् ।३४।
त्वक्षु कण्ठे च हृद्रोगशूलहृल्लासमश्मरीम् ।
नानारोगान्प्रकुरुते चूर्णलोहमशोधितम् ॥ ३५ ॥

अर्थः—जहां दूधमें छोड़ने वा अग्निमें तपाने वा साधारण देखनेमें शिखरके आकारपर वीछीके समान छोटे २ चिह्न वा खटाईके लेपसे लोहमें होवें वह लोहसार लोह कहाता है ॥३०॥ पूर्वोक्त रीतिसे बुझाये हुए लोहचूराको पातालमूली (छरहटा) के रसमें घोटके तीन पुट आंच देके ग्वारपाठाके रसमें घोट दे. फिर गिलोयके रसमें रगड़ दे. ऐसे इन १८ अठारह पुटोंसे भस्म होवै ॥ ३१ ॥ वा जितना लोहा हो उसका बारहवां भाग शिंगरफ देके फिर यंत्र (पुट) में त्रिफलाके रससे घोट तीन वार, अनारकी छालसे एक वार घोटै ॥ ३२ ॥ अंडा और चित्रकके पत्तोंके रसमें दोवार, फिर निर्गुण्डीके रसमें एकवार, ऐसे सात पुटोंसे लोहा जल करके जलपर तैरनेवाला हो जाता है ॥ ३३ ॥ यह भस्म वातरोगमें सोंठके साथ, पित्तमें मिश्रीसे, कफमें पीपरिसे, संधिरोगमें त्रिजात (दालचीनी, इलायची वा तेजपात) के साथ, और पांडुरोगमें वरा (त्रिफला) के साथ सेवन करै. ये लोहके साथ अनुपान कहे ॥३४ ॥ विना शोधा हुआ लोह त्वचारोग, कण्ठरोग, हृदयरोग, शूलरोग, छातीरोग, उत्क्लेद और पथरी, ऐसे अनेक रोगोंको उत्पन्न करता है ॥ ३५ ॥

उपधातु मारण शोधन ।

पादांशं सैन्धवं दत्त्वा चोपधातून्विमर्दयेत् ।
दशधा चाम्लवर्गेण कटाहे लोहसम्भवे ॥ ३६ ॥

घर्षयेल्लोहदण्डेन प्रत्येकं च मुहूर्तकम् ।
यथासिन्दूरवर्णत्वं धातूनां सम्प्रजायते ॥ ३७ ॥

अर्थः—उपधातु शुद्धि कहते हैं-उपधातुसे चौथाई सेंधा-लवण देकर खटाईसे घोटै, १० वार इस प्रकार सीतोंको घोटकर लोहेके पात्रमें रखकर अग्निपर धरै ॥३६॥ फिर उनको लोहेके दंडेसे २ घड़ी रगड़ता रहै. प्रत्येक उपधातु सेंदूरसमान हो जायँ तब भस्म होगई जानकर उतार लेवै ॥ ३७ ॥

दूसरीविधि ।

अथवा दोषशान्त्यर्थं त्रिकूटार्कवरार्कजे ।
विभावयेद्द्वादशधा ततस्तान् पुटतः पचेत् ॥ ३८ ॥
कपोतौत्वोर्विष्ठया वा लिप्त्वा तानि विनिक्षिपेत् ।
अजामूत्रेऽथ तप्तांस्तान्क्वाथे कौलत्थिजे तथा ।३९।
मधुनाऽभ्यज्य तैलेन मर्दयित्वा पृथक् पृथक् ।
टङ्कणं दशमांशेन दत्त्वा कुक्कुटजे पुटे ॥ ४० ॥
दत्त्वा वह्निं दृढतरं उपधातून्सुधीः पचेत् ।
अभावे मुख्यधातूनां प्रयोज्या उपधातवः ॥ ४१ ॥

अर्थः—अथवा दोषशांतिके अर्थ त्रिकुटाके अर्कमें, व त्रिफलाके अर्कमें बारह २ भावना देवैं फिर पुटमें रखकर पचावै तो भस्म होवै ॥ ३८ ॥ अथवा बिलावकी विष्ठा और कबूतरकी विष्ठासे लपेटके बकरीके मूत्रमें, कुलथीके काढ़ेमें तथा ॥ ३९ ॥ शहद लगाकर तेलसे सातोंको न्यारी २ रगड़ करके मुरगेके प्रमाणसे बने पुटमें इन्होंको न्यारी २ दशवें हिस्सेका सोहागा इनमें देकर रक्खै तो यह सातों उपधातु भस्म हो

जावैं ॥ ४० ॥ इन मुख्य धातुओंके अभावमें उपधातु काममें लेनी, और वे बहुतकरके गुणोंको विनाशोधी नहीं करती, तथा शोधनविधिसे श्रेष्ठ बनी हुई मुख्य धातुओंकाही काम देदेती हैं ॥ ४१ ॥ प्रायः कुरीतिसे शुद्ध हुए उपधातु गुण नहीं करते हैं.

न कुर्वन्ति गुणांस्तेऽपि प्रायः कुत्सितशोधिताः ।
कुर्वन्ति दोषान्भोक्तारं सिन्दूरं यदि भक्षयेत् ।
अशुद्धं वाऽथ शुद्धं वा विना मंत्रगुरूक्तितः ॥४२॥
विना तस्य भवेच्छीघ्रं स्वरभङ्गो मृतिस्तथा ।
राक्षसीमस्तके लग्नं दृष्ट्वा शप्तो हनूमता ॥ ४३ ॥
आदिवाराहकल्पे तु कृता तस्य च निष्कृतिः ।
तेनैव वानरेंद्रेण शृणु मंत्रं यथोदितम् ॥ ४४ ॥
तारसिंदूरपाचेति सिस्थाने सम्प्रयोजयेत् ।
सिन्दूरं हलकादेव चालयेति पदं वदेत् ॥ ४५ ॥
री तु प्रोक्ता खलभली जीतथा कलबलीति च ।
मंत्रः शाबरमंत्राणां शिखामणिरयं स्मृतः ॥ ४६ ॥

अर्थः—सिंदूर शुद्ध हो वा अशुद्ध हो पर विना गुरुकी उक्ति वा मंत्रके खानेवालोंको अनेक दोष उत्पन्न करता है ॥ ४२ ॥ विना मंत्रादिके खानेवालेकी, स्वरक्षीणता होकर मृत्यु भी होजाती है, राक्षसीके मस्तकपर लगा देखकर हनुमानजीने इसे शाप दिया है ॥ ४३ ॥ और आदिवराहकल्पमें इसकी निश्चयता करी है, उन्हीं वानरोंके इन्द्र हनूमानजीसे जो मंत्र कहागया सो हे प्यारी पार्वति ! तू श्रवण कर ॥ ४४ ॥ आगे दो श्लोकोंमें मंत्रोद्धार कहा है सो मंत्र यह है–" ओंतार

सिन्दूरया खलभलिखकलचलिन् कालभैरवसिन्दूरंहलकादेव चालय " यह शाबरमंत्रोंका शिखामणि मंत्र है ॥ ४५ ॥ ४६ ॥

सिंदूरविधान ।

गुरुतो वा महेशाढ्याद् गृहीत्वा मंत्रमुत्तमम् ।
पुरश्चर्यासहस्रं तु तद्दशांशं तु होमयेत् ॥ ४७ ॥
सिन्दूरं तैलवटकैः पूजयेत्करवीरकैः ।
दूर्वाभिर्मार्जनं कार्यं सक्षीरब्रह्मभोजनम् ॥ ४८ ॥
ततः सिद्धो भवेन्मंत्रः शबरासुरभाषितः ।
अनेनामंत्र्य सिन्दूरं षण्मासं यस्तु भक्षयेत् ॥ ४९ ॥
विमुक्तः क्रोधलोभाभ्यां तथा तृष्णाजयान्वितः ।
यत्तो यो नियमैश्शाम्यादिभिश्चापि जितेन्द्रियः॥५०॥
ब्रह्मचर्यरतस्तस्य बिंदुरूर्ध्वं प्रजायते ।
महारात्रौ तु यो नग्नो जपन्गृह्णाति मन्त्रकम्॥५१॥
क्रियते येन सुधिया जपता मंत्रमुत्तमम् ।
वानराणां च सप्तानां प्रसरं तिलकाह्वयम् ॥ ५२ ॥
मोहयेत्सकलं विश्वं रणे जयति निश्चितम् ।
ललाटे तिलको यावत्तावदीशः स एव हि ॥ ५३ ॥

अर्थः—अपने निजगुरुसे वा किसी शैवसे यह उत्तम मंत्र सीख करके एक सहस्र (१०००) बार जपै और उसका दशांश हवन करै ॥ ४७ ॥ सिन्दूरको तेलके वड़ोंसे व कनेरके फूलोंसे पूजै. दूबसे हवनका दशांश मार्जन करै; खीरसे ब्राह्मणोंको भोजन करावै ॥ ४८ ॥ तब यह शबरासुरका कहा

मंत्र सिद्ध होवै. इस मंत्रसे सिन्दूरको पढ़कर जो छे महीना खावै ॥ ४९ ॥ तो क्रोध, लोभसे छूटाहुआ, तृष्णांसे रहित, शमदमादि नियमोंसे युक्त, और जितेन्द्रिय होवै ॥ ५० ॥ ब्रह्मचर्य्यधर्ममें वर्तनेवाला जो खावै तो उसके वीर्यकी बुंद ऊपरको हो जाती है, और महारात्रि (दिवाली) में रात्रिको नग्न होकर मंत्रको जपता है ॥ ५१ ॥ और उस करके मंत्र जपतेहुए सात बन्दरोंके माथेमें सिंदूरका तिलक किया जावै ॥ ५२ ॥ तो वह सब विश्वको मोह लेवै. और संग्राममें निश्चय जीत जावै, ललाट (मस्तक) में जबतक तिलक रहे तबतक ईश (स्वामी) सम सुखी रहै ॥ ५३ ॥ यह सिंदूरविधि कही ॥

पारदविधान ।

उन्मत्तविजयार्कं वा काञ्जिके सूतधावने ।
हालाहलेन तुल्येन दरदोत्थं विमर्दयेत् ॥ ५४ ॥
नष्टपिष्टं तु तद्धत्वा भावयेत्पद्मिनीदलैः ।
गोधूमराशौ संस्थाप्य मासमेकं ततः पुनः ॥ ५५ ॥
निष्कास्य क्षालयित्वा तु अहिफेनेन मर्दयेत् ।
कुर्याच्च पूर्ववत्पश्चान्नवसारेण मर्दयेत् ॥ ५६ ॥
कमलस्य रसेनापि कृष्णोन्मत्तरसेन च ।
हिङ्गुना गन्धपाषाणसत्वेनाथ विमर्द्य च ॥ ५७ ॥
षण्मासे तरतः स्थाप्य सूरणस्थोदरे रसः ।
एवं वर्षेण सिद्धः स्याद्रसराट्ट च स्वयं मतम् ॥५८॥
दृश्यते चूर्णसंकाशो जीवनाख्यो रसोत्तमः ।

एवं गुञ्जा द्विगुञ्जा वा दृष्ट्वा दोषबलाबलम् ॥ ५९ ॥
दृष्ट्वौषधगुणं देयस्तेन सोऽर्करसोत्तमः ।
देयो गुणो न चेच्चेतो तं ब्रह्माऽपि न जीवयेत् ॥६०॥

अर्थ.—पारेके धोवनमें धतूरे भाँगका अर्क वा काँजी लेवै वा शिंगरफसे निकसे पारेको बराबरके विषके साथ घोटै ॥५४॥ कठोर हो जानेपर पद्मिनीके पत्तोंके अर्कसे भावना देवै फिर गेहुओंकी राशि (ढेरीं) में १ महीनातक रख छोड़ैं फिर ॥ ५५ ॥ उसको निकाल शुद्ध जलसे धोकरके अफीमसे घोटै. पूर्ववत् (पहिलेकी तरह) धान्यमें एक महीना रखकर नौसादरमें घोटै ॥ ५६ ॥ फिर कमलके रससे घोटै. इसीप्रकार काले धतूरेके रससे, हींगसे, गन्धपाषाणके सतसे ॥ ५७ ॥ फिर ६ महीना सूरण (जिमीकन्द) में रखना चाहिये. ऐसे एक वर्ष करके रसोंका राजा पारा आपही अपने मतसे शुद्ध होजाता है ॥ ५८ ॥ वह जीवनरूप उत्तम पारा चूनसा हुआ दीखता है. ऐसे इसको रत्ती या दो रत्तीके बढ़ा व घटावको देखकर ॥ ५९ ॥ इस औषधके गुणकी सहनसत्ताको देखकर उत्तम योगके साथ यह उत्तमरस देना तो गुण होवै. जो दियेपर भी आतुर चैतन्य न होवै तो फिर ब्रह्मा भी उसको न जिलासकैं ॥ ६० ॥

दरदशिंगरफशोधन ।

चणकाभानि खण्डानि दरदस्य तु कारयेत् ।
ताम्रजे वायसे पात्रे स्थाप्य तानि धमेद्दृढम् ॥६१॥
जातायामुष्णतायां तु तेद्द्रव्येण च सेवयेत् ।
द्रव्यतुल्यं द्रवद्रव्यमेषा स्याद्वह्निभावना ॥ ६२ ॥

मेषीक्षीरेण दशधा दशधा क्षीरजार्ककैः ।.
दीप्तिवर्गेण दशधा विरेच्यर्केण पञ्चधा ॥ ६३ ॥
पञ्चधा दुग्धवर्गेण अन्तराम्लस्य भावना ।
अयं शतार्कदरदो नानारोगविनाशकः ॥ ६४ ॥
क्षुधोद्बोधकरो नित्यं योगवाही निगद्यते ।

अर्थः—दरद (शिंगरफ) के चनाबराबर टुकड़ा करावै. फिर उनको ताँबे वा लोहेके पात्रमें रखकर खूब तपावै ॥६१॥ जब उसमें गरमाई आजावै, तब उसमें जलसमान पतला द्रव्य उसीके बराबर छोड़ै यह वह्निभावना है ॥ ६२ ॥ द्रवद्रव्य ऐसे कि–भेड़के दूधसे १० वार भावना देवै और १० वार दूधवाले वृक्षोंके अर्कमें, कहेहुए दीपनवर्गके अर्कमें १० वार और रेचन-वर्गके अर्कमें ५ वार भावना देवै ॥ ६३ ॥ फिर दुग्धवर्गसे ५ वार फिर खटाईके अर्कमें १० वार ऐसे यह पचास संस्कार किया हुआ दरद (शिंगरफ) अनेक प्रकारके रोगोंका नाश करनेवाला होता है ॥ ६४ ॥ नित्यही क्षुधा बढ़ानेवाला, मदको बढ़ानेवाला, योगवाही जानना. यह दरद (शिंगरफ) विधान कहा ॥

गन्धकशोधन ।

गंधकं भूमिलवणं सममेकत्र चूर्णयेत् ॥ ६५ ॥
अप्रकाशमसूर्यास्ततोयं खल्वे विनिक्षिपेत् ।
निष्कास्य तज्जलं प्रातः सममम्लेन मर्दयेत् ॥६६॥
पुनर्दत्त्वा जलं क्षिप्त्वा शतवारं समाचरेत् ।
जायते गन्धको दिव्यश्वेतो गन्धविवर्जितः ॥६७॥

शतधा भावयेत्तं तु कदलीदण्डजैर्जलैः ।
दीप्तो न जायते वह्निस्तत्संयोगात्कदाचन ॥६८॥
सुगन्धार्कैण भाव्योऽसौ नखवारं प्रयत्नतः ।
को वा तस्य गुणान्वक्तुं भुवि शक्तो हि मानवः ६९
हन्ति कुष्ठादिकान् रोगान् पामादीनां तु का कथा ।

अर्थः—अब गन्धक लिखते हैं-गन्धक, खारी लवण बराबर लेके एकमें मिलाय पीसे ॥ ६५ ॥ धूप न लगने दे फिर मसूरकी दालके जलके साथ पात्रमें छोड़ दे. प्रातःकाल हुए उस जलको निकालकर बराबरकी खटाईमें रगड़ै ॥६६॥ फिर धरै जल निकासै ऐसे सौवार किये जानेसे गन्धक सपेद, दिव्य, वासरहित शुद्ध सबकाममें लाने योग्य होता है ॥६७॥ और जो उसको केलाके जलसे सौवार भावना देवै तो उसके संयोगसे अग्नि नहीं जलने पावै ऐसा विपरीत होजाता है ॥६८॥ सुगन्धा (माधवीलता) के रसमें बीस बार यत्नपूर्वक भावना देवै तो फिर पृथिवीमें उसके गुणोंको कहनेको कौन मनुष्य समर्थ होसकता है? ॥६९॥ और वह कुष्ठआदि रोगोंका नाश करता है; फिर पामा आदि रोगोंका तो क्याही कहना है? ॥

अभ्रकमारण ।

यदभ्रकं गजपुटे गणैः सर्वैः पुटीकृतम् ॥ ७० ॥
सहस्राभ्रं तदाख्यातं वयःसंस्थापनं परम् ।
परं गुणावहं ह्येतद्वयोवृद्धिकरं मतम् ॥ ७१ ॥

अर्थः—जो अभ्रक सम्पूर्ण दीपनादी गणोंकरके पुट संस्कार कियागया फिर गजपुटमें पकाया जाय ॥ ७० ॥ तब वह सहस्राभ्रक होता है. सो आयुके स्थापन करनेमें परम श्रेष्ठ है और सबही रोगमात्रपर गुण करता है ॥ ७१ ॥

हरतालशोधन ।

हरिताले द्विधा प्रोक्ते गोदन्तः सर्वतोऽधिकः ।
तदभावे तु पात्रस्त्यस्तस्य पत्राणि कारयेत् ॥७२॥
यामं यामं तु तत्स्वेद्यं द्रव्येषु नवसु क्रमात् ।
तिलतैले वराक्काथे चूर्णतोये कुलत्थजे ॥ ७३ ॥
काञ्जिके कदलीतोये दुग्धे कूष्माण्डजद्रवे ।
अजादुग्धेन तत्तालं संशुद्धं दोषवर्जितम् ॥ ७४ ॥
अशीतिकर्ष चिञ्चाया ग्राह्यं भस्म सुशोधितम् ।
त्रिंशत्कर्षं हण्डिकायां दृढायां तन्निवेशयेत् ॥७५॥
आस्तीर्य तालपत्राणि कर्षद्वयमितानि च ।
त्रिंशत्कर्षं पुनर्भस्म स्थापयेत्तालकोपरि ॥ ७६ ॥

अर्थः—हरताल दो प्रकारका कहा है. उसमें गोदन्ती नामका हरताल सबसे अधिक गुणकारक है. वह न मिलै तो पत्रकाही लेवै. उसके पत्र करावै ॥ ७२ ॥ फिर उसे इन द्रव-द्रव्योंमें क्रमसे प्रहर २ भर मसले. तिलोंके तेलमें बरियारीके काढ़ेमें, चूनेके पानीमें, कुलथीके काढ़ेमें, कांजीमें केलेके पानीमें, दूधमें, कुम्हेड़ेके द्रवमें, बकरीके दूधमें ऐसे नवनिधि जलमें धोयेसे हरताल शुद्ध (दोषरहित) होता है ॥७३॥७४॥ अस्सी कर्ष (२० पल) इमलीकी शुद्ध पिसी पत्ती लेवै उसमेंसे ३० कर्षभर चूर्ण खूब पक्की हाँड़ीमें बिछावै ॥ ७५ ॥ उसपर दोकर्ष तुले हरतालके पत्र धरै फिर उसपर ३० कर्ष चूर्ण बिछावै. बाकी बीसकर्ष हाँड़ीके ढकनेकी जगह खाममें लगा देवै ॥ ७६ ॥

संपूज्य भैरवादींश्च हंडीं चुल्यां निवेशयेत् ।
यामं यामं क्रमादग्निं सङ्कुर्यात्पञ्चयामकम् ॥ ७७ ॥

पश्येत्तदैकचित्तस्तु कुत्र धूमोऽस्य गच्छति ।
गच्छंतं धूममालोक्य भस्मना चावरोधयेत् ॥ ७८ ॥
एवं तु पञ्चभिर्यामैस्तत्तालं तु मृतं भवेत् ।
भस्मोपरिस्थं युक्त्या च गृह्णीयाद्रविसन्निधौ ॥७९॥
तस्मिंस्ताले विचूर्णानि पत्राण्यन्यानि निक्षिपेत् ।
पुटं दद्यात्पूर्ववच्च एवं वाऽर्कदिनावधि ॥ ८० ॥
तत्तालं जायते दिव्यं सर्वरोगनिकृन्तनम् ।
रक्तिकायाः सप्त मात्रा तालकस्य सुसम्मितिः ॥८१॥

अर्थः—और भैरव आदि देवोंको पूजके हाँड़ीको चूल्हेपर चढ़ादेवै. प्रहरप्रहरके क्रमसे पाँचप्रहरतक अग्नि जलाता रहै, स्थिरचित्त हो धीरे २ से ॥७७॥ ऐसे एकचित्त हो फिर उसको देखै कि किधरको धुवाँ उसका जाता है. निकसतेहुए धुवेंको देखकर भस्मसे उसको रोकता जाय अर्थात् पूर्वोक्त २० कर्ष बाकीमेंसे चूर्ण लगाता जाय ॥७८॥ इसप्रकार पाँचप्रहरमें हरताल भस्म होता है. भस्मके ऊपरके टिकेको युक्तिसे सूर्यके सन्निध ले लेवै ॥ ७९ ॥ उस हरतालमें अन्य भी पीसा हुआ इमलीके पत्तेका चूरा छोड़कर प्रथम कहे प्रकार पुट लगावै. ऐसे बारह दिनतक करनेसे ॥ ८० ॥ वह दिव्य हरताल सब रोग काटनेवाला होता है. उसके खानेकी मात्रा एक रत्तीकी सात हैं. अर्थात् १ रत्तीभर सातबार खावै ॥ ८१ ॥

शुद्धहुए हरतालका अनुपान ।

उपोदक्यथ वक्ष्येऽहं तालकस्यानुपानकम् ।
हरिताले तु संसिद्धे हरिणा किं प्रयोजनम् ॥८२॥

सर्वरक्तविकारेषु देयमाम्रहरिद्रया ।
क्षुद्रहालाहलजीराभ्यामपस्मारविनाशनम् ॥८३॥
समुद्रफलयोगेन जलोदरविनाशनम् ।
देवदालीरसैर्युक्तो भगन्दरहरः स्मृतः ॥ ८४ ॥

अर्थः—रावण मन्दोदरीसे कहता हे कि हे गर्भिणी ! अब मैं हरतालका अनुपान कहता हूँ-हरताल सिद्ध होजानेमें हरिसे क्या प्रयोजन अर्थात् इस हरिरूपके तालमें मग्न हुए फिर क्षुद्र-हरि (वानर) आदिसे क्या प्रयोजन है ? ॥ ८२ ॥ यह सम्पूर्ण रक्तविकारोंमें आम और हलदीके साथ देवै. कुछ थोड़े विषके संयोग व जीरेसे मृगीरोगका नाश करता है ॥ ८३ ॥ समुद्रफलके साथ देनेसे जलोदर रोगका नाश करता है. देवदारुके रससे मिलाय देनेसे भगन्दररोग हरनेवाला कहा है ॥८४॥ यह हरतालशोधन कहा ॥

मैनशिलका मारण शोधन ।

पचेत्र्यहमजामूत्रे दोलायंत्रे मनःशिलाम् ।
भावयेत्सप्तधा पित्तैरजायाः स विशुद्ध्यति ॥८५॥
घृतानुपानतो व्रणं वरानुपानतो मलम् ।
वसानुपानतः कफं हरेन्मनःशिला ह्यलम् ॥ ८६ ॥

अर्थः—मैनशिलको तीन दिन बकरीके मूत्रसे दोलायंत्र अर्थात् हँड़ियामें मूत्रभर उसमें डुबाईहुई लटकाना ऐसेही दोलायंत्रमें रख पकावै. आठ प्रहर अग्नि दे, मूत्र फेंक दे; ऐसे सात प्रकार करनेसे मैनशिल शुद्ध होजाता है ॥ ८५ ॥ घीके साथ अनुपानसे व्रणको शोधन करता है. त्रिफलाके अनुपानसे कफको मैनशिल सर्वथाही हरै ॥ ८६ ॥ यह मैनशिलशोधन कहा ॥

खपरियाशोधन ।

दोलायंत्रेण सप्ताहं मूत्रवर्गे रसं पचेत् ।
तच्छुद्धं नेत्ररोगाणां नाशकं वरया सह ॥८७॥

अर्थः—इसी दोलायंत्रमें सात दिन मूत्रोंके साथ पारेको पकावै. वह शुद्ध हुआ त्रिफलाके साथ सम्पूर्ण नेत्ररोगोंका नाश करनेवाला होता है, और भी अनेक रोगोंमें अच्छा है ॥ ८७ ॥

उपरसशोधन ।

त्रिःक्षारे लवणे देयमम्लवर्गे त्रिधा पचेत् ।
एवं तूपरसाः शुद्धा जायन्ते दोषवर्जिताः॥८८॥
रसाभावे प्रदातव्यास्तस्यैवोपरसा रसे ।
सेवतो बहुकालं स सर्वतः कुरुते गुणम् ॥ ८९ ॥

अर्थः—तीनबार खारी लवणमें देना, और तीनबार खटाईके वर्गमें भावना देनी तो ऐसे सम्पूर्ण उपरस दोषरहित (शुद्ध) होते हैं ॥ ८८ ॥ रसके अभावमें उपरस देना चाहिये. वह भी बहुतकाल सेवन किया सब प्रकारसे गुणही करता है ॥ ८९ ॥ यह उपरसशोधन है ॥

रत्नशोधन ।

हिङ्गुसैन्धवसंयुक्ते क्षिपेत्क्वाथे कुलित्थजे ।
रत्नानां सप्तसप्तानां भवेद्भस्म त्रिसप्तधा ॥ ९० ॥
श्रेष्ठं वज्रं ततो हीनगुणमन्योन्यमीरितम् ।
सेवितं सर्वरोगघ्नं बलपुष्टिविवर्द्धनम् ॥ ९१ ॥

अर्थः—रत्नोंकी यह रीति है, कि सेंधालवणके साथ कुलथीके क्वाथमें उन्हें छोड़ दे फिर मर्दन करके पुटमें लगातार, ऐसे

२१ बारमें सबकी भस्म होवै ॥ ९० ॥ सब रत्नोंकी अपेक्षा शुद्ध (भस्म) किया हुआ हीरा अधिक गुणोंको देता है. इसका सेवन करनेसें सब रोग नष्ट होकर बल बढ़ता है और शरीर पुष्ट होजाता है ॥ ९१ ॥

विषशोधन ।

गोमूत्रे त्रिदिनं स्थाप्यं विषं तेन विशुद्ध्यति ।
रक्तसर्षपतैलाक्ते तथा धार्यं च वाससि ॥ ९२ ॥
पञ्चगव्येषु शुद्धानि देयान्युपविषाणि च ।
विषाभावे प्रयोगेषु योज्यास्तत्कार्यकारिणः ॥९३॥

अर्थः—विष गोमूत्रमें तीन दिन रक्खागया तो शुद्ध होता है. वैसेही लाल सरसोंके तेलमें और वस्त्रमें भी धरना तो यह परम मतवाला, वातकफको जीतता, और सन्निपातको हरता है. यह युक्तिसे खानपानमें लिया प्राणोंको देनेवाला रसायन रूप है ॥ ९२ ॥ पंचगव्योंमें शुद्ध किये उपविष भी देने, विष न हुए पर देनेसे कार्य होवै ॥ ९३ ॥ यह विषकी शुद्धि लिखी ॥

उपविषशोधन ।

पञ्चगव्येषु शुद्धानि देयान्युपविषाणि च ।
विषाभावे प्रयोगेषु योज्योपविषकार्यकृत् ॥ ९४ ॥

अर्थः—उपविषशोधन भी कहते हैं-पंचगव्योंसे शुद्ध किये उपविष दोषोंको हरते हैं. विषके अभावमें उपविष लेना तो सब्र कार्य करै ॥ ९४ ॥

जैपाल (जमालगोटा) शोधन !

न विषं विषमित्याहुर्जैपालो विषमुच्यते ।
शोधितोऽयं विरेकेषु चमत्कृतिकरः परः ॥ ९५ ॥
पञ्चगव्येषु संशोध्य दूरीकुर्य्याच्च जिह्विकाम् ।
ततोऽम्लवर्गे दशधा क्षारवर्गे त्रिधा पुनः ॥ ९६ ॥
कुमारिकाद्रवे भस्म जले चैवं विशोधयेत् ।
एवं शुद्धस्तु जैपालो वांतिदाहविवर्जितः ॥९७॥

अर्थः—विषको विष नहीं कहा है. जैपाल (जमालगोटा) हीको विष कहा है. यह शोधा हुआ दस्तोंमें अत्यन्तही परम चमत्कार करनेवाला है ॥९५॥ उसकी जीभी निकाले भीतरकी गुठलीको पंचगव्यमें, शुद्धकर दशबार खटाईके वर्गमें, तीनबार खारके वर्गमें फिर ॥ ९६ ॥ तीनबार घीग्वारके पाठाके रसमें फिर इमलीकी भस्मके जलमें शोधै. इसप्रकार शुद्ध किया हुआ जमालगोटा वमन और दाहरहित होता है ॥ ९७ ॥

मन्दोदरि तवाख्यातं यन्मया शिवतः श्रुतम् ।
एतज्ज्ञात्वा तु गर्भिण्या त्वया यत्नं विधीयताम् ९८

अर्थः—रावण बोला कि—हे मन्दोदरी ! यह मैंने शिवजीसे सुना हुआ औषधकल्प तुम्हारेको अच्छे प्रकार सुनाया है; सो सब अच्छीप्रकार जानकर और अब तुम तो गर्भवाली हैं; इसवास्ते तुरन्त यत्न करना व सुखपूर्वक रहना ॥ ९८ ॥

एवमुक्त्वा तु भैषज्यरहस्यं स दशाननः ।
सायंसन्ध्याविधिं कर्तुमुत्थितो मंदिरं ययौ ॥ ९९ ॥

अर्थः—इस प्रकार रावणने औषधरहस्यको कहकर फिर सायंसंध्याविधि करनेको उठकर मंदिरको जाता हुआ ॥ ९९ ॥

सुयोग्यं निजगेहस्य सुखकार्यं कुरु प्रिये ।
अहं संध्याविधानार्थं त्वथ यामि नदीतटम् ॥१००॥

इति श्रीलङ्कापतिरावणकृतार्कप्रकाशे धातुशोधनं नाम दशमं शतकम् ॥ १००० ॥

अर्थः—उससमय फिर मन्दोदरीसे कहा कि–हे प्रिये ! अपने घरके योग्य कार्य्यको सुखपूर्वक करो और मैं भी सन्ध्याविधान करनेको नदीतट जाता हूँ ॥ १०० ॥

इति श्रीमत्पण्डितमिश्रनारायणप्रसादमुकुन्दरामाभ्यां निर्मिते भाषार्कप्रकाशे धातुशोधनं नाम दशमं शतकम् ॥१०००॥

रामक्षणनिधीन्द्वब्दे ज्येष्ठे मासि सिते दले ।
नवम्यां भृगुवारे च भाषा सम्पूर्णतामगात् ॥ १ ॥
लक्ष्मीपुरे बरेल्यां च नारायणमुकुन्दकौ ।
ताभ्यां हरिप्रसादायार्कप्रकाशः समर्पितः ॥ २ ॥

समाप्तोऽयं ग्रन्थः ॥

मुद्रकः–मणिलाल इच्छाराम देसाई 'गुजराती' प्रिंटिंग प्रेस
कोट, सर्कल, सासून बिल्डिंग नं० ८ मुंबई.

प्रकाशकः–श्रीव्रजवल्लभ हरिप्रसादजी प्राचीन पुस्तकालय,
कालकादेवी रोड, रामवाडी–मुंबई.

जाहिरात.

चक्रदत्त (परमोत्तम सरल हिन्दी भाषाटीकासहित). चरकानुसारी होनेके कारण चिकित्साविषयमें यह ग्रंथ अद्वितीय है. इसमें चरकसंहितासे इतनी विशेषता है कि बहुत प्राचीन होनेके कारण उसमें जो औषधियोंका प्रमाण है, वह आधुनिक जनोंके अनुकूल नहीं है. चक्रदत्तजीने इसमें वर्तमानकालके अनुसार औषधियोंकी मात्रा रक्खी है. और इसमें तैलसाधन-प्रकार बहुत ही उत्तम लिखा गया है. मू. रु. ५ म. १० आना.

नाडीज्ञानतरङ्गिणी अनुपानतरङ्गिणी–अति उत्तम भाषाटीकासहित अनुपानतरङ्गिणीमें रस धातु बनानेकी क्रिया और अनुपान देना और किन रोगोंपर औषधोंमें क्या २ अनुपान देना यह वर्णित है और **नाडीज्ञानतरङ्गिणीमें** नाडीका बडा सूक्ष्म और विस्तृत विचार वर्णित है. इस विषयका आजतक ऐसा कोई ग्रन्थ नहीं छपा. मू. रु. १। म. ४ आना.

योगचिन्तामणि–भाषाटीकासहित, इसमें पाक, तेल, चूर्ण, गुटिका, घृत इत्यादि अनुभवसिद्ध प्रयोग लिखे गये हैं रफ कागज मू. रु. २ म. ४ आना.

वैद्यकल्पद्रुम–भाषाटीकासहित. जिसमें निदान, चिकित्सा, शोधन, मारण, इ० सर्वसंग्रह है. वैद्यक्के सूक्ष्मातिसूक्ष्म समस्त विषयोंका एकही ग्रंथमें सरल विस्तृत रूपमें निरूपण होनेके कारण यह ग्रंथ सर्वसाधारणके संग्रह करने योग्य है. मू. रु. ६ म. १ रु.

शार्ङ्गधर–निदानसहित, अतिउत्तम भाषाटीकासहित. इस ग्रंथमें रोगोंकी उत्पत्ति, लक्षण, प्रतिकार सब प्रकारकी धातुओंका मारण, शोधन आदि प्रयोग बहुत अजमाये हुए लिखे हैं और रसादिके सेव-

*

नकी विधिभी संयुक्त है. ग्लेज कागज. (शारङ्गधर भाषा टीका) मू. रु. ९ म. १० आना.

स्त्रीचिकित्सा-भाषाटीका.

इसमें स्त्रियोंके समस्त रोगोंका निदान और चिकित्सा भली भांति वर्णित है. और वन्ध्याचिकित्सा बहुविस्तारपूर्वक निरूपण है. अंतमें वाजीकरणप्रयोग, रोमशातन, केशोत्पादनविधि, केशकृष्णीकरण, देहरंजन, इत्यादि प्रयोग अत्यन्त सुलभ रीतिसे प्रतिपादन किये हैं. यह ग्रंथ यद्यपि सर्वसाधारणका उपकारक है, तथापि वैद्योंको निस्सन्देह परमोपयोगी है. मूल्य ६ आना. डा० व्य० १ [illegible] ना.

[illegible]

प्राचीन पुस्तकालय,

हरिप्रसाद भगीरथजी,

ठि०—कालकादेवीरोड, रामवाडी,

मुंबई.